आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-018/2006-08
वर्ष : 65 ★ अंक : 11 ★ मूल्य : 10 रु.
15 नवम्बर 2008 ★ मार्गशीर्ष सं. 2065

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

नमस्कार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंच णमोक्कारो,
सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलं ।

मंगल-मूल, धर्म की जननी,
शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी,
फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ॥

पीयें धोवन पानी, बोलें मीठी वाणी
यही कहे जिनवाणी।

रतनलाल सी.बाफना ज्वेलर्स

सोना • चांदी **औरंगाबाद** आकाशवाणी चौक, ☎ ०२४०-२२४४५२०,२२

जलगाँव हिरे • मोती सुभाष चौक, ☎ ०२५७-२२२५९०३,३९०३

Malhar - 08

औरंगाबाद शोरुम शनिवार छुट्टी। | जहाँ विश्वास ही परंपरा है। | जलगाँव शोरुम रविवार छुट्टी।

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन नं. 2636763

卐 संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक
प्रेमचन्द जैन, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नम्बर 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003 (राज.),
फोन नं. 0141-2575997, फैक्स-0141-2570753

卐 सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
जोधपुर- 342005, फोन नं. 0291-2730081
E-mail : jinvani@yahoo.co.in

卐 सह-सम्पादक
नौरतन मेहता, जोधपुर
डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.RJ/JPC/M-018/2006-08

卐 सदस्यता
स्तम्भ सदस्यता-रू.11000/-संरक्षक सदस्यता-रू.5000/
वार्षिक सदस्यता- रू. 50/- त्रिवर्षीय सदस्यता- रू.120/-
आजीवन सदस्यता देश में - रू. 500/-
विदेश में- रू. 5000/- इस अंक का मूल्य रू. 10/-
साहित्य आजीवन सदस्यता- रू. 2500/-

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

संसारमावन्न परस्स अट्ठा,
साहारणं जं च करेइ कम्मं।
कम्मस्स ते तस्स उ वेयकाले,
न बंधवा बंधवयं उवेंति।।4।।

— उत्तराध्ययन सूत्र 4.4

पद के कारण जो संसारी,
साधारण कर्म कमाता है।
कर्मभोग के समय नहीं,
बान्धवजन भाग बँटाता है।।4।।

नवम्बर 2008
वीर निर्वाण संवत् 2535
मार्गशीर्ष 2065

वर्ष 65 अंक 11

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिण्टिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन: 2562929

ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर प्रकाशक के उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय -	कर्तृत्व का अभिमान	-डॉ. धर्मचन्द जैन	५
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-संकलित	९
	विचार-वारिधि	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	१०
प्रवचन-	संघ-उन्नयन में परस्पर सहयोगी बनें	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.	११
	धर्म उत्कृष्ट मंगल क्यों?	-मधुरव्याख्यानी श्री गौतम मुनि जी	१५
शोधालेख-	जैन आगमों में काल और दूरी के माप	-डॉ.दलपतसिंह बया	२२
	कषाय : स्वरूप एवं निरोध	-मोनिका बैराठी	४२
अध्यात्म-	स्थायी सुख की तलाश	-श्री कन्हैयालाल लोढ़ा	२९
	आत्मा और शरीर के भेदज्ञान से निर्वाण	-साध्वी रुचिदर्शना श्री	४८
अंग्रेजी-स्तम्भ-	Science of Dhovana-water(3)	*-Dr. Jeoraj Jain*	३२
	Namaskāra Sūtra(4)	*-Dr. Priyadarshana Jain*	३९
धारावाहिक-	जम्बूकुमार (54)	-जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.	५३
उपन्यास-	भाई-बहन (13)	-उपाध्याय श्री केवलमुनिजी म.सा.	५७
नारी-स्तम्भ-	गर्भस्थ बालिका के हृदयोद्गार	- श्री जितेन्द्र चौरड़िया 'प्रेक्षक'	६३
प्रेरक-चिन्तन-	दो शब्द काफी हैं राह दिखाने...	-श्रीआर.प्रसन्नचन्द चोरड़िया	६५
युवा-स्तम्भ-	नशे की अंधी सुरंग से बचकर रहें	- श्री कैलाश जैन, एडवोकेट	६७
प्रेरक-प्रसंग-	साल का बड़ा इनाम	-डॉ. दिलीप धींग	७१
	रत्नों की माला से जब टूटी मूर्च्छा	-श्री जशकरण डागा	७४
शिक्षा-	मूल्यांकन योग्यता का	-आचार्य श्री विजयरत्नसुन्दरसूरि जी	७३
बाल-स्तम्भ-	सनत्कुमार	- आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	७८
गीत/कविता-	माँ - बाप का उपकार	-डॉ. हरीश जैन-प्रतिभा जैन	५१
	गणिवर हीरा	-श्री मनमोहनचन्द बाफना	५२
	जीवन की पुस्तक	- डॉ. रमेश मयंक	५६
	मृत्यु-रहस्य	- श्री कस्तूरचन्द जैन 'अष्टम'	६६
	संयम भावना	- श्री प्रसन्नचन्द बाफना	७६
	मुक्तक एवं चतुष्पदियाँ	-डॉ. दिलीप धींग	७७
विचार-	Some Thoughts	*-Minakshi Jain*	१४
	चिन्तन-कण	- श्री प्रेमचन्द कोठारी	६४
	नमस्कार महामंत्र	- श्री नवरतनमल डोसी	७५
	स्वाध्याय : श्रुत आराधना	- डॉ. लक्ष्मीचन्द जैन	८४
संवाद-	समस्या-समाधान (१७)		८५
साहित्य समीक्षा-	नूतन-साहित्य	-डॉ. धर्मचन्द जैन	८६
समाचार विविधा-	समाचार संकलन		८८
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार		१२१

सम्पादकीय

कर्तृत्व का अभिमान

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

जैन धर्म पुरुषार्थवादी धर्म है। इसमें आत्मा को अपने कर्मों का कर्त्ता, भोक्ता एवं क्षयकर्ता स्वीकार किया गया है। हमें यह भी अनुभव होता है कि हम कोई न कोई क्रिया करते रहते हैं। इन क्रियाओं को करके हम स्वयं को उनका कर्त्ता मानते हैं। पुरुषार्थवाद में कर्तृत्व की अवधारणा तो रहेगी, किन्तु उस कर्तृत्व का अभिमान होना आवश्यक नहीं है। कर्ता होते हुए भी अभिमान न हो तभी साधना में सफल हो सकते हैं।

कर्ता के भाव को कर्तृत्व कहते हैं अर्थात् जब कोई कार्य किया जाये तो उस कार्य का कर्ता मैं हूँ इस प्रकार मानना कर्तृत्व है। इस कर्तृत्व का अभिमान होना साधक के लिए दोष है। यह व्यक्ति को पराधीन बनाता है, उसे बन्धन में डालता है तथा दुःख उत्पत्ति के बीज का वपन करता है। यह कर्तृत्व का अभिमान प्रायः प्रत्येक व्यक्ति में सूक्ष्म या स्थूल रूप से विद्यमान रहता है। कोई उसे दूसरों के समक्ष प्रकट करके प्रसन्नता का अनुभव करता है एवं अपने अभिमान को पुष्ट करता है। कोई उसे प्रकट नहीं करता, किन्तु मन में अभिमान पुष्टि की अभिलाषा रखता है। वह दूसरों से अपने कार्यों की प्रशंसा सुनना चाहता है। यदि दूसरा उसके कार्यों को महत्त्व न दे, प्रशंसा न करे तो उसे मन ही मन क्षोभ होता है। वह फिर दूसरों के दोष देखना शुरु करता है। उनके साथ अपनी तुलना करना प्रारम्भ कर देता है एवं ज्यों-त्यों कर दूसरों की अपेक्षा अपने को श्रेष्ठ सिद्ध करने की कोशिश करता है।

कोई भी अच्छा कार्य करके हम कहते हैं- यह मैंने किया है, मैं ही सबका ध्यान रखता हूँ, मेरे करने से ही सब कार्य सम्पन्न होते हैं, मैं ही अच्छी सलाह देता हूँ, मैं एक अच्छा कार्यकर्त्ता हूँ, मैं श्रमशील हूँ, मैं ही परिवार का संचालन करता हूँ, मैं ही प्रवचनकर्त्ता हूँ आदि। इस प्रकार का कथन करना कोई बुरा नहीं है, किन्तु कार्य को करके उसके अभिमान में आबद्ध होना अहितकर है। हम किसी का जब बुरा करते हैं तो कहते हैं- यह मैंने नहीं किया, यह तो उस व्यक्ति की भूलों से हुआ है, उसमें ही कमियाँ हैं आदि। बुरा करके उसके कर्तृत्व के अभिमान से हम बचना

चाहते हैं तो दूसरी ओर अच्छा करके कर्तृत्व का अभिमान करके दूसरों से प्रशंसा प्राप्त करना चाहते हैं। यही पराधीनता है, जो हमें बाँधती है एवं दुःख का कारण बनती है।

मात्र कर्त्तव्य भावना से कार्य करने वाले लोग विरले हैं। जो कर्त्तव्य भावना से कार्य करता है उसे कर्तृत्व का अभिमान नहीं होता, क्योंकि उसने करने योग्य कार्य कर दिया, उसकी एवज में उसे कोई अपेक्षा नहीं है। जिसे संसार से कोई अपेक्षा है अथवा भोगों की रुचि है अथवा मान-प्रतिष्ठा के पोषण की अभिलाषा है तो उसे निश्चित रूप से अपने कर्तृत्व का अभिमान होता है। इस कर्तृत्व के अभिमान के साथ व्यक्ति में अन्य दोषों का प्रवेश सहज हो जाता है। वह दूसरों के साथ आत्मीयता पूर्ण व्यवहार नहीं रख पाता। उसमें बाह्य आकर्षण अधिक होता है, किन्तु आत्म-सुधार की ओर कोई सार्थक प्रयत्न नहीं होता। साधना के क्षेत्र में भी यदि कोई अभिमान करता है तथा दूसरें साधकों से अपने को श्रेष्ठ स्वीकार करता है तो वह दूसरों को हीन मानने लगता है तथा स्वयं आगे बढ़ने के मार्ग को अवरुद्ध कर देता है। दूसरों की सेवा करके भी अभिमान-रहित रहना अत्यन्त कठिन है। सेवा व्यक्ति को आत्म-संतुष्टि प्रदान करती है, दूसरों को प्रसन्नता देती है, तथापि कर्तृत्व का अभिमान वहाँ भी प्रवेश कर जाता है। यह अभिमान भले ही हमें प्यारा लगे, किन्तु यह व्यक्ति को निर्मल एवं निर्दोष बनने में बाधक बनता है।

संसार में तो अपने कर्तृत्व का कथन हम बार-बार करते रहते हैं, उदाहरण के लिए- एक पिता अपने पुत्र को याद दिलाता रहता है कि मैंने तुम्हारे लिए क्या नहीं किया ? एक भाई अपने भाई को याद दिलाता रहता है कि वह अपने भाई के लिए सहयोग करने हेतु सदैव तत्पर रहा है। एक पत्नी अपने पति के प्रति किए गए त्याग से पति के लिए आदरणीय तो बनती है, किन्तु जब वह अपने त्याग को गिनाने लगती है तो वह अभिमान की कोटि में आता है।

कर्तृत्व का अभिमान मानवीय सम्बन्धों में कटुता उत्पन्न करता है। एक-दूसरे के प्रति सामंजस्य में बाधक बनता है। अपने दोषों का अवलोकन कर उनका निराकरण करने में दीवार बन जाता है। उसकी रुचि वीतरागता में नहीं संसार में होती है। उसकी सोच व्यापक नहीं, सीमित होती है। उसमें ईर्ष्या और द्वेष का प्रवेश शीघ्र होता है, पर-निन्दा में उसे आनन्द आता है।

दुःख से बचने के लिए एवं कर्मों का क्षय करने के लिए हम साधना भी करते हैं, तो उसकी क्रिया के कर्तृत्व का भी अभिमान हमें बन्धन में डाल देता है।

समस्या यह है कि हम कार्य करें भी और उसका हमें अभिमान न हो, यह कैसे शक्य है ? किन्तु एक अच्छे साधक के लिए यह सम्भव है। वह साधना मार्ग में चलता हुआ अनेक अच्छे-अच्छे कार्य करता है, किन्तु उनके कर्तृत्व के अभिमान में आबद्ध नहीं होता। मोक्ष के पक्ष में ऐसे ही जीव सफलता प्राप्त करते हैं। यह एक कठिन कार्य तो है, किन्तु असंभव नहीं। इसके लिए अत्यन्त सजगता एवं निरभिमानता के अभ्यास की आवश्यकता है। परमात्मा पर आस्था रखने वाले लोग संकट काल में अच्छे-बुरे कार्यों का कर्तृत्व परमात्मा को सौंप देते हैं। कई लोग अच्छे कार्यों का कर्तृत्व तो स्वयं का मानते हैं तथा बुरे कार्यों का कर्तृत्व परमात्मा को सौंप देते हैं। इससे उन्हें क्षणिक आराम तो मिलता है, किन्तु वे मिथ्यात्व से विलग नहीं होते। वे भी कर्तृत्व के रस में छद्म रूप में बंधे रहते हैं।

जो व्यक्ति कार्य तो करे, किन्तु उसका अभिमान न करे, वही कार्य क्षेत्र में एवं साधना के क्षेत्र में आगे बढ़ पाता है। वह अपने को प्राप्त योग्यता एवं साधनों का सदुपयोग करता है। साधनों एवं योग्यता का सदुपयोग करने से ही व्यक्ति का विकास होता है। व्यक्ति कितना भी चारित्रनिष्ठ क्यों न हो, कितना भी संयमी और सदाचारी क्यों न हो, यदि उसमें कर्तृत्व के अभिमान का विष घुल जाता है तो वह साधना के क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ पाता।

कोई कह सकता है कि पेड़-पौधे सबको शीतल हवा देते हैं, फल-फूल एवं छाया देते हैं, किन्तु उन्हें अपने कर्तृत्व का अभिमान नहीं होता। मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जिसे अधिक अभिमान होता है। तिर्यंच जीवों में भी मनुष्य की भाँति अभिमान दिखाई नहीं देता। तो क्या यह पेड़-पौधे एवं तिर्यंच के अन्य जीव मनुष्य से श्रेष्ठ हैं? यहाँ कहना होगा कि पेड़-पौधे एवं तिर्यंच के अन्य जीवों की चेतना इतनी विकसित नहीं है। न वे मनुष्य के समान इन्द्रिय, मन और बुद्धि में विकसित हैं और न ही उनका विकसित सोच है। इसलिये पेड़-पौधों एवं अन्य जीवों की अपेक्षा मनुष्य के ही बन्धन अधिक होता है। मोहनीय कर्म का उदाहरण लें तो ज्ञात होता है कि मात्र काययोग वाले जीव के मोहनीय कर्म का बंध एक सागरोपम का होता है, वहीं मन वाले जीव के 70 कोटाकोटि सागरोपम का मोहनीय कर्म बंध सकता है। इसका तात्पर्य है कि मनुष्य जितने दोष कर सकता है उतने वनस्पतिकायिक आदि जीव

नहीं। इसी प्रकार मनुष्य जितना आत्म-विकास करने में समर्थ है उतना विकास एकेन्द्रिय आदि जीव नहीं कर सकते। किन्तु मनुष्य अपनी इस शक्ति को नहीं पहचानता, अपने वीर्य को, अपने पुरुषार्थ को नहीं जानता। जानता भी है तो उसका अभिमान करने लगता है और वह अभिमान पुनः उसे पतन के मार्ग की ओर ले जाता है।

जैनागम कहता है- *'अत्त कडे दुक्खे नो परकडे'* अर्थात् दुःख आत्मकृत है परकृत नहीं। हम स्वयं ही स्वयं को बंधन में डालते हैं एवं दुःखी होते हैं तथा सदैव दूसरों में अपने दुःख का कारण ढूँढते रहते हैं। यही हमारा मिथ्यात्व है। यह मिथ्यात्व विभिन्न रूपों में हमारे जीवन में छाया हुआ है। संसार को अपने सुख का कारण समझना भी एक प्रकार का मिथ्यात्व है। मिथ्यात्वी ही ऐन्द्रियक सुखों को कषाय-विजय की अपेक्षा अधिक महत्त्व देता है। इसलिये मिथ्यात्व को तोड़ना सर्वप्रथम आवश्यकता है। जो मिथ्यात्व को तोड़ता है वह भोगों की रुचि से विमुख हो जाता है। दूसरों से उसकी अपेक्षाएँ क्षीण हो जाती हैं। वह दूसरों की सेवा करते हुए भी उसका अभिमान नहीं करता। इसलिए कर्तृत्व के अभिमान से रहित होने के लिए पहले मिथ्यात्व का निराकरण आवश्यक है।

सम्यक्त्वी जीवों में भी कदाचित् कर्तृत्व का अभिमान हो सकता है, किन्तु वह उसे हेय समझता है। फलस्वरूप उसके हान के लिए प्रयत्नशील रहता है। जब-जब कर्तृत्व का अभिमान उसकी दृष्टिपथ में आता है तब-तब वह सजग एवं अप्रमत्त होकर उसे विदा कर देता है। व्यक्ति में जितने भी दोष हैं उन दोषों की जड़ों को व्यक्ति स्वयं सिंचित करता है तभी वे दोष जीवित रहते हैं। यदि उन दोषों को पानी न मिले, सहयोग न मिले तो उन दोषों की जड़े सूख जाएँगी। जब जड़ ही सूख जाए तो दोष रूपी फल भी समाप्त होते देर नहीं लगेगी। इसलिए अपने में विद्यमान दोषों को दोष समझना पहला कर्त्तव्य है, तभी उसका निराकरण सम्भव है।

कर्तृत्व का अभिमान एक दोष है, यह समझ में आना आवश्यक है। यह हमें संसार में एक पृथक् सत्ता प्रदान करता है तथा दूसरे प्राणियों के प्रति आत्मवद् भाव से विलग करता है। जिससे व्यक्ति वैर-विरोध में बन्धता है एवं दुःखों की शृंखला में फँसता चला जाता है। हम जितनी सजगता रखेंगे उतने ही दोष-रहित बनते जाएँगे।

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

(केशी -गौतम संवाद)

पुच्छामि ते महाभाग ! केसी गोयममब्बवी।
तओ केसिं बुवंत तु, गोयमो इणमब्बवी ॥21॥
पुच्छ भंते ! जहिच्छं ते, केसिं, गोयममब्बवी।
तओ केसी अणुन्नाए, गोयमं इणमब्बवी ॥22॥
चाउज्जामो य जो धम्मो, जो इमो पंच-सिक्खिओ।
देसिओ वद्धमाणेण पासेण य महामुणी ॥23॥
एग - कज्ज - पवन्नाणं विसेसे किं नु कारणं?
धम्मे दुविहे मेहावि ! कहं विप्पच्चओ न ते ? ॥24॥
तओ केसिं बुवंतं तु, गोयमो इणमब्बवी।
पन्ना समिक्खए धम्मं - तत्तं तत्त - विणिच्छयं ॥25॥
पुरिमा उज्जु - जडा उ, वक्क - जडा य पच्छिमा।
मज्झिमा उज्जुपन्ना उ, तेण धम्मे दुहा कए ॥26॥
पुरिमाणं दुव्विसोज्झो उ, चरिमाणं दुरणुपालओ।
कप्पो मज्झिमगाणं तु, सुविसोज्झो सुपालओ ॥27॥

-उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन 23, गाथा 21-27

बोले केशी यों गौतम से, हे महाभाग ! पूछूँ तुमसे।
केशी के कहने पर बोले, गौतम हर्षित उन मुनिवर से॥21॥
केशी से गौतम यों बोले, भगवन् ! जो इच्छा प्रश्न करें।
अनुमति पा केशी गौतम से, बोले- शंका को दूर करें॥22॥
प्रभु पार्श्वनाथ ने चातुर्याम-सुधर्म कहा सब मुनियों का।
पंच- महाव्रत धर्म कहा, श्री वर्द्धमान ने मुनिजन का॥23॥
एक कार्य में रत दोनों, हम में अन्तर का कारण क्या?
इस धर्म-द्वैध को देख प्राज्ञ !, संशय मन में ना होता क्या? ॥24॥
यों केशीकुमार के कहने पर, श्री गौतम वचन कहे ऐसा।
धर्मार्थ तत्त्व के निश्चय में, प्रज्ञा से समीक्षण करे वैसा॥25॥
पहले के मुनि थे मुग्ध सरल, पिछले के होते वक्र- मूढ़।
मध्यम के प्राज्ञ - ऋजु होते, अतएव किए दो भेद गूढ़॥26॥
प्रथम तीर्थ में ग्रहण कठिन, अन्तिम में दुष्कर है पालन।
हैं मध्यतीर्थ के साधु योग्य, विधिवत् व्रत ले करते पालन॥27॥

अमृत-चिन्तन

विचार-वारिधि

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

- जो गिरती हुई आत्मा को धारण करे, बचावे, उसका नाम धर्म है।
- जो विचार और आचार आत्मा को पतन से रोके, वह धर्म है।
- क्रोध पर विजय प्राप्त करनी हो तो क्षमा से उसका प्रतिकार करें।
- धर्म का स्वरूप है सद् विचार और सद् आचार।
- अहिंसा-धर्म, संयम-धर्म का पालन करने वाले गृहस्थ ऐसे होते हैं, जिन्हें अपने धन का त्याग करना पड़े तो वे संकोच नहीं करते।
- श्रीमंतों को समाज में काजल बन कर रहना चाहिये जो खटके नहीं।
- देव स्तुति कर सकते हैं, गुणगान कर सकते हैं, शासन की शोभा करनी हो तो तीर्थंकरों के उत्सव में आकर साढ़े बारह करोड़ सोनैया की वर्षा कर सकते हैं, लेकिन एक घड़ी सामायिक करने का सामर्थ्य देवों में नहीं है।
- भगवान् रास्ता बताते हैं। हमारे दिल-दिमाग में सर्च लाइट की तरह प्रकाश करते हैं। उस प्रकाश को हमें खुद बढ़ाना है।
- जीवन को सुन्दर बनाने के लिये आवश्यक है कि हमारे जीवन में सम्यक् ज्ञान की ज्योति जगे।
- जो लोग धर्म को मात्र परलोक के लिये समझ रहे हैं, वे इसका सही स्वरूप नहीं समझते।
- बिना श्रम के, बिना न्याय के, बिना नीति के जो पैसा एकत्रित किया जाता है, उससे कोई करोड़पति व लखपति हो सकता है, लेकिन वह पैसा उस परिवार को शान्ति और समता देने वाला नहीं हो सकता।
- श्रावक धर्म की शिक्षा से मानव जीवन शान्ति की ओर बढ़ सकता है।
- आज व्यापारी के एजेण्ट होते हैं, उसी तरह कच्चे त्यागियों को पुजाने के लिए भी एजेण्ट होते हैं।
- मानव! यदि तू अपने जीवन को अहिंसक बनाये रखना चाहता है तो यह ध्यान रख कि जिससे जीवन चलाने के लिए सहयोग ले, लाभ ले, या काम ले उसको कोई पीड़ा न हो।
- भक्ष्य-अभक्ष्य एवं खाद्य-अखाद्य का विचार करके अन्न ग्रहण करें। आहार शुद्ध होगा तभी विचार सुधरेंगे और विचार सुधरेंगे तो आचार सुधरेगा।

-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार

प्रवचन

संघ-उन्नयन में परस्पर सहयोगी बनें

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

परमाराध्य पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने कल्पतरु गार्डन स्थानक, कांदिवली में संघ की वार्षिक साधारण सभा एवं सम्मान समारोह में देश के कोने-कोने से पहुँचे संघ-सदस्यों को 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' का आदर्श जीवन-व्यवहार में चरितार्थ करने की प्रेरणा की। आचार्यप्रवर के २० सितम्बर, २००८ का प्रवचनांश प्रकाशित किया जा रहा है, जिसका आशुलेखन जिनवाणी के सह सम्पादक श्री नौरतन मेहता, जोधपुर ने किया है। -सम्पादक

तीर्थंकर भगवान् महावीर ने अपनी अंतिम देशना में उत्तराध्ययन सूत्र के मोक्ष-मार्ग अध्ययन में तत्त्वों के असाधारण गुणों का वर्णन करते हुए छः द्रव्यों का विवेचन किया है। उन छः द्रव्यों में धर्मास्तिकाय का चलने में, अधर्मास्तिकाय का ठहरने में सहयोग बताया है। आकाशास्तिकाय अवगाहना देने में आधार बनता है तो जीव के लिए असाधारण गुण 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' एक-दूसरे का सहयोग करना, एक-दूसरे का उपकार करना बताया है।

मानव एक सामाजिक प्राणी है। वह बिना सहयोग के अपने-आपको नहीं चला सकता। मनुष्य की जितनी आवश्यकताएँ हैं वे चाहे रहने की हों, खाने-पीने की हों, पहनने-ओढ़ने की हों, आमोद-प्रमोद की हों, व्यापार-व्यवसाय की हों, सबमें उसको अनेकानेक जीवों का सहयोग लेना पड़ता है। परिवार हो या समाज अथवा संघ, सबका मूल आधार सहयोग है। सहयोग के बिना न परिवार चल सकता है, न संघ-समाज ही।

संघ-समाज का दायित्व है कि वह व्यक्ति की साधना-आराधना में सहायक बने। सहयोग का वातावरण रहेगा तो व्यक्ति में प्रामाणिकता-नैतिकता जैसे सद्गुण विकसित हो सकेंगे। आप बच्चे-बच्चियों के संस्कारों के लिए भी कुछ सकारात्मक कदम उठायें। अगर बचपन की अवस्था वालों को संस्कार देकर समृद्ध नहीं किया गया तो सामायिक-स्वाध्याय-साधना का महल कैसे टिका रहेगा? नींव है संस्कार। उसे बचपन से मजबूत करने की जरूरत है।

परिवार हो या संघ-समाज, परस्पर का सहयोग आवश्यक है। जीव का एक-दूसरे के प्रति सहयोग है, उपकार भी है। सहयोग के बिना न व्यावहारिक जीवन चलता है, न आध्यात्मिक जीवन ही। जीवन चाहे गृहस्थ का हो या साधु का वह कैसे ऊँचा उठ सकता है? अभी तत्त्वचिन्तक प्रमोदमुनि जी ने कहा- साधु का सहयोग श्रावक करता है, श्रावक का साधु। हम एक-दूसरे के कैसे सहयोगी बन सकते हैं? आज आपकी साधारण सभा है, आप संघ और संघ की सहयोगी संस्थाओं में परस्पर सहयोग कैसे बढ़े, चिन्तन करना।

एक परिवार में चार पुत्र हैं। एक भाग्यशाली है जहाँ हाथ डालता है लाखों के वारे-न्यारे करता है, दूसरा सामान्य उद्यम वाला है, तीसरा सेवा में दक्ष है, चौथा मन्द बुद्धि है अपने-आपको पूरी तरह संभाल नहीं पाता। आप एक-दूसरे की घर में तुलना करें, वह उचित नहीं है। घर में स्ट्रांग रूम है जहाँ तिजोरी और माल रखा जाता है, बेडरूम है, किचन है तो बाथरूम भी है। अपनी-अपनी जगह सब उपयोगी हैं ऐसे ही संघ-समाज में सब तरह के लोग हैं, उनकी तुलना करने के बजाय जिसमें जैसी क्षमता है, सबका सहयोग लिया जाय। शरीर में मस्तिष्क सबसे श्रेष्ठ है। इसमें कमजोरी हो तो? मस्तिष्क में कमजोरी है तो व्यक्ति का जीवन भी सही तरीके से नहीं चल सकता। कान सुनते हैं, आँखे देखती हैं, मुँह खाता है, हाथ -पैर अपना काम करते हैं, पर ढीला हो जाए तो सभी अङ्गों में कमजोरी आ जाती है। मस्तिष्क का कितना खयाल रखा जाता है? यदि मस्तिष्क का खयाल रखा जाता है तो दूसरे-दूसरे अंगों की भी उपेक्षा नहीं की जाती। पैर सबसे नीचे हैं। पैर में कभी काँटा लग जाय तो शरीर के सभी अंग सहयोगी बनते हैं। मस्तिष्क सोचने का, आँखे देखने का, हाथ कांटा निकालने का काम करता है। एक-दूसरे का सहयोग यहाँ भी है।

बैंगलोर में सामूहिक भोज में रात्रि भोजन नहीं करने और जमीकन्द का उपयोग नहीं करने हेतु वातावरण बना। उपनगर, कॉलोनी और क्षेत्रवार विचार के पश्चात् नियम भी लिए गए। नियम की पालना करने वाले करते भी हैं, किन्तु आश्चर्य तब होता है जब समाज के धर्मस्थानकों में जमीकन्द बनने लगता है। समाज के सांसारिक कार्यों के लिए जहाँ भवन नहीं, वहाँ धर्मस्थानों का उपयोग सांसारिक कार्यों में किया जाने लगा है। धर्मस्थान की अपनी मर्यादा होती है, सांसारिक काम में भवन दे दिये जाने पर जूते जहाँ नहीं जाने चाहिये, बेधड़क जाते हैं। धर्मस्थान में जमीकंद निषेध रहना चाहिये, पर धर्मस्थान देते समय जमीकन्द

नहीं बनेगा इसकी बाध्यता नहीं, इसलिए जमीकन्द का खुला उपयोग धर्मस्थानों में किया जाता है। धर्मस्थान आगे से आगे बुक रहते हैं। कभी संत-सती आते हैं तो संघ पदाधिकारियों को यह कहते विचार तक नहीं आता कि-बाबजी! आप तीन दिन बाद पधारें, अभी तीन दिन स्थानक दिया हुआ है। स्थानक भवन के निर्माण में जिसने द्रव्य दिया उसने यह नहीं सोचा होगा कि चारित्रात्माएँ भी इस भवन का उपयोग इसलिए करने से वंचित रहेंगी, क्योंकि वह सामाजिक कार्यों में रुका हुआ है। स्थानक किसलिए?

सभा में से- धर्म साधना के लिए।

क्या धर्मसाधना के अलावा सांसारिक कार्यों में धर्मस्थान नहीं दिया जाता?

आप वस्तुस्थिति से विज्ञ हैं, मुझे ज्यादा कहने की जरूरत नहीं। आप समाज-धर्म के लिए जब तक सजग नहीं होंगे, धर्मस्थानकों में जमीकन्द बन्द होना मुश्किल होगा। नियम ले भी लिया तो वह ज्यादा चल नहीं पायेगा। बैंगलोर चातुर्मास में प्रयास करने के पश्चात् भी एक सज्जन नियमबद्ध होना नहीं चाह रहे थे। उन्हें समझाया गया। वे माने भी, पर नियम कितना चला? समाज-धर्म में आप अभक्ष्य पदार्थों का सेवन नहीं करते, पर आज सांसारिक काम होटलों में होने लगे हैं, आप माँसाहार से दूर हैं तो भी माँसाहारी होटलों में जाने पर लोगों के लिए अंगुली निर्देश का कारण तो बनेंगे ही। कोई शराब की दुकान पर दूध पी रहा है तो भी लोग क्या समझेंगे? आप भले ही शाकाहारी हैं, तब भी माँसाहारी होटल में जाते हैं तो लोगों के मन में सन्देह तो रहेगा ही। माँसाहारी होटलों में काम लिए जाने वाले बर्तन शाकाहारियों के अलग हों, ऐसी बात किसी के गले नहीं उतरती। चम्मच तो इधर-उधर लगता ही है।

समाज में एक गलत रिवाज है। सब प्रभावना करने वाले को पूछते हैं। बाहर में जो प्रभावना नहीं करता, उसमें शायद हीन भावना पैदा होती है। घर में आने वाला हर व्यक्ति कमाऊ के पास आकर बैठता है तो दूसरे के मन में आ सकता है कि मैं झाड़ू क्यों लगाऊँ ? परिवार हो या संघ-समाज, जहाँ उपेक्षा है वह परिवार स्वस्थ नहीं रह सकता, संघ-समाज, आगे नहीं बढ़ सकता। संघ-समाज में कई बुद्धिशाली हैं, कई समयदानी हैं, कई द्रव्यदानी हैं, कई कार्यकर्ता हैं, कई तपस्वी हैं, कई सेवाभावी हैं, सबका अपना महत्त्व है। किसी की किसी से तुलना नहीं,

किसी की उपेक्षा नहीं। जैसे घड़ी में एक-एक पुर्जे का महत्त्व है ठीक वैसे ही समाज में एक-एक व्यक्ति का महत्त्व है। हमारे संत परिवार में भी कोई प्रवचन प्रभावक है तो कोई तप प्रभावक, सेवा करने वाला सेवा प्रभावक है तो कई साधक शासन की प्रभावना में संलग्न हैं। सबका अपना महत्त्व है। यहाँ भी तुलना से या उपेक्षा से हीन भावना आ सकती है। कमी सब जगह संभव है। कमी कैसे दूर हो, उस पर ध्यान दिया जाना चाहिये। पूज्य आचार्य श्री जयमल जी महाराज ने कहा- "एक एक मुनिवर रसना त्यागी, एक-एक ज्ञान भंडार रे प्राणी।" संघ को, समाज को, परिवार को ही नहीं, व्यक्ति-व्यक्ति को संभालने की जरूरत है। किसी की उपेक्षा न हो, न ही किसी की किसी से तुलना ही हो। सबका क्षयोपशम समान नहीं होता। प्रभावक अपनी जगह उपयोगी है तो सेवा करने वाला भी अपनी जगह पर कम उपयोगी नहीं है। एक-दूसरा एक -दूसरे को आगे बढ़ाये। संघ में हर व्यक्ति का ध्यान रखा जाय और उसके गुण उभारे जायें। आप संघ की उन्नति में, दीप्ति में आगे बढ़ें और अपनी प्रतिभा बढ़ाकर संघ को समुज्ज्वल करें, इसी मंगल मनीषा के साथ....

Some Thoughts

Minakshi Jain Surana

1. Say "Sorry" at the Right Moment.
2. Problems are only Solutions in disguise.
3. Needs can met, greed Never.
4. The Greatest Loss is the Loss of self Confidence.
5. Every Stone can be a Stepping Stone.
6. If you want to gather honey, Don't Kick Over the beehive.
7. Make Common Sense Your Best Friend.
8. Reading Without thinking is like Eating without digesting.
9. The Great aim of education is not Knowledge but action.
10. Chasing after the Impossible you lose What is possible.

- Surana Ki Badi Pole, Nagaur (Raj.)

प्रवचन

धर्म उत्कृष्ट मंगल क्यों?

मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा.

कल्याणकारी होने से धर्म उत्कृष्ट मंगल है एवं यह हमें प्राणिमात्र के प्रति मैत्री भाव रखने का संदेश देता है। मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. द्वारा महावीर वाटिका, देवनगर, जोधपुर में ९ अप्रेल,२००८ को फरमाए इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सहसम्पादक श्री नौरतन जी मेहता ने एवं सम्पादन शासन सेवा समिति के सदस्य श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना, जोधपुर ने किया है।–**सम्पादक**

धर्मानुरागी बन्धुओं!

श्रमण भगवान् महावीर ने समस्त जीवों की दया, रक्षा एवं अनुकम्पा की भावना से जिनवाणी का उद्घोष किया, मोक्षमार्ग का निरूपण किया। उसी पतित पावनी वाणी के माध्यम से आपका हमारा स्वाध्याय का क्रम चल रहा है। प्रभु ने जिस वाणी के माध्यम से भव्य प्राणियों को जीवन का हार्द समझाया, जीवन जीने की कला बताई, यही नहीं जीवन-मुक्त होने की राह दिखाई, वही सच्चा धर्म है। निश्चय ही राग-द्वेष विजेता, देवाधिदेव तीर्थंकर भगवंतों द्वारा प्ररूपित धर्म इस जन्म में ही नहीं, सदा सर्वदा के लिये शान्ति एवं सौख्य प्रदान करने वाला है। सभी समस्याओं का सर्वथा निकन्दन कर जीव को निर्विकल्प, निर्द्वन्द्व, अक्षय, अमर शाश्वत सुखों को देने वाला है। जरा समझें धर्म किसे कहा जाय?

आगमकारों ने दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्याय में प्रथम गाथा में ही कह दिया-

"धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवावि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो।।

इस गाथा के माध्यम से जहाँ आगमकारों ने धर्म का स्वरूप समझाया, वहीं सच्चे धर्म का महत्त्व भी प्रतिपादित किया है। आगमवाणी का स्पष्ट उद्घोष है- **"धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो"**

अर्थात् अहिंसा,संयम व तप रूप जो धर्म है, वह उत्कृष्ट मंगल है। उत्कृष्ट, श्रेष्ठ अथवा सच्चा मंगल कौन सा? जो कभी अमंगल न हो, शाश्वत हो। अन्यथा संसार में जितने द्रव्य मंगल हैं वे देश, काल, व्यक्ति व परिस्थिति के

अनुसार बदल जाते हैं, मंगल अमंगल हो जाता है। परन्तु देवाधिदेव तीर्थंकर भगवंतों ने अपनी वाणी द्वारा जो अहिंसा, संयम एवं तप रूप धर्म प्ररूपित किया वह शाश्वत मंगल है। वह देश (क्षेत्र), काल, व्यक्ति व परिस्थितियों की सीमा रेखाओं से परे है। यानी वह धर्म सभी क्षेत्रों, भूत, भविष्य एवं वर्तमान सभी समयों तथा प्राणिमात्र के लिये सुख,दुःख की हर परिस्थिति में कल्याणकारी है, सिव, अयलं, अरुअं, अनन्त अक्षय, अव्याबाध, शाश्वत सुखों को देने वाला है। जो पाने के बाद कभी भी समाप्त न हो, घटे नहीं, वही तो सच्चा शाश्वत सुख है।

आचार्य भगवंतों ने अपनी भाषा में धर्म की व्याख्या करते हुए फरमाया- ''संसार में पतन के गर्त में डूबते हुए प्राणी को जो बचाये, वही धर्म है। यानी संसार में एक मात्र त्राता, शरणदाता, अभयदाता, यदि कोई है तो वह है धर्म। धर्म का आश्रय ग्रहण करके, धर्म को अपने जीवन में प्रतिष्ठित कर जीव शिव, नर नारायण, आत्मा परमात्मा व पतित पावन परमेष्ठी बन जाता है। साधक धर्म का स्वरूप धारण करके ही पंच परमेष्ठी के पद पर अधिष्ठित होता हुआ अपने जीवन लक्ष्य को पाकर सदा के लिये सांसारिक दुःखों से परीत हो जाता है।

शास्त्रकार ने आगे धर्म की महिमा प्रतिष्ठित करते हुए फरमाया कि धर्म के सच्चे स्वरूप का जो पालन करते हैं, देवता भी उनको नमस्कार करते हैं। यह है धर्म का माहात्म्य। धर्म का सच्चा आराधक इस लोक में भी असीम शान्ति व आनन्द की अनुभूति करता है। यही नहीं आत्मावगाहन करते हुए वह मोक्ष के सुखों की अनुभूति करने लगता है तो भला देवलोक के भोग-वैभव एवं ऐश्वर्य आत्मा के इस अनन्त सौन्दर्य, ऐश्वर्य एवं शाश्वत सुखों की तुलना में कहाँ ठहर सकते हैं? धर्म के आराधन का सुफल है 'मोक्ष की प्राप्ति'। क्वचित् साधना में थोड़ी कसर रह गई तो वैमानिक से कम तो गति है ही नहीं, तो भला जो धर्म इह लोक परलोक दोनों ही लोकों के लिये मंगलकारी है, सुखप्रदाता है उसका आराधन क्यों न करें ? देवता जो धर्म का आचरण कर ही नहीं पाते, वे धर्म के साक्षात् स्वरूप को जीवन्त रूप में धारण करने वाले, अहिंसा-संयम के पालक तथा तप के आराधक धर्मदेव संत-भगवंतों के चरणों में झुक जायें, उनकी सेवा कर अपने आपको सौभाग्यशाली समझें तो आश्चर्य ही क्या?

आज हमें चिन्तन करना है कि जीवन में धर्म का वस्तुतः कितना महत्त्व होना चाहिये और हमने इसे कितना महत्त्व दे रखा है? धर्म के कारण अनन्त

पुण्यवानी का संचय कर इस जीव ने मानव भव प्राप्त कर लिया, पाँच इन्द्रियाँ, स्वस्थ शरीर, आर्य क्षेत्र, श्रावक घर में जन्म, सद्गुरु के समागम के साथ वीरवाणी के सुअवसर का यह लाभ प्राप्त कर पाया। मंजिल सामने है- शिव पथ की। गुणस्थान रूपी सीढ़ियों पर निरन्तर आरोहण का अनुकूल अवसर भी सहज उपलब्ध है, बस एक फलांग भर की दूरी है। यदि ऐसे अवसर पर मनोबल कमजोर हो गया, धर्ममार्ग में पुरुषार्थ का मनोरथ नहीं जगा पाये तो कल्पना करना भी भयावह है कि इस जीव की गति क्या होगी?

अपनी अन्तिम देशना उत्तराध्ययन के तेबीसवें अध्ययन में भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा के महापुरुष केशीकुमार श्रमण व चरम तीर्थंकर श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ तथा श्रेष्ठ शिष्य गणधर गौतम के श्रावस्ती नगर में मिलन का, उनमें हुए संवाद का एवं ज्ञानचर्या का प्रसंग बहुत महत्त्वपूर्ण है। इतिहास साक्षी है कि केशीकुमार श्रमण ने गौतम से चर्चा को युग परिवर्तन का आह्वान समझा, तीर्थ प्रवर्तन की परम्परा एवं महावीर द्वारा उद्घोषित वाणी का स्वरूप समझा और प्राचीन परम्परा का वीर परम्परा में सम्मिलन हो गया। मिलना और सम्मिलन, चर्चा और ज्ञानचर्चा, वार्ता और संवाद में मौलिक अन्तर है। एक में औपचारिकता है तो दूसरे में सत्य के अनुसन्धान, परीक्षण व स्वीकृति की भावना है। महापुरुषों का सम्मिलन परस्पर प्रगति व ज्ञानवृद्धि का निमित्त होता है। आज भी केशी- गौतम के संवाद का सन्देश भव्य जीवों को मोक्ष मार्ग का, धर्म के सत्य स्वरूप का पथ प्रशस्त करते हुए इसकी स्वीकृति का आह्वान कर रहा है।

केशीकुमार श्रमण ने पूछा- हे गौतम! निरन्तर जन्म-मरण के इस वेग में बहते संसारी जीवों के लिये शरणभूत क्या है?

निर्मल प्रज्ञा के धनी गणधर गौतम उत्तर देते हैं-

जरामरणवेगेणं बुज्झमाणाण पाणीणं।
धम्मो दीवो पइट्ठा य, गई सरणमुत्तमं॥

-उत्तराध्ययन. २३.६८

हे महर्षि! जन्म-मरण के वेग से अनादि काल से संसार चक्र में परिभ्रमण करते संसारी प्राणियों के लिये धर्म 'द्वीप' के समान उत्तम शरण है। कल्पना करें अथाह जलराशि में ऊपर नीचे हिलोरे खाते व्यक्ति को दूर से ही धरती का कोई किनारा नज़र आ जाय तो भी कितनी प्रसन्नता होती है, तो धरती के किनारे पहुँच

कर धरती पर शरण ग्रहण करने वाले की प्रसन्नता का तो पार ही क्या?

यह जीव भी अनादि काल से निरन्तर जन्म-मरण के चक्र में फंसा इस संसार-समुद्र में कभी नरकादि निम्न गतियों में तो कभी देवलोक के सुखों में डोलण हिण्डे के समान गतिचक्र ही तो कर रहा है। निरन्तर प्रवाहमान इस संसार में धर्म 'द्वीप' के समान है जिसकी शरण लेकर जीव दुःख से विश्राम या विराम ही नहीं, सदा के लिये किनारा कर लेता है। धर्म तो निश्चय ही मंगलकारी कल्याणकारी है, शरण है, त्राता है। आवश्यकता है इसके शुद्ध स्वरूप को समझने की एवं इस पर दृढ श्रद्धा करने की।

धर्म का स्वरूप बताते हुए आगमकारों ने स्पष्ट कर दिया कि धर्म अहिंसा, संयम व तप रूप है। ध्यान देने योग्य बात है कि आगमकारों ने धर्म के तीन भेद न बताकर इन तीनों के समन्वित रूप को ही धर्म कहा है। जहाँ दया है, करुणा है, मैत्री है, स्नेह है, प्रतीति व सद्भाव है, एक दूसरे के प्रति प्रमोद है, वात्सल्य है वहाँ धर्म है। ये सब अहिंसा के विविध आयाम हैं। हिंसा, वैर, विरोध, द्वेष, अविश्वास में धर्म न कभी था, न हो सकता है।

अनन्त ज्ञानी भगवंतों ने जीव निकाय की हिंसा व अहिंसा का जितना सूक्ष्म विवेचन किया है, वैसा विवेचन अन्यत्र कहीं नहीं मिलता है। जीव की सही स्वरूप अनन्त ज्ञानी ही अनुभव कर सकते हैं। सूक्ष्मतम जीव की सूक्ष्मतम हिंसा भी धर्म का अंग कदापि नहीं हो सकती है। दुनियां के अन्य धर्मों में भी अहिंसा की चर्चा व चिन्तन अवश्य है, किन्तु अपेक्षाकृत स्थूल है। कुछ धर्मों की अहिंसा मानव तक ही सीमित है। वे मानव को बचाने के लिये, मानव को सुख प्रदान करने के लिये पशु-हिंसा को भी मान्य कर देते हैं। इसी मान्यता ने प्राचीन काल में पशुबलि को धर्म के रूप में मान्य किया, साथ ही यज्ञ हवन को प्रतिष्ठित किया, परन्तु अनन्त ज्ञानी भगवंतों ने स्पष्टः प्रतिपादित किया कि निगोद जैसे सूक्ष्म जीव भी हमारे ही समान हैं, हमारा यह जीव भी उन सब जीव निकायों के रूप में जन्म ले चुका है। छोटे से छोटे त्रस-स्थावर प्राणी की हिंसा भी हिंसा ही है, अधर्म ही है। चाहे उसे धर्म के नाम पर ही क्यों न किया जाय।

अहिंसा, करुणा व दया धर्म की कसौटी है। भला किसी अन्य को प्रत्यक्ष परोक्ष कष्ट देकर यह जीव कैसे सुखी बन सकता है? नीम का बीज बोकर कोई

आम्रफल कैसे प्राप्त कर सकता है? तो भला किसी के प्राण होम कर, किसी की आहुति देकर, बलि देकर व्यक्ति कैसे सुखी बन सकता है? अतः जो स्व-पर दोनों के ही रक्षण में हेतु हो, वह धर्म है।

इसी प्रकार संयम और तप भी धर्म के स्वरूप का निर्धारण करते हैं। जो मन, वचन एवं कर्म की अशुभ प्रवृत्ति का निरोध कर शुभ प्रवृत्ति का आचरण करते हैं, वे संयममय जीवन जीते हैं। हमारी प्रत्येक प्रवृत्ति अशुभ से शुभ की ओर हो, तो धीरे-धीरे वह शुद्ध तक भी पहुँचा सकेगी। संयम के साथ ही अपने पूर्वोपार्जित कर्मों का क्षय करने के लिए तपश्चरण आवश्यक है। यह हमारी चेतना की शुद्धि में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। धर्म के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर भी यह जीव समस्याओं से त्रस्त हो घबरा जाता है, उसका विश्वास डोल उठता है और वह भटक कर बाहर सुख ढूँढने लगता है। आज आवश्यकता है- धर्म पर दृढ़ श्रद्धा की। जीवन में जब तक कर्म उदय में है तब तक समस्याएँ अवश्यम्भावी हैं। इस युग के प्रथम तीर्थंकर भगवान आदिनाथ की माता मरुदेवी जैसे विरले पुण्यशाली होते हैं जिनके जीवन में दुःख या समस्या का संत्रास नहीं होता है। मरुदेवी माता ने अपनी सुदीर्घ आयु में अनेक पीढ़ियाँ देखीं, पर कभी विरह वियोग का दुःख नहीं देखा, नख में भी कोई रोग उभरकर नहीं आया, पर ऐसे भाग्यशाली विरले होते हैं। इन कर्मों ने तो संसारी जीवों की तो बात ही क्या, चरमशरीरी जीवों को, देवाधिदेव तीर्थंकर भगवंतों को भी नहीं छोड़ा।

ज्ञानी व अज्ञानी में यही अन्तर है कि ज्ञानी यह सोचता है कि सुख-दुःख मेरे स्वकृत हैं, इन्हें मैंने स्वयं ने ही आमंत्रित किया है। इनका कर्ता, भोक्ता मैं स्वयं हूँ। दुनियाँ में और किसी की शक्ति नहीं कि मुझे दुःखी बना सके। मैं अनन्त सुखों का स्वामी हूँ। शाश्वत सुख मेरा स्वभाव है। इन कर्मों को मैंने स्वयं ने आमन्त्रित किया है तो भला मैं क्यों घबराऊँ? जिनको आमन्त्रित किया है उनका हँसते-हँसते स्वागत करूँ। लेनदार कर्जा वसूली के लिये आया है तो उसका ऋण चुकाते हर्षानुभव करूँ अन्यथा हाय-त्राय, आर्त-रौद्र करते एवं लड़ते-झगड़ते कहीं नया कर्जा न ले बैठूँ? संसार में आप व्यावहारिक जगत् में खुद अनुभव करते हैं कि कोई व्यक्ति कर्ज चुकाने के लिये, ब्याज चुकाने के लिये पुनः पुनः कर्ज लेता रहे तो क्या वह कभी कर्ज मुक्त हो सकता है? कर्मों का कर्जा भी शान्तिपूर्वक चुकाने से एवं प्रसन्नता का अनुभव करने से ही चुकाया जा सकता है। महापुरुषों का कहना है कि

दुःख वेदनीय कर्म का परिणाम है जो अघाती कर्म है। वह आत्मा के मूल गुणों का ह्रास करने में समर्थ नहीं है, पर दुःखी होना मोहनीय कर्म का परिणाम है। राग व द्वेष का परिणाम है। राग, द्वेष एवं मोह आत्मा के मूल गुणों का ह्रास करने वाले हैं। संसार परिभ्रमण को बढ़ाने वाले हैं। न तो दुःख हमेशा रहने वाला है, न ही सुख। जो आया है उसे निश्चय ही जाना होगा। तो भला मैं दुःख से दुखी क्यों बनूँ? सुखों में मदमस्त क्यों बनूँ?

चन्दना का उदाहरण हमारे सामने है। राजदुलारी, महलों में जन्मी, पली, सुख वैभव में झूली, राजकन्या वसुमती को बीच बाजार बिकना पड़ा। यही नहीं कर्मों का परिणाम देखें- ईर्ष्या, द्वेष व शंकालु प्रवृत्ति की मूला सेठानी ने चन्दना का सिर मुंड़वाया। पैरों में बेड़िया, हाथों में हथकड़ियाँ हैं, वस्त्र आभूषण नहीं है, तलघर में डाल दिया गया है, तीन दिन तक खाने पीने को कुछ नहीं है। ऐसी विषम परिस्थिति में चन्दना का कैसा चिन्तन? समस्या से, परिस्थिति से व दुःख से कोई शिकवा नहीं। विषमता में समता एवं सकारात्मक चिन्तन-यहाँ एकान्त में मुझे प्रभु-भक्ति का, आत्मचिन्तन का अच्छा अवसर मिला है। कोई आर्त-रौद्र नहीं, हाय-हाय नहीं, यही चिन्तन कि मेरे पूर्वकृत अशुभ कर्म आज उदय में आये हैं, जिनका यह परिणाम प्रगट हुआ है। सारा प्रसंग आपके ध्यान में ही है। मैं उस विस्तृत प्रसंग में न जाकर यही कहना चाहूँगा कि कर्म गति देखिये- तीन दिन की भूखी-प्यासी चंदना के सामने खाने को क्या उपलब्ध है? उड़द के बाकुले। राजकुमारी चंदना को मन में उसका भी दुःख नहीं , बल्कि कैसा शुभ संकल्प? मैं किन्हीं महापुरुष को आहारदान कर आहार करूँ। प्रभु पधारे, चंदना के सारे दुःखों का अन्त हुआ। आंगन में स्वर्ण-मुद्राओं की वर्षा हो रही है, दिव्य वस्त्राभरण प्राप्त हुए हैं, आकाश में देवदुन्दुभियां बज रही हैं, नगर में जय जयकार हो रही है, राजरानी का बुलावा है, पर इससे भी चंदना को कोई अभिमान नहीं, एक मात्र अभिलाषा है- इन सबकी मुझे कोई चाह नहीं, यह मेरी राह नहीं, मुझे तो उन शाश्वत सुखों को प्राप्त करना है जहाँ कर्म नहीं, काया नहीं, मोह नहीं, माया नहीं, चाकर नहीं, ठाकर नहीं, ज्योति में ज्योतिसंलीन शैलेषी दशा।

इसके विपरीत, संसारी प्राणियों की कैसी दशा? थोड़ी सी समस्या आई नहीं कि इधर-उधर भटकने लगता है। सुख भीतर है, दुःख स्वकृत है, तो समाधान भी भीतर ही है। धर्म के इस मौलिक सूत्र को भुलाकर वह यत्र तत्र समाधान ढूँढने को

उद्यत हो जाता है। इसका मूल कारण अज्ञान, मूढता व जड़ता है। जिनके स्वयं के जीवन में आनन्द की अनुभूति नहीं, शान्ति क्री सुवास नहीं, उनसे शान्ति व सुख की याचना करने लगता है। साधनों में सुख ढूँढने लगता है। जो एक को छोड़कर अनेक की वाञ्छा करे, संसार में भी उसे अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता है। श्रद्धेय उपाध्याय भगवंत फरमाया करते हैं कि हाथी यदि एक मालिक के आधीन है तो वह भरपेट भोजन प्राप्त कर संतुष्ट हो जाता है, जबकि गली का श्वान अनेक घरों की आशा रखते हुए भी कभी तृप्त नहीं हो पाता है।

हमारी स्थिति क्या है, जरा सोचने की आवश्यकता है। समस्याओं में संकल्प-विकल्प करता हुआ व्यक्ति विकल्पों में उलझ जाता है। अज्ञानवश अनेकानेक लोगों द्वारा सुझाये गये विकल्पों में हल ढूँढने लगता है, कही सुनी बातों में सुख समाधान ढूँढने के पहले जरा यह तो सोचे कि सुझाने वाला स्वयं पथप्रदर्शन की योग्यता रखता है या नहीं, जिनसे सुख प्राप्ति की अभिलाषा व याचना कर रहा है क्या वे स्वयं कामना और वासना से मुक्त हैं, जो स्वयं कामना से पीड़ित हैं जो स्वयं दूसरों से अपेक्षा रखते हैं वे दूसरों को क्या दे सकते हैं? दैव योग व कर्म क्षय से कभी किसी समस्या का समाधान हो भी गया तो क्या वह चिरस्थायी समाधान है? क्या समस्या के मूल का ही निकन्दन है?

जो धर्म के मूल स्वरूप को समझा हुआ होता है वह विषम परिस्थितियों में भी कर्म की निर्जरा करके अपने आपको प्रसन्न रखने में कामयाब हो जाता है। धर्म से ही मैत्री गुण पुष्ट होता है। चन्दना के मन में मूला सेठानी के प्रति रंचमात्र भी द्वेष नहीं जगा। यह धर्म का स्वरूप उदाहरण के रूप में हमारे सामने है। अहिंसा का अर्थ मात्र जीव हिंसा ही नहीं है, अन्तर में सद्भाव हो, प्रतिकूल परिस्थिति में भी निमित्त के प्रति द्वेषभाव न हो, प्रत्युत मैत्री भाव प्रकट हो। ऐसा मैत्री गुण यदि जीवन में घटित हो गया तो समझो जीवन में धर्म साकार हो गया। कुल मिलाकर धर्म जो मैत्री का संदेश देता है, प्रतिकूल परिस्थिति में भी समत्वपूर्वक जीवन जीने की कला देता है और आत्मस्वरूप को जानने तथा समझने के लिए प्रकाश स्तम्भ बनकर हमारा कदम-कदम पर मार्गदर्शन करता है। इसीलिए धर्म की उत्कृष्ट मंगलता अंगीकृत है। हम धर्म के सही स्वरूप को समझकर उसको आत्मसात् करेंगे तो, हमारा जीवन धन्य बनेगा, आनन्दित बनेगा।

शोधालेख

जैन आगमों में काल और दूरी के माप

डॉ. (कर्नल) दलपतसिंह बया 'श्रेयस'

आगमों में काल और दूरी के माप

अनादिकाल से ही मानव के लिये काल और दूरी के मापों का महत्त्व रहा है। जैनागमों में वर्णित काल और दूरी के माप इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं कि वे आगम काल में प्रचलित काल एवं दूरी की अवधारणा को प्रस्तुत करते हैं तथा हमें उनके प्रति वैज्ञानिक धरातल पर विचार करने के लिये बाध्य करते हैं। इस आलेख में मेरा यह प्रयास रहेगा कि आगमों में वर्णित माप-प्रणाली को प्रस्तुत करने के साथ ही उनका वर्तमान वैज्ञानिक ज्ञान के आलोक में आकलन भी प्रस्तुत कर सकूँ।

श्वेताम्बर आगमों के अन्तर्गत जम्बूद्वीपपण्णत्ति, औपपातिकसूत्र एवं अनुयोगद्वारसूत्र में तथा दिगम्बर परम्परा के ग्रन्थों में तिलोयण्णत्ति में इस बारे में पर्याप्त जानकारी उपलब्ध है।

दूरी का माप

आगमों में दूरी की लघुतम इकाई के रूप में उत्श्लक्ष्ण-श्लक्ष्णिका का उल्लेख प्राप्त होता है जो एक (उत्सेध) अंगुल (1.905 cm) को बारह बार आठ से विभाजित करने पर प्राप्त होती है जिसका वर्तमान में प्रचलित दूरी की इकाई में मान 1.905×8^{-12} cm या 2.771×10^{-13} मीटर होता है।

दूरी की व्यावहारिक इकाइयों के रूप में हमें यवमध्य व अंगुल से लगाकर योजन तक का उल्लेख मिलता है जो कि सभी सामान्य दूरियों को नापने के लिये प्रयुक्त की जाती थीं। तीन प्रकार के अंगुल का उल्लेख प्राप्त होता है-

१. आत्मांगुल- काल विशेष में पाए जाने वाले मनुष्यों की अंगुली के पोर का नाप आत्मांगुल कहलाता था जो उसी काल विशेष में व्यावहारिक होता था तथा अलग-अलग व्यक्तियों के अंगुलियों की लम्बाइयों में अंतर पाए जाने के कारण प्रामाणिक भी नहीं था। **२. उत्सेधांगुल-** यह एक मानकीकृत इकाई थी जो एक मानक हाथ (18 इंच) का चौबीसवाँ भाग होती थी। वर्तमान MKS system में

इसका मान 1.905 सेन्टीमीटर या 0.01905 मीटर है। **३. प्रमाणांगुल-** बड़ी दूरियों यथा अंतर्देशीय, अंतरद्वीपीय या अंतर्महाद्वीपीय दूरियों को नापने के लिये इस इकाई का प्रयोग होता था जिसका मान 1000 उत्सेधांगुल था। आकाशीय पिण्डों की दूरियों का नाप प्रमाण-योजन को इकाई मानकर तय किया जाता था।

उत्श्लक्ष्ण-श्लक्ष्णिका से लगाकर योजन पर्यंत इकाइयों का परस्पर सम्बन्ध निम्न तालिका में दिखाया गया है-

निम्नतर इकाई	उच्चतर इकाई	वर्तमान इकाई
अनन्त व्यवहार परमाणु	1 उत्श्लक्ष्ण-श्लक्ष्णिका	2.771×10^{-13} M
8 उत्श्लक्ष्ण-श्लक्ष्णिका	1 श्लक्ष्ण-श्लक्ष्णिका	2.217×10^{-12} M
8 श्लक्ष्ण-श्लक्ष्णिका	1 ऊर्ध्वरेणु	1.773×10^{-11} M
8 ऊर्ध्वरेणु	1 त्रसरेणु	1.419×10^{-10} M
8 त्रसरेणु	1 रथरेणु	1.135×10^{-9} M
8 रथरेणु	1 सूक्ष्मातिसूक्ष्म बालाग्र (देवकुरु-उत्तरकुरु के युगलिकों के बालाग्र)	9.082×10^{-9} M
8 सूक्ष्मातिसूक्ष्म बालाग्र	1 अतिसूक्ष्म बालाग्र (हरिवास-रम्यक्वास के युगलिकों के बालाग्र)	7.266×10^{-8} M
8 अतिसूक्ष्म बालाग्र	1 सूक्ष्म बालाग्र (हैमवत-हिरण्यवत के युगलिकों के बालाग्र)	5.813×10^{-7} M
8 सूक्ष्म बालाग्र	1 बालाग्र (पूर्वविदेह-अपरविदेह के युगलिकों के बालाग्र)	40650×10^{-6} M
8 बालाग्र	1 लीख	3.720×10^{-5} M
8 लीख	1 जू	2.976×10^{-4} M
8 जू	1 यवमध्य	2.381×10^{-3} M
8 यवमध्य	1 (उत्सेध) अंगुल	1.905×10^{-2} M
12 अंगुल	1 वितस्ति (बालिश्त)	2.28×10^{-1} M
2 वितस्ति	1 हाथ (18 इंच)	4.56×10^{-1} M
4 हाथ	1 धनुष या दण्ड (6 फीट)	1.824 M
2000 धनुष	1 गव्यूति या कोस	3.648×10^{3} M

4 गव्यूति	1 (उत्सेध) योजन	$1.4592x10^4$ M
1000 उत्सेध योजन	1 प्रमाण योजन	$1.4592x10^7$ M
	रज्जु	
7 रज्जु	अर्द्धलोक प्रमाण-मध्यलोक से नीचे अधोलोक का विस्तार तथा मध्यलोक से ऊपर उर्ध्वलोक का विस्तार।	रज्जु लोक विस्तार की इकाई है जो इतनी विशाल व कल्पनातीत मानी गई है कि इसका ज्ञान केवल
14 रज्जु	अधोलोक से ऊर्ध्वलोक तक लोक का विस्तार।	अनंतज्ञानी को ही हो सकता है। (कोलब्रक और आइंस्टीन ने एक रज्जु का मान 10^{18-21} मील (वर्तमान यूनिवर्स के विस्तार का 1/14) आंका है। एक अन्य आकलन के अनुसार इसका मान $3.7x10^{18}$ से $2.4x10^{21}$ KM आंका गया है। तत्त्व केवलिगम्य है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन काल में भी सूक्ष्म-बादर या छोटी बड़ी सभी प्रकार की दूरियों को नापने के लिए समुचित इकाइयाँ विद्यमान थीं जिससे उस प्रागैतिहासिक काल में भी इस भूभाग में वैज्ञानिक उपलब्धियों का अनुमान लगाया जा सकता है। हाँ, यह अवश्य है कि रज्जू जैसी कुछ अतिविशाल एवं कल्पनातीत या अकल्पनीय इकाइयों को वर्तमान में वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता है तथा इस बारे में अनुसंधान की अपार संभावनाएँ छिपी हुई हैं। यह क्षेत्र जिज्ञासु अनसंधित्सुओं के लिये खुला है।

वर्तमान में दूरी की न्यूनतम इकाई पीको मीटर (10^{-12} M) तथा अधिकतम इकाई के रूप में प्रकाश-वर्ष का प्रयोग होता है, जो सुज्ञात है।

काल का माप

काल के माप की जैनागमों में वर्णित प्रणाली अत्यन्त सूक्ष्म

(कल्पनातीत) से अत्यन्त विशाल (कल्पनातीत) की ओर इंगित करती है। इनके समरूप ही नहीं, अपितु इनके समीप भी और कोई प्रणाली अन्यत्र कहीं दिखाई नहीं देती है। जैनागम सम्मत काल की लघुतम इकाई 'समय' है जो इतनी सूक्ष्म है कि एक प्राण (1 उच्छवास एवं 1 निश्वास) में अनेक (4446) आवलिकाएँ (क्षण) तथा एक आवलिका (एक अनुमान के अनुसार $1.72x10^{-4}$ Sec) में भी असंख्यात समय व्यतीत हो जाते हैं। काल के माप को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है- 1. संख्यात काल जो गणनाधारित है। इसमें आवलिका से लगाकर शीर्षप्रहेलिका तक के काल की गणना उपलब्ध है 2. असंख्यात काल जो गणनातीत होते हुए भी उपमाधारित होने से उपमाओं द्वारा समझा-समझाया जाता है। इसमें पल्य व सागर की उपमाओं से पल्योपम व सागरोपम काल को व्याख्यायित किया गया है तथा 3. अनन्त काल जो गणना तथा उपमा दोनों से परे अगणनीय तथा अनुपम है।

संख्यात अथवा गणनीय काल

आवलिका से लगाकार शीर्षप्रहेलिका तक के काल की गणना निम्न तालिकानुसार है-

निम्नतर इकाई	उच्चतर इकाई	वर्तमान इकाई
असंख्यात समय	1 आवलिका	$1.72x10^{-4}$ S
2223 आवलिका	1 उच्छ्वास अथवा 1 निःश्वास	$3.8166x10^{-1}$ S
1 उच्छ्वास तथा 1 निःश्वास	1 प्राण (4446 आवलिका)	$7.6332x10^{-1}$ S
7 प्राण	1 स्तोक	3.73464 S
7 स्तोक	1 लव	26.14248 S
77 लव	1 मुहूर्त्त	2880S या 48Minutes
30 मुहूर्त्त	1 दिन-रात	24 H
15 दिन-रात	1 पक्ष	-
2 पक्ष	1 मास	-
2 मास	1 ऋतु	-
3 ऋतु	1 अयन	-
2 अयन	1 वर्ष	1 Y

5 वर्ष	1 युग	5 Y
20 युग	1 वर्ष-शत	10^2 Y
1000 वर्ष-शत	1 लाख वर्ष	10^5 Y
84 लाख वर्ष	1 पूर्वांग	84×10^5 Y
84 लाख पूर्वांग	1 पूर्व (7056×10^{10} Y)	$84^2 \times 10^{10}$ Y
84 लाख पूर्व	1 त्रुटितांग	$84^3 \times 10^{15}$ Y
84 लाख त्रुटितांग	1 त्रुटित	$84^4 \times 10^{20}$ Y
84 लाख त्रुटित	1 अडडांग	$84^5 \times 10^{25}$ Y
84 लाख अडडांग	1 अडड	$84^6 \times 10^{30}$ Y
84 लाख अडड	1 अववांग	$84^7 \times 10^{35}$ Y
84 लाख अववांग	1 अवव	$84^8 \times 10^{40}$ Y
84 लाख अवव	1 हुहुकांग	$84^9 \times 10^{45}$ Y
84 लाख हुहुकांग	1 हुहुक	$84^{10} \times 10^{50}$ Y
84 लाख हुहुक	1 उत्पलांग	$84^{11} \times 10^{55}$ Y
84 लाख उत्पलांग	1 उत्पल	$84^{12} \times 10^{60}$ Y
84 लाख उत्पल	1 पद्मांग	$84^{13} \times 10^{65}$ Y
84 लाख पद्मांग	1 पद्म	$84^{14} \times 10^{70}$ Y
84 लाख पद्म	1 नलिनांग	$84^{15} \times 10^{75}$ Y
84 लाख नलिनांग	1 नलिन	$84^{16} \times 10^{80}$ Y
84 लाख नलिन	1 अर्द्ध-निपुरांग	$84^{17} \times 10^{85}$ Y
84 लाख अर्द्ध-निपुरांग	1 अर्द्ध-निपुर	$84^{18} \times 10^{90}$ Y
84 लाख अर्द्ध-निपुर	1 अयुतांग	$84^{19} \times 10^{95}$ Y
84 लाख अयुतांग	1 अयुत	$84^{20} \times 10^{100}$ Y
84 लाख अयुत	1 नयुतांग	$84^{21} \times 10^{105}$ Y
84 लाख नयुतांग	1 नयुत	$84^{22} \times 10^{110}$ Y
84 लाख नयुत	1 प्रयुतांग	$84^{23} \times 10^{115}$ Y
84 लाख प्रयुतांग	1 प्रयुत	$84^{24} \times 10^{120}$ Y
84 लाख प्रयुत	1 चूलिकांग	$84^{25} \times 10^{125}$ Y

84 लाख चूलिकांग	1 चूलिका	$84^{26}x10^{130}Y$
84 लाख चूलिका	1 शीर्ष-प्रहेलिकांग	$84^{27}x10^{135}Y$
84 लाख शीर्ष-प्रहेलिकांग	1 शीर्ष-प्रहेलिका	$84^{28}x10^{140}Y$*
	(महत्तम गणनीय काल)	

* यह गणना अनुयोगद्वारसूत्र तथा जम्बूद्वीपपण्णत्ति के अनुसार है। अन्य वर्णन के अनुसार पूर्वांग से 31वें स्तर पर अचलात्मा नामक इकाई है जिसका मान $84^{31}x10^{155}$ Y है तथा ज्योतिष्करंडक के अनुसार शीर्ष-प्रहेलिका पूर्वांग से 36वें स्तर पर है तथा इसका मान $84^{36}x10^{180}$ Y है।

असंख्यात अथवा औपमिक काल

जैनागमों में असंख्यात काल को उपमा के माध्यम से व्याख्यायित किया गया है। उपमा का आधार पल्य है, जिसका मान 1 उत्सेधयोजन लम्बाई, 1 उत्सेधयोजन चौड़ाई तथा 1 उत्सेधयोजन गहराई का गड्ढा है। इस गड्ढे को यदि युगलिकों के 1 से सात दिनों के नवजात शिशुओं के बालाग्रों से कूट-कूट कर भरा जाए तथा प्रतिसमय एक बालाग्र निकाला जाए तो जितने काल में वह गड्ढा पूरी तरह से खाली होगा वह एक व्यवहार उद्धार-पल्योपम होगा। यदि प्रति सौ वर्षों में एक बालाग्र निकाला जाए तो जितने काल में वह गड्ढा पूरी तरह से खाली होगा वह एक व्यवहार अद्धा-पल्योपम होगा।

यदि प्रत्येक बालाग्र के असंख्य खण्ड किये जाएँ तथा प्रतिसमय अथवा प्रति 100 वर्ष उपर्युक्तानुसार निकाले जाएं तो क्रमशः सूक्ष्म उद्धार पल्योपम तथा सूक्ष्म अद्धा पल्योपम काल प्राप्त होंगे। इसके अतिरिक्त एक क्षेत्र-पल्योपम का उल्लेख भी प्राप्त होता है।

दस कोटा-कोटि ($10x10^{14}=10^{15}$) अद्धा पल्योपम का एक अद्धा सागरोपम होता है। दस कोटा-कोटि ($10x10^{14}$) अद्धा सागरोपम का एक उत्सर्पिणी काल होता है। दस कोटा-कोटि ($10x10^{14}$) अद्धा सागरोपम का एक अवसर्पिणी काल होता है।

एक उत्सर्पिणी काल तथा एक अवसर्पिणी काल का अर्थात् बीस कोटा-कोटि ($20x10^{14}$) अद्धा सागरोपम का एक कालचक्र होता है।

कालचक्र के दो भागों-अवसर्पिणी काल एवं उत्सर्पिणी काल को पुनः

छः आरकों में विभाजित किया गया है, जिनका मान निम्न लिखित तालिका में दिया गया है-

अवसर्पिणी काल		उत्सर्पिणी काल	
आरक	कालमान	आरक	कालमान
1. सुषमा-सुषमा	4 कोटाकोटि सागरोपम	1. दुषमा-दुषमा	21000 वर्ष
2. सुषमा	3 कोटाकोटि सागरोपम	2 .दुषमा	21000 वर्ष
3. सुषमा-दुषमा	2 कोटाकोटि सागरोपम	3. दुषमा-सुषमा	42000 वर्ष कम 1 कोटाकोटि सागरोपम
4. दुषमा-सुषमा	42000 वर्ष कम 1 कोटाकोटि सागरोपम	4. सुषमा-दुषमा	2 कोटाकोटि सागरोपम
5. दुषमा	21000 वर्ष	5.सुषमा	3 कोटाकोटि सागरोपम
6. दुषमा-दुषमा	21000 वर्ष	6.सुषमा-सुषमा	4 कोटाकोटि सागरोपम

अनन्त काल

अनन्त काल की कोई व्याख्या नहीं हो सकती है। जैनागमों के अनुसार अब तक अनन्त कालचक्र व्यतीत हो चुके हैं तथा भविष्य में भी अनन्त कालचक्र होंगे।

वर्तमान में काल की न्यूनतम इकाई के रूप में पीको सैकण्ड (10^{-12} S) तथा अधिकतम इकाई के रूप में सहस्राब्दी (Millennium) का प्रयोग होता है।

उपसंहार

जैनागमों में काल व दूरी की जो इकाइयाँ वर्णित हैं, उनका वर्तमान में प्रचलित वैज्ञानिक इकाइयों के साथ सामंजस्य बिठाना एक बड़ी चुनौती है। मान्यता के अनुसार सर्वज्ञ कथित इन इकाइयों को कपोल-कल्पना कहकर नजरअंदाज करना भी उचित नहीं होगा। अतः जैन विद्वानों तथा वैज्ञानिकों के लिये इनका अनुसंधान करना एक कर्त्तव्य है। कुछ प्रयास हुए हैं, परन्तु वे विचारशील जिज्ञासुओं को संतुष्ट नहीं कर पाए हैं। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में भी गहन अनुसंधान होते रहेंगे जब तक कि एक सर्वमान्य एवं विज्ञानाधारित हल प्राप्त न हो जाए।

-ई 26, भूपालपुरा, उदयपुर-313001 (राज.)

अध्यात्म

स्थायी सुख की तलाश

श्री कन्हैयालाल लोढ़ा

यह ध्रुव सत्य है कि सुख के भोगी को दुःख भोगना ही पड़ता है अथवा यों कहें कि दुःख उसी को भोगना पड़ता है जो विषय-सुख का भोगी है। अतः दुःख से छूटने का एक मात्र यही उपाय है कि हम विषय- सुख का त्याग करें, परन्तु यहीं एक प्रश्न उपस्थित होता है कि यदि हम इस सुख का त्याग कर दें तो फिर हमारा जीवित रहने का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता है अर्थात् हमारा जीवित रहना व्यर्थ हो जाता है। अतः हमें जीवन में सुख तो चाहिए ही। इस प्रकार हमारे सामने दो स्थितियाँ हैं- एक तो यह है कि सुख के भोगी को दुःख भोगना ही पड़ता है और हमें दुःख भोगना पसन्द नहीं है तथा दूसरी यह है कि यदि हम विषय भोगों का सुख त्याग देते हैं तो सुख रहित जीवन भी हमें पसन्द नहीं है, यह हमारे सामने समस्या है। इस समस्या का समाधान तभी संभव है जब हमें ऐसा सुख मिले जिसके साथ दुःख जुड़ा न हो, दुःखरहित सुख हो।

दुःख रहित सुख पाने के लिए हमें सुख के रूपों पर विचार करना होगा। सुख का एक रूप या प्रकार तो है इन्द्रिय भोग से प्राप्त विषय-सुख, जो इष्ट पदार्थ खाने, देखने, सूंघने, सुनने आदि इन्द्रियों के भोग से मिलता है और सुख का दूसरा रूप या प्रकार है आध्यात्मिक सुख जो सेवा, असंगता, स्वाश्रित, मित्रता, उदारता आदि सद्गुणों से मिलता है अर्थात् जब चित्त शान्त होता है तो इसको अपना एक सुख या रस मिलता है जिसे शान्त रस कहते हैं। इसी प्रकार जब हम किसी की सेवा करते हैं, जिससे उसका दुःख दूर होता है तो उससे हमें प्रसन्नता होती है । किसी गुणवान और उदारचेत्ता पुरुष को देखते हैं तो हमें प्रमोद होता है। यह प्रसन्नता एवं प्रमोद भी एक प्रकार का सुख है।इसी प्रकार शरीर और संसार से असंग होने से,देहातीत-लोकातीत होने से स्वाधीनता का, मुक्ति का अनुभव होता है इसका भी अपना सुख है।

प्रथम प्रकार का सुख शरीर, इन्द्रिय व संसार की वस्तुओं के भोग से सम्बन्धित है। इस सुख के साथ पराधीनता, परवशता, विवशता, जड़ता, मूढ़ता, शक्तिहीनता, नीरसता, रोग, बुढ़ापा, मृत्यु, अभाव, अतृप्ति आदि समस्त दुःख ऐसे ही जुड़े हुए हैं जैसे काया के साथ छाया। प्रकृति का यह अटल नियम है कि विषय-

सुख के साथ दुःख रहता ही है।

विषयसुख की प्रतीति विषयभोग एवं भोग की वस्तुओं से होती है। अतः जहाँ विषयसुख का भोग है वहाँ अप्राप्त वस्तुओं की कामना, प्राप्त वस्तुओं के प्रति ममता एवं तादात्म्य तथा स्वार्थपरता रहती ही है। कामना से अशांति की, ममता से पराधीनता की, तादात्म्य से जड़ता की, स्वार्थपरता से संकीर्णता की उत्पत्ति होती है। अशान्ति, पराधीनता, जड़ता, संकीर्णता किसी को भी पसन्द नहीं है। ये सभी को दुःख रूप ही लगती हैं। अतः इन दुःखों से मुक्ति पाने के लिए विषय-सुख तथा कामना, ममता, तादात्म्य का त्याग करना ही होगा।

कामना के त्याग से शान्ति की अनुभूति होती है। शांति का रस या सुख कामना पूर्ति के सुख की तरह प्रतिक्षण क्षीण होने वाला नहीं होता है प्रत्युत अक्षय व अक्षुण्ण होता है। जब तक पुनः कामना की उत्पत्ति नहीं होती है तब तक शांति का सुख बराबर बना रहता है। इसमें कमी या क्षीणता नहीं आती है और न यह नीरसता में ही बदलता है। अतः शांति का रस या सुख अक्षय सुख है, जिसकी उपलब्धि कामना-त्याग से ही संभव है।

ममता के त्याग से स्वाधीनता की अनुभूति होती है। स्वाधीनता से स्व रस, निज रस, अविनाशी रस या सुख की अनुभूति होती है। यह सुखानुभूति अविनाशी स्वरूप की होती है। अतः यह भी अविनाशी होती है। स्वाधीनता स्वाश्रित होने से इस सुख में विघ्न व बाधा डालने में कोई भी समर्थ नहीं हो सकता। स्वाधीनता ही मुक्ति है। अतः स्वाधीनता या मुक्ति का सुख अबाधित, अव्याबाध-अखंड होता है। यह अक्षय तो होता ही है, पूर्ण होने से अखंड भी होता है।

कामना एवं ममता के त्यागने पर तादात्म्य का अहंभाव मिट जाता है, जिसके मिटते ही राग-रहित वीतराग अवस्था का अनुभव होता है। राग-रहित होते ही अनन्त प्रेम का प्रादुर्भाव होता है फिर प्रेम का रस सागर की लहरों की तरह लहराता है, सदैव उमड़ता रहता है। इस रस की न तो क्षति होती है, न निवृत्ति होती है, न पूर्ति होती है, न अपूर्ति होती है, न तृप्ति होती है, न अतृप्ति होती है। यह सुख क्षतिरहित होने से अक्षय, निवृत्त नहीं होने से अव्याबाध, पूर्ति-अपूर्ति रहित होने से अखंड-पूर्ण एवं तृप्ति-अतृप्ति रहित होने से अनन्त नित्य नूतन होता है। यह विलक्षण रस है और अनुभव गम्य है।

मैत्रीभाव या प्रेम की प्राप्ति वहीं होती है जहाँ स्वार्थपरता नहीं है। जहाँ

स्वार्थपरता है वहाँ दृष्टि अपने ही सुख पर रहती है, भले ही इससे दूसरों का अहित हो या उन्हें दुःख हो। इससे संघर्ष और संताप उत्पन्न होता है। स्वार्थी व्यक्ति सिमट या सिकुड़ कर एक संकीर्ण से, छोटे-से घेरे में आबद्ध हो जाता है। उसकी संवेदनशीलता तिरोहित हो जाती है। उसके हृदय में क्रूरता, कठोरता व जड़ता आ जाती है। फिर वह हिंसक पशु से भी निम्न स्तर वाला दानव का जीवन जीने लगता है,पशु के समान ही इन्द्रिय भोग तो भोगने ही लगता है साथ ही अमानवीय अधम व्यवहार भी करने लगता है। इसके विपरीत जो प्राप्त सामग्री, योग्यता, बल का उपयोग उदारतापूर्वक दूसरों के हित में करता है, उसे इस सेवा से जो प्रसन्नता या सुख मिलता है, वह निराला ही होता है। यह सुख प्रतिक्षण क्षीण होने वाला नहीं होता है, अक्षुण्ण या अक्षय रस वाला होता है। यही कारण है कि जब-जब उसे पूर्व कृत सेवा की घटना की स्मृति आती है, हृदय प्रेम व प्रसन्नता से भर जाता है अर्थात् सेवा का सुख नित्य नूतन रहता है, कभी पुराना नहीं होता है, जबकि स्वार्थी एवं भोगी व्यक्ति को जब-जब पूर्व में भोगे भोग की घटना की स्मृति आती है तब-तब उसके हृदय में पुनः उस भोग को भोगने की कामना उत्पन्न होती है, जिससे हृदय में अशान्ति व अभाव उत्पन्न हो जाता है। अतः भोग के सुख का परिणाम दुःख है तथा सेवा से प्रकट सुख का परिणाम नित्य नूतन व अक्षय रस की उपलब्धि है।

सेवक का हृदय उदार होता है। उदारता विभुता प्रदान करती है। विभुता का ही दूसरा नाम वैभव है। तात्पर्य यह है सेवक वैभव सम्पन्न होता है तथा स्वार्थी अभावयुक्त होता है। यही नहीं सेवक को उत्कृष्ट भोगों की प्राप्ति प्राकृतिक विधान से सदैव होती है। सेवक को बिना चाहे ही संसार से आदर-सत्कार-सम्मान व सामग्री आदि स्वतः मिलते हैं। संसार और प्रकृति उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए लालायित रहते हैं, यह बात दूसरी है कि सेवक इन उत्कृष्ट भोगों के सुखों का भोग नहीं करता है। कारण कि उसका हृदय प्रेम के अक्षय रस से सदा परिपूर्ण रहता है, जिसके समक्ष उत्कृष्ट भोगों का सुख कुछ नहीं है। उसके लिए इनका कोई महत्त्व नहीं है। तात्पर्य यह है कि कामना रहित होने से शान्ति का और राग, ममता व मोहरहित होने से मुक्ति व स्वाधीनता का रस मिलता है, जिसकी अन्तिम परिणति अनन्त करुणा, अनन्त प्रेम के रस में होती है जिसके साथ ही अनन्त ऐश्वर्य (लाभ), अनन्त सौन्दर्य (भोग), अनन्त माधुर्य (उपभोग), अनन्त सामर्थ्य (वीर्य) की अभिव्यक्ति स्वतः होती है। *-82/141, मानसरोवर, जयपुर (राज.)*

अंग्रेजी स्तम्भ

Science of Dhovana-Water(3)

Dr. Jeoraj Jain

Q 9. Should we regard the Dhovan water, i.e. water specially rubbed with minute quantities of foreign materials, as dirty water?

A 9. Water mixed with minute amounts of certain minerals (except harmful materials like arsenic and fluorides etc.) is considered to be more useful, rather than being regarded as dirty water. Similarly, water mixed with ash or some other specified foreign materials, as per standard procedure, should be considered to be fit for consumption. All the foreign materials, which are prescribed to be used for making Dhovan, are edible materials except ash (burnt solid fuel). Ash is normally alkaline. If it goes into stomach in small quantity, in form of colloids, it will not harm in any way. Moreover Dhovan is normally used after proper settling process, so that the undissolved solids are separated our from water. Because of alkalinity of ash, it may help in reducing acidity in stomach, when it reaches there in colloidal state.

Dhovan is non-living water. The mobile micro-organism, contained in the water also becomes non-living. Similarly, the oxygen radicals, present in the living-water, get destroyed during the process of making Dhovan By using such radical-deficient water, it is found that the "emotions" of the user remain at low level!

In Dhovan, dirt of bio-cells is not present there. Hence it is considered to be quite fit for drinking.

Q 10. Can one keep Dhovan or boiled water in Earthen pots?

A 10. If the pots remain wet and unstirred for prolonged periods continueously, chances are that algae/fungus (Nigod) starts

building up on its surface. The household is then required to use his commonsense. For using earthen pots four types of situations arise:-

1a) We take all possible care to ensure that no fungus develops on the surface of the pot by

i) Rubbing thoroughly everyday morning with the hand, the inner and outer surfaces of pot and then washing it. Because the pot wall is porous, the pores may be blocked after sometime due to everyday rubbing action by hand.

In that case, water will not get cooled (due to non availability of trapped water in pores for evaporation and cooling).

ii) Otherwise, after sometimes, fungus starts developing in the pores unnoticed. In absence of vigorous hand rubbing, the fungus grows unobstructed.

1b) the second method is to dry the pot in the sun for one day. It should remain dry for a day and should be used again next day. A second pot should be used on alternate day. This precaution will prevent development of fungus on the pot surface for a long period. Alternatively, the pot should be emptied every night before going to bed and kept in inverted position to dry overnight.

1c) the third method is to treat water with a small quantity of disinfectant like potassium permanganate/chromate (say two drops) every morning. This is an oxidizing agent. The water is not rendered unfit by it but the water-born germs also become non-living. Specially, its use in rainy season enhances the quality of drinking water. Probably this treatment is also capable of converting water into non-living dhovan water.

1d) there may arise another situation. Either we are not fully aware about the above noted precautions of rub-washing and drying or we are negligent and allow the fungus to develop

into the pores and on surface. Green or blackness or the inner surface of pot may even become visible. If it has become a careless routine, the fungus will also definitely creep into that dhovan everyday. This is not palatable to a sadhak.

2) Mere contact of fungus may not make the non-living water a living mass. That means dhovan does remain as non-living water. However there is a strong possiblity that the pot provides a breeding place for development of different types of fungus. This fungus may not be visible in the initial stages. But it is harmful to health.

To eliminate this possiblity, it is better as per the common sense, for an ordinary shravak to not to store the dhovan in earthen pots. Ordinary shravak means those people who can not take the requisite care for maintaining the pots fungus free with above mentioned methods. In case of boiled water, we know that it is devoid of oxygen. Hence the possibility of development of fungus on the inner surface of pot is reduced for some time. After some time the oxygen content in it also starts increasing. That time, the environment becomes conducive for development of fungus in that water.

Hence to eliminate these chances it is advisable to empty the pot in the night & leave it inverted for drying for at least one full night. In wet/rainy season, it is better to dry it for 36 hours, i.e, to use it after one day after rubbing the surfaces with hand and washing/rinsing it with non-living water. Then it can be filled with fresh non-living boiled water for day's consumption.

If one cannot be vigilant to observe these precautions strictly, one should not use earthen pots, particularly for the persons with such vowed restraint.

Q 11. Is the mineral water, available in the market after treatment with UV rays or ozone gas etc non-living? Can a Jain Saint or a vow-restrained Shravak be permitted to use such water for drinking?

A 11. This is a situation arisen in modern-times. We shall analyze it in the light of new scientific theory. Certain operations are done on the water to make this mineral water bacteria-free. But this water cannot be considered as non-living water, even after it becomes bacteria-free. The structure of Yoni is not broken in the operation. They remain, mostly in tact. Also the oxygen content is not altered. If the ozone quantity is kept high, it can replace some of the dissolved oxygen. But there is no possiblity that it will remove 100% of dissolved oxygen. Hence chances to convert this water into non-living mass are very poor.

Normally, it remains alive, although it becomes free from bacteria (zero Tras or other Sthavar vegetative life, like fungus etc). Hence abstinent shravaks (Vrati)should not use it.

Q 12. Can a sadhak use dhovan or boiled water which is kept in fridge for cooling it?

A 12. This is also a modern-day problem. In olden days, there were no fridges. In the light of our scientific theory, we will find the correct answer. In fridge, water is not cooled by its self-evaporation. If the water container is covered tightly, its surface is cooled by conduction with the ambient air and by radiating heat from the container surface. The vapour in the ambient air gets condensed in form of drops on the surface of water container. If the container lid is not closed air-tight, there will be a passage for the ambient-air to come into contact with the water-surface inside the container. This water will absorb vapour from the air in form of condensed live-water drops. This would make the non-living water as mixed-water, having a mixture of living and non-living components. Thus it becomes unfit for use by the Sadhak. (Ref. : Suyagdang Sutra, 2nd Shrutskandh, 3rd Chapter p. 112/113, "Aahaar Pragya : The souls/lives of Dew-water take birth by adopting or absorbing the atomic-material of non-living water-called non-living Yoni. Thus non-living mass is converted into living water mass.)

In case, the container is really air-tight (which is difficult to judge/ascertain, in normal conditions, by an ordinary shravak), the water should remain as non-living. But it is always a doubtful case. However, when this fridge-cooled water is taken out from the fridge and the airtight lid is opened, it will be observed that the outer-surface of the container becomes wet due to dew-drops, Similarly, chances are that these drops are also formed and absorbed on the cold water-surface, due to large temperature difference. Thus the live dew-drops make it "mixed" and unfit for sadhaks.

We have also seen that low temperature and high humidity promote water to become live very fast. Hence the non-living water in the ambience of fridge may become "live" very fast.

Q 13. While making dhovan or during boiling, the water-bodied living-beings as well as the animate micro-organisms in it are ultimately killed. Then why should we resort to all this ostentation? We do not save any living-being by adopting processes of dhovan-making or boiling for sadhaks. How can we consider these practices as non-violent or non-injurious in line with the spirit of ahimsa-vow?

A 13. There are 3-4 different aspects of it which should be taken into account.

(i) A day's requirement of water is normally stored in pots. It is filtered through a piece of cloth before making any type of non-living water, Care is also taken to dispose off the micro-organisms in the filter cloth by washing it properly, so that these organisms are not killed.

(ii) Making dhovan by washing the morning kitchen utensils with this filtered living water is considered as an essential activity of the kitchen for the household sustenance. As such Sadhaks do not become the cause to provoke or induce this

activity. Hence, loss of living-beings in this activity can be considered for the householder as Aarambhaja himsa i.e, minimum life disturbing activity to sustain the prudent householder's life. In doing his chorus or routine kitchen activity i.e., washing, dhovan is generated as a side-product only. It is not an intentional stand-alone activity. This is the ideal non-violent process to generate dhovan.

(iii)However, making dhovan by other means or boiling the filtered water purposely for drinking, cannot be considered as side-activity. Nevertheless, a wise householder uses the technique very judiciously to achieve his objective of minimum possible life-disturbance. Following two methods can be adopted to get non-living water:-

(a) First Method (path of least Himsa) : Making dhovan by use of repugnant foreign materials, or boiling the water in Sun-cooker/heater. Here a minimum possible himsa of water-life is involved, because the prudent house holder, first estimates his day's requirement & then takes that much of quantity only for this operation. That means, he judiciously limits his requirement. This is a kind of Tapa/penance, which inculcates in one's mind, the habits of limiting or budgeting the requirement. Use of sun-heater for boiling also avoids the direct use of fire-bodied agnikaaya. Thus boiled water can be obtained without the killing (himsa) of agni-kaaya. Minimization of himsa is a trait of Arambhja-Himsa, (under compulsion) which differentiates it from Sankalpaja-Himsa.

(b) Second Method is boiling the water by use of furnace fire. It does involve more himsa/violence, in form of additional disturbance to fire-bodied life, as well as air-bodied life.

As per above deductions, use of agni-kaaya should normally be avoided by householders. However, on cloudy-days,

when sun is not available in the morning hours, and where efficacy of some dhovan-making process is doubtful (though seldom), this practice may be resorted to.

(iv) In above techniques and processes, some important aspects, of our 'Intentions/purpose' and "quantity" are also involved. The intention is to

a) Minimize the consumption and eliminate waste, and

b) To minimize the impact of life-disturbing activity.

This is explained in detail as below.

One drop of living-water (Sachitta-water), it is known, contains 'innumerable' water-bodied living-beings. They exist in a state of continuous birth and death cycle. In an open position, we become the cause for their life and death for all the water stored in our tanks and pots because of our attachment with it. Just imagine their numbers. It is "innumerable" in just one drop! That too, their deaths, occurring every moment are solely due to us.

However, if we budget our requirement and limit the quantity of making dhovan or for boiling, we are responsible for himsa of that much limited quantity only. The intention of shravak is to avoid killing of infinite number of lives and strive to limit it consciously with a feeling of compassion.

Moreover, by same reasoning, we find that once the water is made non-living, that water remains devoid of water-bodied life for a period of say 8 hours. As such the deaths occurring every second in living-water are avoided for that period. Thus 'himsa' is minimized to a great extent by these operations. The himsa in 'boiling' the water may still be far less than that occurring in innumerable life-cycles of stored live-water, in 10-12 hrs. The boiled water, we know remains non-living for more than 10 hrs. Our emotion of Karuna (compassion) is reinforced due to this act. **(Continue)**

-Kamani Centre, 2nd Floor, Bistapur, Jamshedpur-831001

Tattva bodha

NAMASKĀRA SŪTRA (4)

Dr. Priyadarshana Jain

The fourth ***pada*** is ***Namo Uvajjhāyāṇaṃ*** which means obeisance to the ***Upādhyāyas*** who are the scholar ascetics engaged in scriptural studies besides guiding the other ascetics. They are the illuminators of the pathway of emancipation and guide mankind, which is groping in the dense and incredible forest of ignorance and delusion. They are the spiritual teachers who show the path of perfection and teach the art of right living. Only an aspirant who is well versed in the teachings of the ***Jinas*** can guide others. As it is said in the ***Daśavaikālika Sūtra***, ***"Paḍhamaṃ Nāṇaṃ Tao Dayā"*** i.e.first knowledge then practice, it is important for the ***Upādhyāyas*** to impart right learning by which the worldly souls can exert in the right direction of self-realization and spiritual elevation. It is the ***Upādhyāyas*** who impart the knowledge of the soul, which is different from the perishable body. One who knows the soul to be different from the body is indeed wise, one who gives up ***adharma*** i.e. sinful path and exerts in ***dharma*** i.e. righteousness is truly virtuous and one who exerts on the pathway of emancipation shunning the path of transmigration is on his way to manifest the divinity which even the celestial gods dream of and the saints and seers aspire for. The ***ācāryas*** and ***Upādhyāyas*** are the ascetics whose duty is to inspire and guide mankind towards spiritual knowledge and spiritual welfare.

The fifth ***pada*** is ***Namo Loe Savvasāhuṇaṃ***, means obeisance to all the saints in the world. They are the ascetics devoted to the contemplation of the self. They have accepted the five great vows of non-violence, truthfulness, non-stealing, celibacy and non-possession for all their lives and lead a life of complete detachment and spiritual awareness. They practise

equanimity towards all creatures and their compassion in the world is unsurpassable. They practise restraint in thought, word and deed and spend all the time in scriptural study and meditation. They move barefoot from place to place guiding mankind on the path of ***dharma***, they are houseless and penniless and do not possess anything. They practise the three jewels viz. Right-knowledge, Right-faith, Right-conduct and are adorned with a garland of divine virtues. They are devoid of attachment, and are the embodiment of humility, straight forwardness, simplicity, renunciation and other virtues. As they tread on the most difficult path of renunciation, they are worthy of guiding the worldly souls. One is blessed to visit them and seek refuge in the path shown by them. They practise and preach the laws propounded by the ***Jinas***. They are also designated as ***Māhaṇa***, ***Śramaṇa***, ***Bhikkhu***, ***Nirgrantha*** and ***Aṇagāra***.

Haṇa means to kill and ***Māhaṇa*** means not to kill, thus those who do not kill and discourse not to kill are called ***Māhaṇa***. One, who subdues his passions, remains equanimous and exerts for spiritual perfection is a ***Śramaṇa***. He is also called a ***Bhikkhu*** because he collects alms from different houses, as his vow of ***Ahimsā*** inspires him not to kill any living being and one cannot cook without causing injury to living beings. Hence a ***Sādhu*** does not cook or earn for his livelihood but collects food that is cooked for others, just as a bee collects nectar from different flowers not injuring any flower and at the same time satisfying its need. Grantha means knot and ***Nirgrantha*** means knotless or fetterless. They do not possess any thing- external or internal, hence they are called ***Nirgrantha.*** External possessions are land, property, animals, servants, gold, silver, grains, etc and internal possessions are the various passions, emotions, etc which create havoc in one's life. He is also called ***Aṇagāra*** because there are no exceptions or exclusions in the vows he has taken.

Thus through this ***pada*** obeisance is made to all ascetics who are absorbed in the contemplation of the self. Obeisance to these five ***parameṣhis*** has the power to destroy all the sins

accumulated through past lives and is the bestower of all spiritual virtues, and of all that is auspicious in this world this five-fold obeisance is most auspicious. Nothing is superior to this ***mantra*** and there is nothing that this ***mantra*** cannot beget.

Arihantas propound the pathway of emancipation, ***Siddhas*** remind us of our pure nature, ***Ācāryas*** inspire us to give up the sinful path and take to righteousness, ***Upādhyāyas*** motivate us to seek right-knowledge and ***Sādhus*** guide us through ups and downs in life and make us worthy of emancipation.

Arihanta aśarira, āyariya, uvajjhāya muṇiṇo
paṅcakkharaṇippaṇṇo, omkāro paṅca paramiṭṭhi.

The word ***Om*** is denotative of five supreme spiritual teachers. ***a+a+a+u+m,*** these are the five letters of ***Arhat, Aśarira Siddhas, Ācārya, Upādhyāya*** and ***Muni***. Thus ***Om*** connotes the five classes of supreme, virtuous, perfect, pure, divine, worthy souls, worthy of veneration and refuge.

-Lecturer, Dept. of Jainology, University of Madras, Chennai

पाठक अभिमत

(१)

सन् २००१ से जिनवाणी पढ़ता हूँ। सुंदर लेख एवं कविता छोटे से लेकर बड़ों तक खास करके स्वाध्याय प्रेमी के ज्ञानार्जन के लिए उपयोगी होते हैं। इसलिये अभिनंदन।

खास करके आपश्री का विशेष अभिनंदन करते हैं कि आपने श्रमण संघ के आचार्यप्रवर पूज्य श्री उमेशमुनि जी म.सा 'अणु' के अच्छे विचारों का लेख "नमोकार मंत्र का परिचय" छपवा कर जिनवाणी की गरिमा बढ़ायी है।

-के. के. ताथेड़, 1777, गली न. 2, धुलिया (महा.)

(२)

जिनवाणी में आपके सम्पादकीय लेख पढ़कर बहुत प्रसन्नता होती है। परमात्मा से निवेदन है कि आपको शतायु बनाये, जिससे आपकी सेवाओं का लाभ तमाम जैन जगत् को मिल सके।

-रतनलाल पटवा, 4-बी, दीप मार्ग, पावटा 'ए' रोड़, जोधपुर (राज.)

शोधालेख

कषाय : स्वरूप एवं निरोध

मोनिका बैराठी

आज जगत् का प्रत्येक प्राणी कषाय-वृत्तियों की बेड़ियों में जकड़ा हुआ कराह रहा है। ये कषाय-वृत्तियाँ उसे त्रास, पीड़ा, निराशा, घुटन जैसी आपदाएँ उपहार-स्वरूप प्रदान कर रही हैं, लेकिन व्यक्ति इन सबसे परे यदि सुख-शान्ति पूर्ण जीवन जीना चाहता है तो उसे आध्यात्मिक जागृति के द्वार पर दस्तक देनी होगी। जगाना होगा उस अबाध शक्ति को जो उसे मुक्तिरूपी दुर्लभ संपदा प्राप्त करा सके। इस सबके लिए प्रथमतः उसे कषाय के स्वरूप को जानना होगा, क्योंकि वस्तु के स्वरूप को समझे बिना कोई भी क्रिया करना हवा में तीर चलाने के समान है। अतः कषाय का निरोध क्यों और कैसे हो, इसके लिए कषाय के स्वरूप की चर्चा की जा रही है।

जैन धर्म में कषायों पर विजय की साधना को वास्तविक साधना माना गया है। कषाय के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए आचार्य हरिभद्र ने कहा है कषायमुक्तिः किल मुक्तिरेव[1] कषायों से मुक्ति ही वास्तविक अर्थ में मुक्ति है।

दशवैकालिक सूत्र में कहा है कि 'अनिगृहीत क्रोध और मान तथा वृद्धिंगत माया और लोभ ये चारों कषाय पुनर्जन्म रूपी वृक्ष का सिंचन करते हैं, अतः समाधि का साधक इन्हें त्याग दे।'[2] उत्तराध्ययन सूत्र में राग और द्वेष को कर्म का बीज कहा गया है। राग-द्वेष के कारण ही कषायों का जन्म होता है।[3] स्थानांग सूत्र में भी स्पष्ट रूप से कहा गया है कि पाप कर्म की उत्पत्ति के दो स्थान हैं- राग और द्वेष।[4]

सामान्यतया वे मनोवृत्तियाँ या मानसिक आवेग जो हमारी आत्मा को कलुषित करते हैं, हमारे आत्मिक सद्गुणों को कृश करते हैं, जिनसे आत्मा बन्धन में आती है एवं संसार-परिभ्रमण अर्थात् जन्म-मरण में वृद्धि होती है, उन्हें कषाय कहते हैं।[5]

प्रश्न उठता है कि कषायों को जन्म देने वाली ये राग-द्वेष की वृत्तियाँ किस

आधार पर जन्म लेती हैं और सम्पोषित होती हैं, तो इस सम्बन्ध में उत्तराध्ययन सूत्र में कहा गया है कि राग-द्वेष और कषाय का मूलभूत कारण मोह है। इसे अज्ञान या अविवेक की दशा भी कहा जा सकता है, किन्तु पुनः जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि जब कषायों का कारण मोह है तो मोह का उत्पत्ति स्थल क्या है? इस सम्बन्ध में यह कहना उचित होगा कि मोह का कारण मिथ्यात्व है।[६] कषाय चार हैं- क्रोध, मान, माया और लोभ।[७]

क्रोध कषाय- क्रोध मानसिक विकृति रूप वह मनोविकार है जिससे व्यक्ति का शारीरिक एवं मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है और अनेक शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन होते हैं, जैसे-चेहरा तमतमाने लगता है, आँखे लाल हो जाती हैं। भृकुटि चढ़ने लगती है, होठ फड़फड़ाने लगते हैं, नथुने फूलने लगते हैं। मानसिक दृष्टि से विवेक क्षमता कम हो जाती है तथा तर्कशक्ति शिथिल हो जाती है।[८]

धर्मामृतअनगार में क्रोध की भयंकरता को अपूर्व अग्नि, अपूर्व अन्धकार तथा अपूर्व ग्रह या भूत की उपमा से उपमित किया गया है। क्रोध को अपूर्व अग्नि इसलिए कहा गया है, क्योंकि अग्नि तो मात्र देह को जलाती है, पर क्रोध शरीर और मन दोनों को जलाता है। क्रोध एक प्रगाढ अन्धकार है, क्योंकि अन्धकार मात्र बाह्य पदार्थों को देखने में बाधक होता है, किन्तु क्रोध तो अन्तर चक्षु अर्थात् विवेक चक्षुओं को बन्द कर देता है। क्रोध एक महाभूत है, क्योंकि भूत तो एक जन्म में अनिष्ट करता है, लेकिन क्रोध जन्म-जन्मान्तर में अनिष्ट करता है।[९]

क्रोध रूपी कषाय इतना अधिक चर्चित रहा है कि भगवद्गीता आदि जैनेतर ग्रन्थों में भी इस विषय की चर्चा की गई है। गीता में श्रीकृष्ण ने काम, क्रोध तथा लोभ को आत्मा के मूल स्वभाव का नाश करने वाला नरक का द्वार बताया है।[१०] क्रोध के संदर्भ में बौद्ध ग्रन्थ अंगुत्तरनिकाय में क्रोधी मनुष्य को सर्प की उपमा दी गई है।[११]

क्रोध के अनेक दुष्परिणाम होते हैं जैसे चित्त अशान्त रहता है, भावों में कलुषता आती है, विवेकबुद्धि का नाश होता है, साधक अपमान एवं अप्रियता का पात्र बनता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी क्रोध को अनुचित बताया है। इससे हृदय की गति, रक्त प्रवाह तथा नाड़ी तन्त्र की गति बढ़ जाती है। ऊर्जा शक्ति का नाश

होता है, जिससे शारीरिक अस्वस्थता का अनुभव होता है। क्रोधावस्था में हमारा विवेक शून्य हो जाता है। हमें उचित-अनुचित का भान नहीं रहता है। हम छोटे-बड़े के भेद को विस्मृत कर देते हैं। शास्त्रकारों ने क्रोध को अग्नि की उपमा दी है कि जिस प्रकार अग्नि पहले स्वयं जलती है फिर दूसरों को जलाती है, उसी प्रकार क्रोधाग्नि में क्रोधी पहले स्वयं भस्मीभूत होता है फिर दूसरों को कष्ट पहुँचाता है। इस प्रकार क्रोध दूसरों के साथ-साथ हमारे स्वयं का भी अहित करता है, इसलिए साधक को इसका त्याग कर देना चाहिए।

क्रोध का शमन करने के लिए क्रोध आने पर मौन को धारण कर लेना चाहिए। मौन की साधना नहीं सधी हो तो स्थान परिवर्तन कर लेना चाहिए। क्रोध-निरोध के लिए जप-ध्यान का आलम्बन भी लिया जा सकता है। यह जप हमारे विकृत मन को स्थिर करने में सहायक होता है।[१२]

मान कषाय- मान अहं प्रवृत्ति का पोषण करने वाला वह मनोविकार है जो स्वयं को श्रेष्ठ तथा अन्य को निम्न स्तरीय समझने से उत्पन्न होता है। यह मान जाति, कुल, ऐश्वर्य, बल, तप, ज्ञान , साधना आदि किसी भी क्षेत्र में हो सकता है। यद्यपि स्वाभिमानपूर्ण जीवन व्यतीत करना अन्यायकर नीति नहीं है, किन्तु जब स्वाभिमानी प्रवृत्ति अपना मूल स्वरूप छोड़कर दम्भ या प्रदर्शन का रूप धारण कर ले तो मान कषाय का सिंचन होता है।

प्रशमरति प्रकरण में मद आठ प्रकार का बताया गया है-

१. जाति मद- वस्तुतः आत्मतत्त्व की समरूपता के आधार पर जाति भेद का कोई अस्तित्व नहीं है। जाति भेद तो मनुष्य द्वारा की गई व्यवस्था से निर्मित होता है। व्यक्ति को उच्च जाति में जन्म होने पर अहंभाव नहीं रखना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार किया गया मद कालान्तर में साधक को उस शक्ति (पद) से च्युत कर देता है।

२. कुल मद- कुल को लोकव्यवस्था के अनुसार दो भागों में बाँटा गया है। उच्च कुल एवं निम्न कुल। कुल अपने आप में न तो उच्च होता है, न निम्न होता है। जिस कुल में महान् पुरुषों का जन्म होता है तथा जिससे सुसंस्कारित भावों का सम्पोषण होता है, वह उच्च कुल कहलाता है। ऐसे श्रेष्ठ कुल में जन्म लेने पर कुल का मद नहीं करना चाहिये, क्योंकि इसका काल एक जन्म मात्र है।

३. रूप मद- कर्मों के फलस्वरूप मिलने वाले शारीरिक वैभव, रूप, लावण्य का भी मद नहीं करना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार का मद हमारी आत्मा को कलुषित करता है।

४. बल मद- प्रत्येक मनुष्य की शारीरिक संरचना भिन्न-भिन्न होती है। कोई बलिष्ठ होता है तो कोई निर्बल होता है, लेकिन साधक को अपने शौर्य, पराक्रम का मद नहीं करना चाहिए।

५. श्रुत मद- प्रत्येक आत्मा में अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त वीर्य जैसी शक्ति विद्यमान है। साधक आत्मतत्त्व की साधना कर परम तत्त्व को पा सकता है, लेकिन जब उसमें आत्मशक्ति की विशिष्टता का अहं हो जाता है, तो वह मान का कारण बन जाती है। अतः इसका त्याग कर देना चाहिए।

६. तप मद- कर्मों के प्रगाढ़ बंधन को तोड़ने का आधारभूत साधन तप है। तप दो प्रकार के होते हैं- बाह्य तप एवं आन्तरिक तप। तप को अग्नि के समान बताया गया है , जो जीव के कर्मरूप गाढ़ मैल को तत्काल दूर कर देता है, लेकिन जब यह तप अभिमान का आधार हो जाता है तो कर्मबंधन का कारण बनता है। अतः इसे त्याग देना चाहिए।

७. लाभ मद- लाभ-अलाभ व्यक्ति के पुण्य-पाप का परिणाम होता है। पुण्य योग होने पर लाभ मिलता है। इसके विपरीत पाप होने पर अलाभ मिलता है। व्यक्ति को लाभ-अलाभ दोनों स्थितियों में समभाव रखना चाहिए।

८. ऐश्वर्य मद- मैं अतुल वैभव सम्पन्न हूँ, ऐसा अभिमान ऐश्वर्य मद कहलाता है। यह वैभव स्थायी रहने वाला नहीं है। अतः व्यक्ति को इसका मद नहीं करना चाहिए।

मान कषाय के निरोध हेतु बारह भावनाओं का चिन्तन करना चाहिये। जैसे-शरीर की सुन्दरता का मान होने पर उसकी संरचना के साधन अस्थि, मज्जा, रक्त, मल-मूत्र, श्लेष्म इत्यादि दुर्गन्धमय पदार्थों का चिन्तन करते हुए अशुचि भावना भानी चाहिए। सत्ता-सम्पत्ति के प्रति अहंभाव पुष्ट होने पर इनको पुण्य-पाप कर्मों का फल जानकर अनित्य भावना भानी चाहिए। चेतन एवं जड़ पदार्थों की नश्वरता को देखते हुए अशरण भावना का चिन्तन करना चाहिए। मानजय हेतु विनयगुण को धारण करना चाहिए। उत्तराध्ययन सूत्र में भी कहा गया है कि मान का

प्रतिपक्षी गुण विनय है।[13]

माया कषाय- कुटिलता का दूसरा नाम माया है। मायावी के मन, वचन और काया रूप त्रियोग में एकरूपता नहीं होती है। उसके मन में मलिनता, वचन में मधुरता एवं क्रिया में विश्वासघात होता है।[14] इसके लिए वह घृणित से घृणित मार्ग को अपनाने में संकोच नहीं करता है। इसके परिणामस्वरूप वह जन्म-जन्मान्तर की भव-परम्परा को बढ़ाता है। इससे मुक्त होने के लिए माया रूपी कषाय का निरोध करना चाहिए।

मायावी कार्यसिद्धि हेतु कपटपूर्ण वृत्ति का आश्रय लेता है, लेकिन उसको यह स्मरण रखना चाहिए कि छल-कपट से कार्य सिद्ध नहीं होता है। कार्यसिद्धि तो पुण्योदय से होती है। अतः उसे मायावी प्रवृत्ति छोड़ देनी चाहिए। मायानिरोध हेतु सरलता धर्म को अपनाना चाहिए।

लोभ कषाय- मोहनीय कर्म के उदय से चित्त में उत्पन्न होने वाली तृष्णा या लालसा लोभ कहलाती है। प्रशमरति में लोभ को सब विनाशों का आधार और सब व्यसनों का राजमार्ग कहा गया है।[15] व्यसनों से तात्पर्य अहितकारी, अकरणीय प्रवृत्तियों से है। इच्छामात्र लोभ कषाय है। ये इच्छाएँ अनन्त होती हैं। ज्ञानीजनों का कहना है कि संतोष रूपी पेट के गड्ढे को तो सेर-आधा सेर अनाज से भरा जा सकता है, लेकिन तृष्णा रूपी गड्ढ़ा इतना विराट् होता है कि सोने और चांदी के कैलाश पर्वत की तरह असंख्य पर्वत भी उसे भरने में समर्थ नहीं होते हैं। लोभ कषाय दुःखों की जननी रूप होने से मोक्षप्राप्ति के इच्छुक साधक को इनका त्याग कर देना चाहिए।

लोभ रूपी कषाय पर नियंत्रण करने के लिए संतोष रूपी श्रेष्ठ धन को अपनाना चाहिए। यह संतोष रूपी धन जिसे प्राप्त हो जाता है उसे संसार के सभी धन तुच्छ लगने लगते हैं। कहा भी गया है-

गोधन, गजधन, रतनधन, कंचन खान सुखान।
जब आवे संतोष धन, सब धन धूरि समान।।[16]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि कषाय संसार का आधार है, कषाय के बिना संसार संभव नहीं होता है। ये कषाय आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक,

पारिवारिक, शारीरिक सभी दृष्टियों से हमें चोट पहुँचाते हैं। अतः इनका शमन कर देना चाहिए।

संदर्भ

1. कषाय एक तुलनात्मक अध्ययन, भूमिका, डॉ. सागरमल जैन, पृ. 7
2. दशवैकालिक सूत्र, गाथा 8.40
3. उत्तराध्ययन सूत्र, 32.7
4. स्थानांग सूत्र, 2.2
5. कषाय एक तुलनात्मक अध्ययन, भूमिका, डॉ. सागरमल जैन, पृ. 7
6. वही,पृ. 8
7. जैन बौद्ध और गीता के आचार दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन, डॉ. सागरमल जैन, पृ. 500
8. कषाय एक तुलनात्मक अध्ययन, साध्वी हेमप्रज्ञा, पृ. 14
9. धर्मामृत अनगार, अ.6, श्लोक 4
10. गीता, रामसुखदास, अ. 16, श्लोक 21, पृ. 659
11. अंगुत्तरनिकाय, द्वितीय भाग, पृ. 108-109
12. जैन, बौद्ध और गीता के आचार दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन, डॉ. सागरमल जैन, पृ.503
13. उत्तराध्ययन सूत्र, अ. 29, गाथा 69
14. कषाय एक तुलनात्मक अध्ययन, साध्वी हेमप्रज्ञा, पृ. 143
15. प्रशमरति ग्रन्थ, आचार्य उमास्वाति, गाथा 29, पृ. 23
16. श्रमण, डॉ. सागरमल जैन, अंक 1-3, 1977, पृ. 12

-148, हल्दियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

आवश्यकता है आशुलिपिक की

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल में एक आशुलिपिक की शीघ्र आवश्यकता है। जिसकी हिन्दी में कम से कम 100 शब्द प्रति मिनिट की स्पीड हो तथा टंकण शुद्ध हो एवं जैनधर्म से सम्बन्धित जानकारी रखता (प्राकृत/संस्कृत की कुछ जानकारी हो)। साधु-साध्वियों के व्याख्यानों को कलम बद्ध करने की क्षमता हो। वेतन योग्यतानुसार। रिटायर्ड सज्जन भी पात्रता रखते हों तो ऐसे महानुभाव शीघ्र निम्न पते पर सम्पर्क करें–

मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल,
दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राजस्थान)
फोन नं. 0141-2575997, फैक्स नं. 0141-2570753

अध्यात्म

आत्मा और शरीर के भेदज्ञान से निर्वाण

साध्वी रुचिदर्शना श्री

जन्म से पूर्व हमारा अस्तित्व था तथा हमारी मृत्यु के पश्चात् भी हमारा अस्तित्व रहेगा, इस चिन्तन के साथ ही हमारी यह भ्रान्ति भी विलीन हो जाती है कि मैं शरीर हूँ। शरीर विनाशशील है। यह आज है और कल नष्ट हो सकता है। व्यक्ति को आग में जलाया जाये, तलवार से छेदा जाये या किसी अन्य तरीके से भी उसे नष्ट करने का प्रयत्न किया जाये, हमेशा शरीर ही नष्ट होता है, शरीर की ही मृत्यु होती है। आत्मा को नष्ट नहीं किया जा सकता है। आत्मा शाश्वत है। न वह जन्म लेती है और न उसकी मृत्यु होती है। आज विज्ञान ने कई उपलब्धियाँ हासिल की हैं। कई आविष्कार किये हैं, किंतु आत्मा का निर्माण करना उसके लिए भी संभव नहीं हुआ हैं।

जीव की दो अवस्थाएँ हैं- संसारी अवस्था एवं मुक्त अवस्था। मुक्तावस्था में जीव शरीर से रहित होता है, किंतु संसारी अवस्था में जीव सशरीर होता है। संसारी अवस्था में आत्मा और शरीर के बीच व्याप्ति संबंध होता है अर्थात् संसारी आत्मा का शरीर से रहित होना संभव नहीं है। मृत्यु के पश्चात् आत्मा शरीर का त्याग अवश्य करती है, किन्तु फिर भी एक गति (योनि) से दूसरी गति में जाते समय कार्मण शरीर एवं तैजस शरीर तो उसके साथ ही रहते हैं तथा अन्तर्मुहूर्त के अन्दर ही जीव पुनः औदारिक शरीर प्राप्त कर लेता है। जन्म से लगाकर मृत्यु पर्यन्त यह शरीर उसके साथ रहता है। जीव की पहचान एवं उसकी अभिव्यक्ति हमेशा इस शरीर के माध्यम से ही होती है। इसीलिए जीव को मैं शरीर हूँ ऐसी भ्रान्ति हो जाती है। शरीर और मैं भिन्न हूँ इस बात को चाहे हम शाब्दिक स्तर पर स्वीकार भी कर लेते हैं, किंतु उसके मर्म को स्पर्श करना अत्यन्त ही कठिन है।

हम जीवन पर्यन्त मैं शरीर ही हूँ ऐसा मानकर सम्पूर्ण व्यवहार करते हैं। हम शरीर के लिए ही जीते हैं। हमारे सारे प्रयत्न शरीर के लिए होते हैं, नश्वर शरीर को बचाने में आत्मा को भूल जाते हैं। इसे एक उदाहरण से समझ सकते हैं। जैसे एक मकान में आग लगी। सभी लोग सामान बचाने में लग गये। मकान मालिक अंदर सोया ही रह गया। अब उस सामान की क्या उपयोगिता जब मालिक ही नहीं बचा। यही स्थिति हमारे साथ भी है। हम शरीर की चिंता करते हैं और आत्मा को भूल जाते हैं। आत्मा के

निकल जाने पर शरीर की क्या उपयोगिता ? हमने शरीर से राग किया, इसीलिए बार-बार शरीर को प्राप्त किया और अनेक दुःखों को सहन किया।

दर्शन जगत् में चार्वाक को छोड़कर सभी भारतीय दार्शनिक चिंतनधाराओं ने आत्मा एवं शरीर की भिन्नता को स्वीकार किया है तथा आत्मा और शरीर का भेदज्ञान होने पर ही जीव की सर्वोच्च मुक्ति स्थिति को स्वीकार किया है। शरीर का जितना परिमाण है, उसी परिमाण में शरीर के भीतर आत्म प्रदेश विस्तरित हैं, फिर भी आत्मा का एक भी प्रदेश शरीर नहीं बना है तथा शरीर का एक भी परमाणु आत्मप्रदेश में परिवर्तित नहीं हुआ है। दोनों भिन्न-भिन्न द्रव्य हैं। समूचा विश्व छः द्रव्यों से व्याप्त है- जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन अमूर्त द्रव्यों के साथ जीव के तादात्म्य भाव की कोई समस्या नहीं है, क्योंकि इन अमूर्त द्रव्यों के साथ जीव का अपना तादात्म्य संबंध नहीं बनता है। मात्र पुद्गल द्रव्य के साथ ही जीव के तादात्म्य भाव की समस्या है, क्योंकि जीव पुद्गल द्रव्य के प्रति ममत्व बुद्धि का आरोपण कर तादात्म्य संबंध मान लेता है। दर्शनशास्त्र का एक नियम है कि एक द्रव्य कभी भी दूसरे द्रव्य में परिवर्तित नहीं होता है। हम एक उदाहरण से इसे समझें- जैसे सोने के अंदर चाँदी की मिलावट करते हैं दोनों मिलकर एक अवश्य दिखाई देते हैं, किंतु फिर भी सोने का एक भी कण चाँदी नहीं बना और चाँदी का एक भी कण सोना नहीं बना। दोनों साथ रहते हुए भी भिन्न-भिन्न हैं, विभिन्न प्रक्रियाओं के द्वारा दोनों को अलग-अलग किया जा सकता है उसी प्रकार शरीर और आत्मा के एकत्व की भ्रान्ति को भेद विज्ञान से दूर किया जा सकता है।

आत्मा चैतन्य है तथा शरीर जड़ है। शरीर की रचना पंचभूतों से हुई है। हम भोजन करते हैं वह पाचन तंत्र के द्वारा सात धातुओं में परिवर्तित हो जाता है, इसी प्रकार शरीर का निर्माण एवं विकास होता है। यह बात हमेशा खयाल में रखें कि सतही तौर पर सुंदर दिखाई देने वाले शरीर में रक्त-मांस, मलमूत्र आदि अशुचि पदार्थ रहे हुए हैं। आत्मा के प्रभाव से यह शरीर विद्रूप नहीं होता है। जैसे फ्रीज में रखा सामान निम्न तापमान होने के कारण विकृत नहीं होता है और फ्रीज से बाहर निकालने पर कुछ समय पश्चात् परिवर्तित होने लगता है उसी प्रकार आत्मा के निकल जाने पर शरीर भी अन्तर्मुहूर्त के बाद विकृत होने लगता है। यह शरीर एक साधन है। यदि हम प्रभु-भक्ति में लीन हैं तो वहाँ वह हमारा साथ देता है और यदि हम पाप कार्य कर रहे हैं तो वहाँ भी यह हमारा साथ देता है। कौनसा कार्य करणीय है, कौनसा कार्य अकरणीय है इसका विवेक जड़ शरीर नहीं कर सकता है, इसका विवेक आत्मा ही करती है। आत्मा ज्ञान

और चैतन्य स्वरूप है। कम्प्यूटर के अंदर कितना ही ज्ञान भरा हो, किंतु उसको जानने वाला चैतन्य व्यक्ति न हो तो वह ज्ञान राशि जड़ ही रहती है।

विज्ञान के इस युग में बुद्धि का बहुत विकास हुआ है। समूचा विश्व टी.वी. चैनल पर आकर सिमट गया है, किंतु बुद्धि के द्वारा जो भी जाना जाता है वह सतही होता है। उसके द्वारा संतोष या शांति की अनुभूति नहीं होती है। चाहे कितने ही शास्त्रों का अध्ययन हमने कर लिया हो, किंतु आत्मज्ञान की अनुपस्थिति में उस ज्ञान की कोई सार्थकता सिद्ध नहीं होती है। आत्मा और शरीर के साथ तादात्म्य की अनुभूति करना जीव का अज्ञान है। शरीर के प्रति मेरेपन का आरोपण करने पर ही आत्मा को दैहिक सुख-दुःख की अनुभूति होती है। संसार के सभी सुख और दुःख शरीर आश्रित हैं। आत्मा एवं शरीर के भेद का ज्ञान होते ही सारे द्वन्द्व स्वतः ही खत्म हो जाते हैं। उस व्यक्ति की चिन्तनधारा ही बदल जाती है, विरक्ति घटित होती है। वह शरीर के सुख दुःख को अपना न मानकर उन्हें साक्षी भाव से देखता है, उसे अपूर्व आनन्द की अनुभूति होती है। संसार का कोई भी दुःख या कष्ट उसे छू नहीं सकता है। उपनिषदों में ऋषियों की एवं आगमों में महावीर की यही अनुगूंज है कि आत्मा और शरीर के भेदज्ञान के बिना शरीर से आसक्ति नहीं टूटती है और आसक्ति टूटे बिना मोह का क्षय एवं निर्वाण की उपलब्धि संभव नहीं है।

आवश्यक-सूचना

- जिनवाणी के जिन आजीवन सदस्यों का निधन हो गया है उनकी सूचना मंडल कार्यालय को शीघ्र भिजवाने की कृपा करावें तथा उनके स्थान पर नये आजीवन सदस्य बनाने हेतु शुल्क भिजवाने की कृपा करावें।
- जिनवाणी के नये बनने वाले सदस्य महानुभावों से निवेदन है कि अपने पते के साथ फोन नं. मय एस.टी.डी. कोड इस कार्यालय को भिजवाने की कृपा करावें।

जिनवाणी में प्रकाशित होने वाले विज्ञापनों का शुल्क निम्न प्रकार से है :-

(1) कवर पृष्ठ प्रथम, कलर में वार्षिक रुपये 50,000
(2) कवर पृष्ठ द्वितीय, कलर वार्षिक रुपये 50,000
(3) कवर पृष्ठ अन्तिम, वार्षिक रुपये 1,00,000
(4) ब्लैक एण्ड व्हाइट पूरा पृष्ठ वार्षिक रुपये 25,000
(5) आधा पृष्ठ ब्लैक एण्ड व्हाइट वार्षिक रुपये 15,000

गीत

माँ-बाप का उपकार

डॉ. हरीश जैन-प्रतिभा जैन

(तर्ज - आ लौट के आजा महावीर....)

माँ-बाप का बड़ा उपकार, हमें सन्मार्ग दिखाते हैं।
प्रतिफल की न करते आस-2, उमर भर फर्ज निभाते हैं ॥ स्थायी ॥

गीले में सोते दुःखी-सुखी पर, सूखे में हमको सुलाते,
भूखे रहें चाहे दोनों समय पर, हमको है पल-पल खिलाते।
रहे दुःख की भी छाया दूर-2 भावना हरदम भाते हैं,
प्रतिफल की न करते आस-2, उमर भर फर्ज निभाते हैं॥1॥

होते हैं बेटे, कुछ ऐसे जिनके, दर्शन को माँ-बाप तरसते,
कुछ ऐसे होते, उठते ही निशदिन, माँ-बाप के पांव छूते।
लें उनके सदा आशीर्वाद-2, यही भव पार लगाते हैं
प्रतिफल की न करते आस-2, उमर भर फर्ज निभाते हैं ॥2॥

ढ़लती उमर में माता-पिता को, रोग कई जब सतावे,
सेवा करें हम ऐसी लगन से, दिल उनका खुश हो जावे।
जूते चमड़ी के अपनी पहनायें-2, तो भी नहीं कर्ज उतरते हैं,
प्रतिफल की न करते आस-2, उमर भर फर्ज निभाते हैं॥3॥

अंत समय जब नजदीक आवे, धर्म ही उनको सुनावें,
माहौल ऐसा कर दें धर्ममय, पंडित मरण को वे पावें।
उनकी आत्मा का हो कल्याण-2, यदि सही भाता बंधाते हैं,
प्रतिफल की न करते आस-2, उमर भर फर्ज निभाते हैं॥4॥

-'मधुवन', 18-राजभवन रोड़, झालावाड़-326001 (राज.)

गणिवर हीरा

श्री मनमोहनचन्द बाफना

जिनका जीवन सहज सरल है,
कितना कोमल और तरल है।
गंगा सी पावनता जिसमें,
निर्मल नीर जैसा जीवन है॥

गणिवर रत्नवंश के अष्टम,
कल्पवृक्ष सम दानधर्मिता।
साधक हीरा महायोगी का,
निर्मल है निष्कामकर्मिता॥

त्रिरत्नों का ज्ञानपुंज है,
ज्ञान क्रिया से रचा-पचा है।
कितनी पैनी धार हस्ती की,
खूब तरासा हीरा रचा है॥

रत्नवंश है अति उज्ज्वल,
शरद पूर्णिमा से निरमल है।
हस्ती, हीरा तेज पुंज ने,
सारा विश्व उद्योत किया है॥

मान गुरु की आत्मलीनता,
गौतम ने जन मानस जीता।
दिव्यप्रभा दे महेन्द्र मुनिवर,
मुनि प्रमोद सी ज्ञान उच्चता॥

ज्ञान क्रिया का सबल है संबल,
स्वाध्याय ही दिनचर्या है।
समाचारी गणिरतन से पाकर,
संत सतीवर कितने सुदृढ़ हैं॥

हमको गर्व है कितना मालूम,
गज सुमेरु सा गुरु मिला है।
हस्ती रज चरणों की पाकर,
'मनमोहन' मन मगन हुआ है॥

-जैन सदन, 128/376, एच-2, किदवई नगर, कानपुर (उ.प्र.)

धारावाहिक (क्रमशः५४)

जम्बूकुमार

जैनदिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.

पूर्ववृत्तः- जेतश्री के मार्मिक हृदयोद्गार को सुनकर अपनी गंभीर वाणी में जम्बूकुमार ने कहा कि समस्त कर्मों का सम्पूर्ण अभाव हुए बिना आत्मा की रक्षा नहीं हो सकती। चूंकि मैंने तुम्हारी रक्षा करने की प्रतिज्ञा की है, अतः मेरा कर्त्तव्य है कि तुम्हें रक्षा का सर्वोत्तम उपाय बताऊँ। दीक्षित होना ही स्वयं की रक्षा करने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग है। अब आगे.....

प्रिये! तुम्हारा कथन ठीक है कि माता-पिता की सेवा करना पुत्र का कर्तव्य है। उन्हें संतोष पहुँचाना भी पुत्र का धर्म है। पर तुम्हें ज्ञात होना चाहिए कि मैंने अनिच्छापूर्वक विवाह-संस्कार उन्हीं के संतोष के लिए कराया है। इससे वे संतुष्ट हो गए हैं, अतएव उनके संतोष की चिन्ता तुम्हें नहीं करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त तत्त्व की एक बात और है। सच पूछो तो संसार में कोई किसी का त्राता नहीं है। कर्मोदय से मनुष्य को जब प्रतिकूल संवेदन होता है तब पुत्र भी कुछ नहीं कर सकता। मैं अमुक का आश्रयदाता हूँ, रक्षक हूँ, प्रतिपालक हूँ, इस प्रकार का विचार विवेकहीन अहंकार से पूरित होता है। अनाथी मुनि के उदाहरण से यह बात एकदम स्पष्ट हो जाती है। यदि किसी के शुभ कर्म का उदय है तो उसे कष्ट न होगा और यदि अशुभ कर्म का उदय है तो कष्ट दूसरे के मिटाए नहीं मिटेगा। ऐसी दशा में प्रत्येक प्राणी को आत्म-निर्भर होना चाहिए। परावलम्बन से मनुष्य सुखी नहीं बन सकता।

तुम कहती हो, आत्मकल्याण के लिए वनवास की आवश्यकता नहीं है और वनवास करने से आत्मकल्याण होता तो सब जंगली जातियाँ कभी की मोक्ष में पहुँच गई होतीं। तुम्हारा यह कथन भी युक्तियुक्त नहीं है। इसके स्थान पर यदि ऐसा कहूँ कि बीमारी होने पर औषध खाने की आवश्यकता नहीं है, यदि औषध खाना उपयोगी होता तो सब औषध खाने वाले रोग से मुक्त हो गए होते! यह कथन क्या युक्तिसंगत है? नहीं। बात यह है कि नीरोग होने में

अन्यान्य निमित्तों के साथ औषधि खाना भी एक निमित्त कारण है और वह रोगी के लिए आवश्यक है। यदि अन्य कारण अनुकूल हुए तो औषध खाने से रोग हट जाता है। इसी प्रकार मोक्ष प्राप्त करने में वनवास अथवा जिनदीक्षा लेना भी एक निमित्त कारण है। अन्य मुक्ति के कारणों के सद्भाव होने पर उसकी भी आवश्यकता होती है। कोई-कोई बीमार औषधि सेवन किए बिना भी नीरोग हो सकता है, इसी कारण औषधि सेवन निरर्थक नहीं माना जाता, इसी प्रकार कोई-कोई महापुरुष बिना वनवास स्वीकार किए ही मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं अथवा गृहस्थ लिंग से सिद्ध हो जाते हैं इसलिए दीक्षा अनुपयोगी नहीं हो सकती।

प्रत्येक कार्य को सम्पन्न करने के लिए निमित्त और उपादान कारणों की आवश्यकता है। मुक्ति रूप कार्य के लिए भी दोनों कारणों की विद्यमानता अनिवार्य है। मुक्ति का उपादान कारण स्वयं आत्मा है। क्योंकि समस्त कर्मों से रहित आत्मा की निष्कलंक अवस्था को ही मुक्ति कहते हैं। निमित्त कारण अनेक हैं। जिन दीक्षा आदि उसी में गर्भित हैं। अतएव तुम जैनधर्म को अनेकान्त रूप कहकर निमित्त कारण का लोप करना चाहती हो सो उचित नहीं है।

प्रिये! तुमने मोह रूपी मदिरा पी रखी है, अतएव तुम्हें वस्तु का स्वरूप विपरीत भास रहा है। मोह ने तुम्हारी बुद्धि को उतना ही मलिन बना दिया है कि वह यथार्थ स्वरूप को नहीं देख पाती। इसी कारण तुम कुहेतु दे रही हो। जिसे तुम सुख समझ रही हो वह मंदिर के ऊपर फहराती हुई ध्वजा के समान सर्वथा अस्थिर है, सारहीन है। विष मिले हुए पकवान के समान परिणाम में अत्यन्त वेदनाकारी है। वह खाते समय भले ही भला जान पड़े, किन्तु खाने के बाद उसका फल अत्यन्त भयंकर होता है। संसारी जीव इस पथ्य को नहीं समझते अज्ञान के वश होकर वे सुख की प्राप्ति के लिए सतत चेष्टा करते हैं,पर अन्त में दुःख पाकर फिर भी बिलबिलाने लगते हैं। जैसे मछली जिह्वा इन्द्रिय के वशीभूत होकर आटे के लिए कांटे पर जाती है, पर अन्त में अपने प्राणों से भी हाथ धो बैठती है, यही दशा भोगाभिलाषी जीवों की है। तलवार की तीखी धार पर लगे हुए मधु को चाटने में क्षण भर के लिए मिठास का आभास होता

है, पर जीभ कट जाने की वेदना कितनी उग्र होती है।

संसार के मिथ्याज्ञानी प्राणी अनादि काल से विषयजन्य कष्ट भोगते आ रहे हैं। लेकिन आश्चर्य है कि अब तक न तो उन्हें जरा सी तृप्ति हो पाई है और न वे विषयों की आकांक्षा का ही त्याग करते हैं। अपने जीवन का समस्त भाग विषय-सुख की प्राप्ति में लगाकर भी अणुमात्र सुख उनके पल्ले नहीं पड़ता। विषयों की गुलामी करने में धर्म-साधना की ओर उनकी रुचि नहीं होती। किसी ने यथार्थ कहा है-

जन्ममृत्युजरानलदीपितं, जगदिदं सकलमपि विलोक्यते।
तदपि धर्ममति विदधाति नो, रतमना विषयाकुलितो जनः।।

अर्थात् सभी लोग यह देख रहे हैं कि यह संसार जन्म, मरण और जरा रूपी अग्नि से जल रहा है, फिर भी विषयों में आसक्त, उन्हीं में अपना मन लगाने वाला मनुष्य धर्म में बुद्धि नहीं लगाता है।

सचमुच इस जीव ने विषय-सुख के लिए जितने प्रयत्न अनादि काल से लेकर अब तक किए हैं उनसे हजार गुने कम प्रयत्न यदि आत्मिक सुख के लिए किए होते तो इसे अनन्त सुख अनन्तकाल के लिए प्राप्त हो गया होता और सभी प्रकार के दुःखों से सदा के लिए छुटकारा मिल गया होता। मगर आत्महित के लिए जीव प्रयत्न नहीं करता, यह सब महामोह की विकट विडम्बना है।

मरणमेति विनश्यति जीवितं द्युतिरपैति जरा परिवर्धते।
प्रचुरमोहपिशाचवशीकृतस्तदपि नात्महिते रमते जनः।।

अर्थात् मरण नजदीक-नजदीक आ रहा है जीवन का सारा नाश हो रहा है, प्रतिक्षण आयु क्षीण होती जा रही है, ज़वानी नदी के वेग के समान चली जा रही है, बुढ़ापा बढ़ता जाता है, तो भी भयंकर मोह रूपी पिशाच के वश में पड़ा हुआ यह मनुष्य आत्मकल्याण में रुचि नहीं रखता। यह कितने परिताप का विषय है?

संसारी जीव अपने जीवन का अन्त समीप आता देखकर भी नहीं चेतता है। अमुक कार्य करना है, अमुक से लेना है, महल बनवाना है, हाथी-घोड़ा खरीदना है, पुत्र का विवाह करना है, पौत्र का मुँह देखना है, इत्यादि

उपाधियों में पड़ा रहता है। वह सब कुछ जानता हुआ भी यह नहीं सोचता-

सकललोकमनोहरणक्षमाः, करणयौवनजीवितसम्पदः।
कमलपत्रपयोलवचञ्चलाः, किमपि नं स्थिरमस्ति जगत्त्रये॥

तात्पर्य यह है कि चेतन और अचेतन सभी वस्तुओं की सभी अवस्थाएँ नाशवान हैं। जिनकी इन्द्रियाँ सारे संसार का मन हरण करने में समर्थ हैं, जिनका यौवन असाधारण सौन्दर्य से मंडित होता है, जिनकी सम्पत्ति और जीवन को देखकर जगत् चकित रह जाता है, जिनकी सम्पदा चक्रवर्ती के समान होती है। वे सब पुरुष भी क्षण भर में इसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं जैसे कमल के पत्ते पर पड़ी हुई पानी की बूँद नीचे गिर जाती है। सच, संसार में तीन लोक में एक भी ऐसी अवस्था नहीं है जो स्थिर रहती हो। (क्रमशः)

जीवन की पुस्तक

डॉ. रमेश 'मंयक'

केवल पुस्तक मूल्यवान पढ़ने, समझने,
और ज्ञानाचरण करने वालों के लिए
जीवन-अनमोल
केवल सद्विचारों की सीढ़ियाँ चढ़ने,
बहुजन हितार्थ धरोहर बनने वालों के लिए,
जीवन की पुस्तक में से सद्गुणों को पढ़ पायेंगे
मानवता-मार्ग के पथिक बनकर
जीवन-मंगलमय बनायेंगे
तो ठीक,अन्यथा,
पुस्तक को रद्दी कहकर, जीवन को बोझ मानकर
कुंठा और निराशा को सहकर
असफलता के गर्त में
गिरते ही चले जायेंगे, फिर-कैसे उठ पायेंगे?

-बी-8, मीरा नगर, चितौड़गढ़-312001(राज.)
फोन : 01472-246479, 9461141489(मोबाइल)

उपन्यास (१३)

भाई-बहन

उपाध्याय श्री केवलमुनि जी म.सा.

पूर्ववृत्तः- निर्मला और सोमदत्त एक दूसरे को आपबीती सुना रहे थे। उसी बातचीत में छोटे बच्चे के सम्बन्ध में निर्मला द्वारा पूछने पर सोमदत्त ने वन में मिलने से लेकर सारा घटना क्रम सुना दिया। साथ में यह भी बताया कि छः माह के इस शिशु का आकार, रूप आदि तुम जैसा है, इस बात ने उसके मन में अपने शिशु के प्रति किसी षड्यन्त्र होने का विचार पैदा कर दिया। दूसरे दिन दासी का रहस्य न खोलने के कथन ने इस षड्यन्त्रकारी विचार को अधिक पुष्ट कर दिया। एक दिन परपुरुष से रानी निर्मला के अनुचित सम्बन्ध होने की बात राजा तक पहुँची तो वह तत्काल पिछवाड़े की कोठरी में गया जहाँ रानी निर्मला झरोखे में खड़े होकर अपने भाई से बातें कर रही थी। क्रोधित राजा द्वारा प्रत्यारोप करने पर रानी ने अनुचर भेजकर पर पुरुष को बुलवाने की बात कही। आश्चर्य चकित होकर राजा सोचने लगा, तभी रानी ने कहा....

"इस समय आप इतना ही विश्वास कर लीजिए कि मैंने आपके पुत्र को जन्म दिया है किसी कुत्ते के पिल्ले को जन्म नहीं दिया है।"

"यह रहस्य मेरी समझ में नहीं आया।" राजा का क्रोध अब जिज्ञासा में बदल चुका था।

निर्मला ने दृढ़ स्वर में कहा-"नाथ ! मैंने भी यह निश्चय कर लिया है कि आज सारा रहस्य आपके सामने प्रगट कर दूँगी। साक्ष्य के साथ सब कुछ बता दूँगी। आप इस पुरुष को बुलाइये तो सही, सारा रहस्य आपके समक्ष प्रगट हो जायेगा।"

दृढ़ता से सभी प्रभावित होते हैं। राजा रूपसेन पर भी प्रभाव पड़ा। वे निर्मला को अपने निजी कक्ष में ले गये और अनुचर भेजकर उस किशोर युवक को बुलवाया। सोमदत्त हाथ में बच्चा लेकर राजा के सामने आ खड़ा हुआ। राजा ने सोमदत्त पर गहरी दृष्टि डाली। फिर निर्मला से मिलान किया- बिल्कुल एक-सी छवि।

निर्मला ने परिचय दिया- "स्वामी ! यही मेरा भाई है। इसी को खोजने के

लिए मैंने आप से आग्रह किया था और आपने वचन भी दिया था, खोजा भी था, लेकिन मिला नहीं।''

राजा को विश्वास हो गया कि यह किशोर निर्मला का भाई ही है। ग्यारह वर्ष के सोमू को देखकर पर-पुरुष का विचार तो उसके मन-मस्तिष्क से उड़ गया। कुछ क्षण तक चकित दृष्टि से देखकर राजा ने पूछा- ''रानी, मुझे यह विश्वास तो हो गया कि यह तुम्हारा बिछड़ा भाई ही है और इसी से तुम बातें किया करती हो। लेकिन इसकी आयु तो अभी 11 वर्ष की ही है फिर इसकी गोदी में यह बच्चा ! यह रहस्य क्या है ?''

''यही तो रहस्य है नाथ ! जिस पर से आज मुझे परदा उठाना है। आप बच्चे को गौर से देखिये, स्वयं समझ जायेंगे यह किसका पुत्र है।'' निर्मला के शब्द थे।

राजा के संकेत पर सोमदत्त आगे बढ़ा। उसने बच्चा राजा के हाथों में दे दिया। राजा ने देखा तो देखता ही रह गया-बच्चा बिल्कुल निर्मला का प्रतिरूप था। राजा को विश्वास हो गया। यह मेरा ही पुत्र है जिसे निर्मला ने जन्म दिया है। राजा ने सोमदत्त से पूछा- ''यह बच्चा तुम्हे कब और कहाँ मिला ?''

सोमदत्त ने सब कुछ सच-सच बता दिया।

पुत्र-प्राप्ति से राजा रूपसेन के मुख पर मुस्कुराहट आ गई- ''लो रानी ! अब तुम अपना पुत्र सँभालो।..... नहीं, नहीं मैं भूल गया-हमारे पुत्र को सँभालो।'' और राजा ने बच्चा निर्मला को दे दिया। बच्चे को देखते ही निर्मला का मातृत्व उमड़ पड़ा। बच्चे को प्यार करने लगी। राजा काफी देर तक माता-पुत्र के मिलन को देखकर आनन्दित होते रहे। फिर सोमदत्त से बोले- ''हमारे ऊपर तुम्हारा बहुत अहसान है। तुमने हमारे पुत्र के प्राण बचाकर बहुत उपकार किया है।''

सोमदत्त अभी खड़ा ही था। राजा रूपसेन बोले- ''अभी तक तुम खड़े ही हो, बैठो। अब तो हमारा तुम्हारा संबंध बहुत ही घनिष्ठ बन गया है।''

सोमदत्त राजा द्वारा संकेतित आसन पर बैठ गया।

राजा कुछ क्षण चिन्तन में लीन हो गये। निर्मला से पूछा- ''रानी ! यह सब कैसे हुआ ? हमारा पुत्र राजमहल से वन में कैसे पहुँच गया ? कौन ले गया इसे ?''

निर्मला ने बताया- ''नाथ ! प्रसव-पीड़ा से मैं मूर्च्छित हो गई थी। उस समय अकेली गंगा ही मेरे पास थी। मेरी समझ में तो यह सारे छल के काम रानियों के इशारे पर गंगा ने किये हैं।''

राजा ने गंगा को तुरन्त बुलवाया और गंगा को कड़क कर कहा- ''गंगा ! तूने

इतना साहस कैसे किया ? राजकुमार को वन में छोड़ आई। तुझे मेरे दण्ड का भी भय नहीं लगा।''

गंगा ने राजा के पैर पकड़ लिए। आँसू बहाते हुए कहा- ''अन्नदाता ! मैं अपराधिनी जरूर हूँ। लेकिन मुझसे भी बड़ी अपराधिनी हैं-आपकी रानियाँ जिन्होंने मुझे यह कुकृत्य करने को विवश कर दिया।''

अब राजा का कोप रानियों पर टूटा। तुरन्त अनुचर को आदेश दिया- ''रानियों को इसी समय यहाँ बुलाओ। मैं उनको कठोरतम दण्ड दूँगा।''

अनुचर चला गया।

निर्मला ने राजा से प्रार्थना की- ''नाथ ! गुस्सा छोड़िये। रानियों को दण्ड न दीजिए।''

''यह तुम क्या कह रही हो रानी?'' चकित होकर राजा रूपसेन बोले-''उन रानियों को क्षमा दिलवा रही हो, जिन्होने इतना बड़ा षड्यन्त्र किया। तुम्हें इतना दुःख दिया। नहीं रानी ! यह नहीं हो सकता। अपराधी को तो दण्ड मिलेगा ही।''

निर्मला ने राजा के पैर पकड़ लिए- ''नाथ ! पुत्र-प्राप्ति की खुशी के अवसर पर उन्हें दुःखी न करें। उन्हें क्षमा कर दें। तनिक भी दण्ड न दें।''

''अरे, यह क्या कर रही हो? मेरे पैर तो छोड़ो।'' राजा ने कहा।

निर्मला बोली- ''मैं आपके पैर तभी छोडूँगी, जब आप रानियों को क्षमा करने का वचन दे देंगे।''

''अच्छा अच्छा बाबा ! अब तो छोड़ो।'' राजा हँसने लगे।

राजा रूपसेन और निर्मला का यह वार्तालाप आती हुई रानियों ने भी सुन लिया। वे लज्जा और संकोच से गड़ गईं। पति के चरणों में गिर गईं। आँसू बहाकर अपने अपराध की क्षमा माँगने लगी। राजा ने कहा- ''रानियों ! एक तुम हो और दूसरी ओर यह नई रानी निर्मला है। देखो, दोनों में कितना अन्तर है। विचार करो।''

रानियों ने भी निर्मला से क्षमा माँगी। अपने दुष्कृत्य पर पश्चात्ताप प्रगट किया। आँसुओं में सबका मनोमालिन्य धुल गया। स्नेह की सरिता बहने लगी।

राजा रूपसेन ने पुत्र-प्राप्ति का बहुत बड़ा उत्सव मनाया। युवराज पाकर सारी प्रजा प्रसन्न हो उठी।

राजा ने सोमदत्त की शिक्षा की उचित व्यवस्था की, उसे गुरुकुल में भेज दिया। अपना पुत्र बड़ा हुआ, शिक्षा योग्य वय का हुआ तो उसे भी कलाचार्य के पास

भेजा।

रानी निर्मला के दिन अब सोने के थे। उसका बहुत आदर-सम्मान था। अपने उदारता गुण के कारण वह बड़ी रानियों से भी बड़ी बन गई थी। वे भी उसका बहुत आदर करती थीं। राजा की तो वह प्राणों से प्यारी थी।

एक दिन निर्मला महल के गवाक्ष में बैठी, राज-मार्ग पर आते-जाते मनुष्यों को और नगर की रौनक देख रही थी। अचानक ही उसकी दृष्टि दो भिक्षुओं पर ठहर गई। उनमें से एक भिक्षुक पुरुष था और दूसरी थी स्त्री।

रानी निर्मला ने गौर से देखा- ये तो मेरे माता-पिता हैं। बड़े मलिन वेश में हैं। इनकी यह दशा कैसे हो गई ? मैंने घर छोड़ा था तब तो धन-धान्य सब कुछ था। वह घर प्रत्येक दृष्टि से सम्पन्न था।

निर्मला ने सेवक को आदेश दिया- ''उन दोनों भिखारियों को बुला लाओ।''

भिक्षुक बड़ी आशा से आये। सोचा-रानीजी बुला रही हैं तो अच्छी प्राप्ति होगी, सरस भोजन मिलेगा, अच्छे वस्त्र भी मिल जायें तो कोई आश्चर्य नहीं। दोनों आकर खड़े हो गये।

रानी निर्मला ने पूछा- ''तुम दोनों को इस आयु में भीख माँगनी पड़ रही है। क्या तुम्हारा कोई पुत्र नहीं है जो तुम्हें सहारा दे सके?''

यह प्रश्न सुनते ही वृद्ध भिखारी की आँखें भर आई, बोला- ''अब तो कुछ भी नहीं है रानीजी।''

''अब तो क्या मतलब ? क्या पहले तुम सम्पन्न थे ? सम्पन्न थे तो विपन्न कैसे हो गये ?'' निर्मला ने कुरेदा।

वृद्ध आँखों में आँसू भरकर बोला- ''हाँ रानीजी ! हम पहले संपन्न थे। सब कुछ था हमारे पास- धन-धान्य, पुत्र-पुत्री भरा पूरा परिवार था। लेकिन एक पाप ऐसा बन गया कि सब कुछ बरबाद हो गया। सुखी गृहस्थी उजड़ गई। घर अग्नि में स्वाहा हो गया।''

''कैसा पाप ! विस्तार से बताओ। ऐसा तुमने क्या कर दिया कि इस विपन्न दशा को पहुँच गये।'' निर्मला ने और कुरेदा।

''मेरी कहानी बहुत ही दुःख भरी है ! आप सुनकर क्या करेंगी ? आपका भी दिल दुःखी हो जायेगा।'' अपनी राम कहानी सुनाने से वृद्ध ने बचना चाहा।

"कहने से दुःख हलका हो जाता है। तुम संकोच मत करो। सब कुछ सुना दो।" निर्मला ने आग्रह किया।

वृद्ध ने अपनी जीवन गाथा सुनाई- "मेरी पहली पत्नी थी कमला। उसके दो बच्चे थे- बड़ी पुत्री थी उसका नाम निर्मला था। उससे छोटा पुत्र था, उसका नाम सोमदत्त था। कमला मुझे बीच मझधार में छोड़कर स्वर्ग सिधार गई तो मित्रों के आग्रह से मैंने विमला से दूसरा विवाह कर लिया। यह मेरी दूसरी पत्नी विमला नाम की है।"

वृद्ध ने अपने साथ खड़ी स्त्री की ओर संकेत किया और फिर अपनी राम कहानी आगे बढ़ाई-

"इसके भी एक लड़का और एक लड़की दो संतानें हुईं। इसने मेरी पहली पत्नी के पुत्र-पुत्रियों को बहुत दुःख दिया, मारा-पीटा और यहाँ तक कि घर से निकाल दिया।"

"और तुम मूक दर्शक बने रहे ?" निर्मला बीच में ही पूछ बैठी।

"हाँ ऐसा ही समझिये रानीजी ! उस समय इसके रूप का नशा मुझ पर हावी था। मैं इसी का पक्ष लेकर बच्चो को डाँटता था। यही मेरा दोष या पाप था।"

"बच्चों को जब इसने निकाल दिया तब तुमने उन्हें ढूँढा भी नहीं। यह तो खैर विमाता थी लेकिन तुम तो पिता थे।" निर्मला ने मन की भड़ास निकाली।

वृद्ध भिखारी बोला- "यह तो मेरी सबसे बड़ी भूल थी। फिर बच्चों को ढूँढकर लाने से लाभ क्या था ? यह उन्हें और दुःख देती।"

"खैर, वे चले गये तो चले गये। पर इस नई पत्नी के बच्चों का क्या हुआ? क्या उन्होंने तुम्हे सहारा नहीं दिया और लात मारकर घर से बाहर निकाल दिया ?" निर्मला ने पूछा।

वृद्ध ने बताया- "एक दिन हम दोनों किसी काम से बाहर गये थे। घर में दोनों बच्चे खेल रहे थे। न जाने कैसे घर में आग लग गई। घर के साथ-साथ दोनों बच्चे भी भस्म हो गये और तभी से हम दोनों अपने किये पापों का फल इस रूप में भोग रहे हैं।"

"वे जीवित रहते तो सहारे का प्रश्न उठता।" वृद्ध यह कहकर चुप हो गया।

निर्मला ने सहानुभूति दिखाई- "तब तो तुम्हारे साथ बहुत बुरा हुआ।"

वृद्ध और वृद्धा क्या कहते, चुप रह गये। लेकिन उनके आँसू बह रहें थे। पिता के आँसुओं का प्रभाव रानी निर्मला पर भी पड़ा। उसका दिल भर आया। आँखों से आँसुओं का प्रवाह उमड़ पड़ा।

चकित होकर वृद्ध ने कहा- "रानीजी ! आपकी आँखों में आँसू ! हम तो अपनी विपत्ति और भूलों से त्रस्त होकर रोते हैं। लेकिन आप क्यों रो रही हैं ? शायद हमारी दुःखभरी कहानी सुनकर आपका भी दिल भर आया है। इसीलिए मैंने कहा था कि हमारी दुःखभरी कहानी सुनकर आपका भी दिल दुःखी हो जायेगा। खैर, हमें हमारी हालत में रहने दें। हम अनजानों के लिए अपने कीमती मोती न बहायें।"

आँसू पौंछकर रानी निर्मला बोली- "आप दोनों मेरे लिए अनजान नहीं हैं। मैं आपको अच्छी तरह जानती हूँ। आप मेरे पिता यज्ञदत्त हैं और ये मेरी माता हैं।"

निर्मला आगे बोली- "पिताजी ! आप मुझे भूल गये, किन्तु मैं आपको कैसे भूल सकती हूँ। मैं आपकी पुत्री निर्मला हूँ।"

पुत्री राजरानी बन गई है, यह जानकर यज्ञदत्त को हर्षमिश्रित आश्चर्य हुआ। लेकिन विमाता विमला काँप गई- अब यह रानी बन गई है, मेरे अत्याचारों का बदला लेगी। मुझे क्या दण्ड देगी.....?

निर्मला ने माता को भयाक्रान्त देखा तो बोली- "माताजी ! आप मन में तनिक भी विचार न करें। आपका तो हम दोनों बहन भाइयों पर बहुत उपकार है। यदि हम दोनों को घर से न निकालती; तो मैं रानी कैसे बनती और मेरा भाई सोमदत्त राजपुरोहित का पद कैसे पाता।"

निर्मला के इन शब्दों से विमाता विमला का भय निकल गया। भरे हृदय से उसने अपराधों की क्षमा माँगी- "बेटी ! मैंने बचपन में तुम दोनों बहन-भाइयों को बहुत दुःख दिये। मेरे उन सब अपराधों को क्षमा कर दें।"

निर्मला ने कहा- "माताजी, बीती बातों को भूल जाइये। उन्हें याद करने से कोई लाभ नहीं है। समझ लीजिए दुःख की अंधियारी रात समाप्त हो गई। मंगल प्रभात हो गया। अब आप दोनों यहीं सुख से रहिए।"

राजा रूपसेन से कहकर निर्मला ने अपने माता-पिता को प्रचुर धन दिलवाकर, उनके सभी सुख सुविधाओं की व्यवस्था करवा दी।

एक बार आचार्य धर्मघोष का आगमन नगर में हुआ। उनका प्रवचन राजा रूपसेन, रानी निर्मला, सोमदत्त, यज्ञदत्त, विमला आदि सभी ने सुना। उनके प्रवचन से प्रभावित होकर सभी जिनधर्म के अनुयायी बने और जीवन में वास्तविक शान्ति प्राप्त की।

(समाप्त)

नारी-स्तम्भ

गर्भस्थ बालिका के हृदयोद्गार

श्री जितेन्द्र चौरड़िया 'प्रेक्षक'

अबला नहीं मैं सबला हूँ, अब ये दुनिया को दिखाने दे।
मुझे गर्भ में मार न माता, अब दुनिया में आने दे।।

लड़के और लड़की में आखिर, क्या है अन्तर माता?
जो लड़की तुझको लगती खारी, बस ! लड़का ही सुहाता।
दो कदम लड़कों से आगे, बढ़कर मुझे दिखाने दे,
मुझे गर्भ में मार न माता, अब दुनिया में आने दे।।१।।

शिक्षित-साहसी-निडर बनकर, मैं करूँगी श्रम का दान,
राजनीति में आगे बढ़कर, मैं करूँगी राष्ट्र - उत्थान।
इन्दिरा गाँधी बनकर तू, मुझको भी देश चलाने दे,
मुझे गर्भ में मार न माता, अब दुनिया में आने दे।।२।।

जन्म धरती पर लेकर मैं, सैर करूँ आकाश की,
खोज करूँ अंतरिक्ष में जाकर, उद्भव और विनाश की।
कल्पना चावला बनकर मुझको, अंतरिक्ष यान उड़ाने दे,
मुझे गर्भ में मार न माता, अब दुनिया में आने दे।।३।।

सात स्वरों का रहस्य जानकर, मैं अभ्यास करूँगी,
मधुर-कंठ से गायन कर, संगीत का स्वाद चखूँगी।
लता मंगेशकर बनकर मुझे, दुनिया को गीत सुनाने दे,
मुझे गर्भ में मार न माता, अब दुनिया में आने दे।।४।।

राजनीति-विज्ञान-कला, अभिनय-व्यवसाय के क्षेत्र बड़े,
ऐसा नहीं इनमें से कोई, जहाँ न मेरे कदम पड़े।
सानिया-ऐश्वर्या बन मुझको, देश की शान बढ़ाने दे,
मुझे गर्भ में मार न माता, अब दुनिया में आने दे।।५।।

गर्भ तेरा संतान की, उत्पत्ति का स्थान है,
गर्भपात कर क्यों इसको, तू बना रही श्मशान है?
लिंग-भेद की भ्रांति तेरे, मन से मुझे मिटाने दे,
मुझे गर्भ में मार न माता, अब दुनिया में आने दे।।६।।

लड़की समझ तेरी माँ ने, गर तुझको मार दिया होता,
बता ऐ माता! कैसे तूने, दुनिया में जन्म लिया होता?
हत्या कर मेरी निज माता के, दूध को मत लजाने दे,
मुझे गर्भ में मार न माता, अब दुनिया में आने दे।।७।।

ऋषभदेव से प्राप्त कला का, जग को ज्ञान कराया था,
ब्राह्मी-सुन्दरी बनकर मैंने, 'अ आ इ ई...'सिखाया था।
चन्दना बन महावीर के 'प्रेक्षक', अभिग्रह पूर्ण कराने दे,
मुझे गर्भ में मार न माता, अब दुनिया में आने दे।।८।।

- 'समर्थ भवन' खींचन - 342308, जिला-जोधपुर (राज.)

चिन्तन-कण

श्री प्रेमचन्द कोठारी

❁ ऐसा कोई मानव नहीं है जिसकी परछाई नहीं होती हो। अर्थात् मानव के साथ सुख-दुःख, हानि-लाभ, सम्मान-अपमान, उतार-चढ़ाव आदि परछाइयाँ अवश्य रहती हैं। साधक इन परछाइयों को मात्र उदय भाव समझकर स्वीकार करता है व समभाव बनाये रखता है जबकि असाधक इन परछाइयों से प्रभावित होकर अनंत संसार बढा लेता है। महापुरुष फरमाते हैं कि दिन होता है तो रात भी होती है, अमावस्या की अंधेरी रात होती है तो पूर्णिमा की चान्दनी भी होती है। अतः प्रत्येक परिस्थिति में जीवन बुद्धि न समझकर उसे साधना की सामग्री समझना चाहिये।

❁ प्रत्येक श्वास में प्रत्येक क्षण में साधक को सजग रहना चाहिए। धन्ना अणगार, चण्डकौशिक, चन्दनबाला आदि सजग रहकर ही कृतकृत्य हो गये।

प्रेरक-चिन्तन

दो शब्द काफी हैं राह दिखाने के लिए

श्री आर.प्रसन्नचन्द चोरड़िया

'जिनवाणी' में परम श्रद्धेय आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का प्रवचन पढ रहा था, उसमें दो पंक्तियाँ पढ़ी तो लगा कि जीवन को बदलने के लिए, अपने स्वभाव को समभाव में लाने के लिए दो पंक्तियाँ ही काफी हो सकती हैं। पंक्तियाँ हैं :-

"कितना त्याग सका पर-निन्दा,
कितना अपना अन्तर देखा।"

हम सामायिक करते समय समभाव में रहते हैं तब हम आँखें बन्द कर निर्मल भावना के साथ चिन्तन करें कि हमारे कषाय कितने पतले हुए हैं, कितने कम हुए हैं? हमारे क्रोध का पारा कितना नीचे उतरा है? राग-द्वेष, ईर्ष्या की आग को हमने समभाव रूपी जल के छिड़काव से कितना शीतल किया है? कई वर्षों से चलने वाले मनमुटाव को हमने कितना मिटाया है? किसी के बढ़ते हुए यश से आहत होकर सहन नहीं कर पाने से किसी की इज्जत को उछालने में, उसे हर वक्त नीचा दिखाने में हमने कितना योगदान दिया है? साजिश रचने में क्या भूमिका निभाई है?

किसी की परेशानी में, तकलीफ में उनको सान्त्वना का सहारा देने में कितने कदम आगे बढ़ाये हैं? हमने अपने संघ व समाज के सेवाकार्यों में कितना सहयोग दिया है? कितना साथ निभाया है, इस पर सोचना है।

हम हमेशा दूसरों के दोष ढूँढ़ने में लगे रहते हैं, पर हमने अपने अन्तर्मन को देखने की कितनी कोशिश की है? इस पर चिंतन करना है।

अगर आज तक चिन्तन नहीं किया हो तो आज से ही क्रोध का, पर-निन्दा का, चुगली खाने का त्याग करें। इस संसार में बिखरे हुए आनन्द को दूसरों में भी बाँटने का प्रयास करें। ईमानदारी के साथ सत्य-पथ पर कदम बढ़ायें।

बीत गया सो बीत गया, उसकी चिन्ता अब क्या करना?
अब जो बाकी है जीवन-घट, उसमें तो अमृत भरना!

अगर हम शांत मन से, विनम्रता व सरलता से मन में गहरे उतरेंगे तो सभी सवालों का जवाब अपने आप मिल जायेगा। हमें सही मार्ग नज़र आने लगेगा।

हम व्याख्यान सुनकर कुछ प्राप्त करते हैं तो वह सोने में सुहागा बनेगा, अन्यथा किसी ने कहा है:-

किसे सुनायें तेरी गजल गली में, उनके मकान के दरवाजे बन्द हैं।

-52, कालाथी पिल्लई स्ट्रीट, चेन्नई-79

मृत्यु - रहस्य

श्री कस्तूर चन्द जैन 'अष्टम'

हम जानते हैं मृत्यु से बच पायेंगे हरगिज नहीं।
किन्तु फिर भी भूल जाते, भोग-लिप्सा में कहीं।।
जीवन पड़ा है अभी तो, हम सोचते रहते यही।
मृत्यु-भय को टालने में, देर नहीं करते कहीं।।

मृत्यु की घड़ी नहीं निश्चित, तैयार सदा ही रहना है।
बीमारी, रोग, महामारी, दुर्घटना मात्र बहाना है।।
बैठे-बैठे कर रहे भजन, देखो फिर भी मर जाना है।
मृत्यु निश्चित है जीवन में, ध्रुव सत्य नहीं टल पाना है।।

मृत्यु से बचने का उपाय, मृत्यु रहस्य को पाना है।
अनिवार्य सामना करना है, हँसते-हँसते मर जाना है।।
स्थिर बुद्धि, स्थिर प्रज्ञा, स्थिर प्रज्ञ अब बन जाना है।
नश्वर शरीर तो जायेगा, पर मृत्यु से बच पाना है।

मृत्यु की तिथि नहीं होती, बन अतिथि कभी आ सकती है।
धोखा नहीं देती मृत्यु कभी, यह वचन भंग नहीं करती है।।
सोते, उठते, बैठे, जगते, खाते, चलते आ सकती है।
यह इंतजार नहीं करवाती, यह कभी दया नहीं करती है।।

आधि, व्याधि, शोकादि,रोग, चिंता सबको हर लेती है।
ईर्ष्या, रोगादि, क्लेश, मोह, मृत्यु सबको ढक देती है।
यह तेरा और यह मेरा है, सब भेद खत्म कर देती है।
यह मृत्यु बड़ा महोत्सव है, मत कर चिंता सुख देती है।

-नृसिंह कॉलोनी, खेरली, जिला-अलवर (राज.)

युवा-स्तम्भ

नशे की अंधी सुरंग से बचकर रहें

श्री कैलाश जैन, एडवोकेट

बदलते जीवन-मूल्यों के इस दौर में जब समूची पीढी को हम नशे की अंधी सुरंग में दाखिल होते देखते हैं तो देश के भयावह भविष्य की कल्पना मात्र से सिहर उठते हैं। सैकड़ों सुलगते सवाल यक्ष प्रश्न की मांनिद सामने आ खड़े होते हैं। क्या नशे में मदहोश लड़खड़ाती यह युवा पीढी ही राष्ट्र के भावी भविष्य की कर्णधार होगी? अधमुंदी पलकों में उनींदे सपने लिये क्या यही नौजवान इस महान् राष्ट्र की अनमोल विरासत को संभालने जा रहे हैं? क्या सचमुच हमारा युवा वर्ग, जो देश का भविष्य भी है और वर्तमान भी, नशे की इन बीहड पगडंडियों पर भटककर पथ भ्रष्ट हो जाएगा?

यह सही है कि मादक पदार्थों की तस्करी, अवैध व्यापार और उनसे बनने वाली नशीली वस्तुओं की रोकथाम का प्रश्न आज एक विश्वव्यापी समस्या का रूप धारण कर चुका है। किंतु यह हमारी मौलिक समस्या नहीं है, बल्कि युवाओं में नशेबाजी की यह लत अन्य पश्चिमी मूल्यों की तरह पाश्चात्त्य देशों से आयातित समस्या है, जो अब तक अत्यन्त भयावह स्वरूप धारण कर चुकी है। यह उन्मुक्त मानसिकता और हमारी तनावग्रस्त संस्कृति की विकृत उपज है।

पश्चिमी देशों में मादक द्रव्यों के सेवन के दुष्परिणाम साठ के दशक से दृष्टिगोचर होने लगे थे। इनसे अमेरिका सर्वाधिक प्रभावित रहा। अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति रॉनाल्ड रीगन ने 24 जून 1982 को बेहद अफसोस के साथ कहा था कि हमारे देश में बारह से सतरह वर्ष की आयु-वर्ग के किशोरों में एक तिहाई से अधिक मादक द्रव्यों के निरन्तर सेवन के आदी हो चुके हैं।

परेशानी तब शुरू होती है, जब यह धीमा व मीठा जहर तीसरी दुनिया के भूखमरी से बेहाल, गरीब व विकासशील देशों के युवाओं की रगों में उतरने लगता है। जिस देश के पास अपने नागरिकों को सामान्य मानवीय सुविधाएं उपलब्ध कराने तक के साधन न हों, यदि उस देश की जवानी नशे के धुएं में डूब कर मदहोश हुई जाए, तो देश का भविष्य क्या होगा?

अफीम, चरस, हेरोइन, ब्राउन शुगर, स्मैक आदि एक ही ज़हर के अलग-अलग नाम हैं। यह वही ज़हर है, जिसने बड़ी तीव्र गति से देश की युवा पीढी की नसों में दौड़ना शुरू कर दिया और देखते-देखते एक समूची पीढी को पथ भ्रष्ट कर दिया। यह ज़हर हमारी सरहदों में कैसे दाखिल हुआ? दरअसल इसके लिए हम सब उत्तरदायी हैं। समाज के तथाकथित जिम्मेदार वर्ग के निहित स्वार्थों ने इस ज़हर को देश की धरती पर पांव जमाने की सहूलियतें मुहैया करवाई और देखते-देखते एक मामूली हवा के झोंके ने लाइलाज तूफान की शक्ल अख्तियार कर ली। एक ऐसा तूफान, जिसने देश की तरुणाई को दांव पर लगा दिया है। कुछ जानकार लोगों के मुताबिक यह नशीली आंधी सातवें दशक में आध्यात्मिक शांति की खोज में पश्चिम से आए हिप्पियों के साथ इस मुल्क में दाखिल हुई। लम्बे कुर्ते, बड़ी-बड़ी जटाओं, मैले कुचेले कपड़ों और खुद से बेखबर ये मदहोश पश्चिमी युवा अपने साथ हेरोइन, मैंड्रेक्स, एल.एस.डी. जैसी नशीली वस्तुओं का रैला लेकर आये, और धीरे-धीरे देश का युवा इन विदेशियों के नक्शे कदम पर चल निकला और डगमगाता-लड़खड़ाता आज भी चला जा रहा है। बेमंजिल, बेमकसद जाने कहाँ?

आज भारत के कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में दुनिया का कोई ऐसा नशा नहीं है, जो इस्तेमाल में न लाया जाता हो। कॉलेजों की बात तो जाने दीजिए, मामला अब स्कूल स्तर तक आ पहुँचा है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् की रिपोर्ट कहती है कि दिल्ली के कॉलेजों में 24.7 प्रतिशत छात्र मादक द्रव्यों के सेवन के आदी हैं, जबकि अंग्रेजी माध्यम के पब्लिक स्कूलों में यह प्रतिशत 32.2 है। नारी-समानता के युग में छात्राएं भी अधिक पीछे नहीं हैं। लगभग 18.3 प्रतिशत छात्राएं नशे की लत की शिकार हैं। एक मार्केट रिसर्च के मुताबिक बंबई के कॉलेजों के नशेबाज लड़के-लड़कियों में 55 प्रतिशत लड़कियाँ हैं। जबलपुर में किए गए एक शोध से यह तथ्य सामने आया है कि कॉलेज जाने वाले लगभग 40 प्रतिशत लड़के तथा 19 प्रतिशत लड़कियाँ मादक द्रव्यों का सेवन करती हैं।

आंकडे शायद पूरी कहानी नहीं कहते। मादक द्रव्यों के सेवन की यह आदत महानगरों और शहरों को अपने पांवों तले रौंदती गाँव-कस्बों तक आ पहुँची है। छोटे-छोटे कस्बों तक में बदहाल युवा स्मैक के धुएं में अपने तनाव, अपनी कुंठाएं और अपनी हताशा उडाने की कोशिश करते देखे जा सकते हैं। मादक द्रव्यों

की आसान उपलब्धता ने इस रोग को पांव फैलाने के और अधिक अवसर मुहैया कर दिए हैं। नुक्कड की चाय की होटल, पान, सिगरेट की दुकान, पार्क, सिनेमाघरों आदि जगहों पर आसानी से मिल जाने वाला यह ज़हर इस देश के जवान खून में अपनी मंजिलें खोज रहा है। हर क्षेत्र में एक माफिया रैकेट पूरी मुस्तैदी के साथ इस नितान्त अमानवीय कृत्य में अपनी सम्पूर्ण व्याप्त व्यावसायिकता से सक्रिय है। अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर मादक द्रव्यों की तस्करी से लेकर आम उपभोक्ता को सप्लाई तक यह समूचा कार्य-व्यापार अत्यन्त सुव्यवस्थित और सुसंपादित है। नशे के ये सौदागर अपने धंधे के प्रति इतने समर्पित एवं ईमानदार हैं कि उन्हें न तो कोई अपराध-बोध महसूस होता है और न ही उन्हें देश के भविष्य से कोई सरोकार है। भारत, पाकिस्तान, भूटान, नेपाल, बंगलादेश जैसे दक्षिण एशियाई देशों में मादक पदार्थों की यह विषबेल हर तरफ फैल चुकी है। प्रतिवर्ष अरबों रूपए मूल्य के मादक पदार्थों की तस्करी होती है। सीमा शुल्क विभाग, तट कर या अन्य शासकीय एजेंसियां जितना पकड़ा हुआ माल हर साल दिखाती हैं, उससे दस गुना अधिक आपसी तालमेल से 'यथास्थान' पहुँच जाता है।

अब प्रश्न यह है कि आखिर लोगों को इन नशीले पदार्थों की लत लगती कैसे है? दुनियाभर में हुए सर्वेक्षणों से यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि युवा वर्ग इनका खास तौर पर आदी होता जा रहा है। उसकी मुख्य वज़ह है-इन पदार्थों के सेवन से प्राप्त होने वाला क्षणिक आनंद, आवेग और उत्तेजना। प्रारम्भ में युवा महज जिज्ञासा व अति उत्साह के तहत इनका सेवन करता है, जो कालान्तर में आदत का रूप धारण कर लेता है। मादक द्रव्यों का निरन्तर सेवन आदमी को निष्क्रिय तथा पलायनवादी बना देता है। व्यसनी व्यक्ति शारीरिक रूप से असमर्थ, मानसिक रूप से अक्षम तथा भावनात्मक स्तर पर असंतुलित होकर सामाजिक दृष्टि से अनुपयोगी एवं अप्रासंगिक होकर रह जाता है। हताशा, कुंठा, तनाव व संत्रास के कारण ऐसे व्यक्ति का आचरण हिंसक हो उठता है।

वस्तुतः नशाखोरी एक बहुआयामी समस्या है जिसके सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक और व्यक्तिशः पहलुओं की पड़ताल किया जाना आवश्यक है। मादक द्रव्यों के आदी युवक-युवतियों से लिए गए विभिन्न साक्षात्कारों में कई दिलचस्प व असामान्य बातें सामने आई हैं। लम्बे समय से मादक द्रव्यों का सेवन कर रही एक कुशाग्र बुद्धि छात्रा ने अपनी पीड़ा इन शब्दों में

ज़ाहिर की- ''नशे में हम अपनी पीड़ा को भूलने की कोशिश करते हैं। वह पीड़ा हमारे अस्तित्व की पीड़ा है। हम जो हैं, वह होने की पीड़ा है। हम जो होना चाहते हैं, वह नहीं होने की पीड़ा है। हमारे अकेलेपन की पीड़ा है। यदि नशा, हमें कुछ देर के लिए ही सही, इन पीड़ाओं से मुक्ति दिलाता है, तो इसमें बुरा क्या है।

भीड़ भरी जिन्दगी के बीच यदि युवा मन खुद को अकेला, असहाय और असमर्थ पाकर नशे की पगडंडियों की ओर मुड़ने लगता है तो क्या इसके लिए हम सब और हमारी समूची सामाजिक-व्यवस्था उत्तरदायी नहीं है? हकीकतों और सपनों के दरमियान, अंतहीन फासला, निरर्थक शिक्षा-प्रणाली, संवेदन शून्य व्यवस्था, युवा हो रहे शरीर की नसों में भरती बेनाम आग, हर तरफ रेगिस्तान के मानिंद पसरा अकेलापन, अनिश्चित भविष्य का भय और चारों ओर से उभरते निराशा के घनघोर अंधेरों का सैलाब.....। यदि हमने, हमारी व्यवस्था ने और हमारे समाज ने युवाओं को यही कुछ दिया है, तो नशेबाजी के इस अंधे युग में हो रहे तमाम जुर्मों के लिए उन युवाओं के साथ हम भी सह अभियुक्त हैं। पल्ला झटक कर हम अपनी जिम्मेदारियों से बरी नहीं हो सकते।

नशे के आदी हर युवक/युवती की व्यक्तिगत पृष्ठभूमि में कई विसंगतियाँ जुड़ी होती हैं। नशा मुक्ति का अभियान सबसे पहले पारिवारिक स्तर पर शुरू हो सकता है। युवामन को एवं उसकी कुंठाओं को समझने का प्रयास कीजिए। उसे भरोसा दिलवाएं कि वह अकेला नहीं है, और उसका होना ही अपने आप में महत्त्वपूर्ण है। शिक्षा प्रणाली में भी छात्रों की रचनात्मक व सृजनात्मक प्रतिभा का पूर्ण सम्मान करने की व्यवस्था होनी चाहिए। सरकार और सामाजिक व्यवस्था युवाओं को उनके सुनिश्चित भविष्य के लिए आश्वस्त करे। केवल कड़े सरकारी कदमों द्वारा इस समस्या के समाधान की बात नहीं की जा सकती। मूलतः इस समस्या की जड़ें हमारे सामाजिक और आर्थिक पर्यावरण में समाहित हैं, जो पहले ही काफी दूषित हो चुका है। दीर्घकालीन दृष्टिकोण से समस्या के सभी पहलुओं को बहुत सोच-विचार पूर्वक और समझदारी से सुलझाना होगा।

युवाओं से निवेदन है कि वे स्वयं किसी प्रकार का नशा नहीं करें तथा अपने मित्रों एवं परिचितों को भी नशे की लत में पड़ने से बचाएँ।

- 34, बंदा रोड़, भवानी मण्डी- 326502 (राज.)

प्रेरक-प्रसंग

साल का बड़ा इनाम

डॉ. दिलीप धींग

वर्ष 2008 के पहले महीने की पहली तारीख को नगर परिषद् उदयपुर की ओर से 23वें तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ जन्म-कल्याणक के उपलक्ष्य में 3 जनवरी, 2008 के लिए अगता (अहिंसा दिवस) घोषित किया गया था। अहिंसा दिवस के इस प्रयास का विवरण जिनवाणी ने फरवरी 2008 के अंक में 'नये साल का इनाम' शीर्षक से प्रकाशित करके मुझे प्रोत्साहित किया।

'नये साल के इनाम' के साथ ही मैंने 'साल के बड़े इनाम' का संकल्प मन में संजो लिया था। मैंने भावना भाई कि पार्श्वनाथ जन्म-कल्याणक (पौष वदी दशमी) के परम पुनीत दिवस पर पूरे राजस्थान में अहिंसा दिवस घोषित हो। सामायिक के दौरान पार्श्वनाथ स्तुति के वक्त भी अहिंसा दिवस की भावना मेरे मन में बसी रही। मैंने अपने प्रयासों को निरन्तर बनाए रखा। पार्श्वनाथ जन्म-कल्याणक के पावन अवसर पर अहिंसा दिवस की आवश्यकता और महत्ता प्रतिपादित करने वाले पत्र कई संगठनों के माध्यम से मैंने राज्य शासन व प्रशासन को भिजवाये।

इस क्रम में अगस्त के प्रथम सप्ताह में जयपुर से मेरे मित्र का फोन आया- "पार्श्वनाथ जयन्ती पर अहिंसा दिवस के लिए आप द्वारा तैयार पत्र मुझे तुरन्त फैक्स कर देंगे तो कार्य आगे बढ़ जाएगा।" मैं दफ्तर के सारे कार्य छोड़कर वर्षा में भीगता हुआ घर पहुँचा। 'अहिंसा-पत्र' लेकर फैक्स की दुकान पर गया और उसे फैक्स कर दिया। मित्र सचिवालय में था, उसने उचित कार्यवाही के लिए पत्र सम्बन्धित अधिकारी को दे दिया। वह अधिकारी पत्र में वर्णित तथ्यों से पूर्ण सन्तुष्ट था।

माँ अहिंसा की सेवा के लिए मेरे प्रयास को सफलता मिली। 11 सितम्बर, 2008 को राजस्थान सरकार के स्वायत्त शासन विभाग की ओर से इस आशय का आदेश (क्रमांक पं 24(ग) 13/नियम/डी एल बी/89/5585-5768) जारी

कर दिया गया। आदेश के अनुसार **२१ दिसम्बर २००८ (पौष कृष्ण १०) को पार्श्वनाथ जयन्ती के उपलक्ष्य में प्रदेश के समस्त नगरीय क्षेत्रों में पशु-पक्षी वध व मांस-मछली आदि की बिक्री पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा तथा सभी बूचड़खाने पूरी तरह बन्द रहेंगे।** इस प्रकार अहिंसा और करुणा के अवतार भगवान् पार्श्वनाथ का जन्म कल्याणक पूरे राज्य में पशुवध निषेध दिवस के रूप में मनाया जाएगा।

मैंने इस सफलता को 'साल का बड़ा इनाम' इसलिए कहा कि पूर्व की सफलताएँ उदयपुर नगर या जिले तक सीमित थीं, लेकिन पार्श्वनाथ जयन्ती पर पूरे राज्य के लिए घोषित यह अहिंसा दिवस सबके लिए बड़ा इनाम ही है। देश की स्वतन्त्रता के बाद पार्श्वनाथ जयन्ती पर राजस्थान में संभवतः यह प्रथम अहिंसा दिवस घोषित हुआ है। स्वतन्त्रता से पूर्व जैन दिवाकर मुनि श्री चौथमलजी की प्रेरणा से मेवाड़ रियासत तथा अन्य अनेक रियासतों व ठिकानों की ओर से पार्श्वनाथ जन्म कल्याणक पर अहिंसा दिवस घोषित थे और उनका पूरी तरह से अनुपालन होता था। हम हमारे प्रयासों से इस अहिंसा दिवस का समुचित अनुपालन सुनिश्चित करें और यह अगता निरन्तर बनाए रखें।

इस वर्ष पौष वदी दशमी (21-12-08) हेतु अन्य राज्यों के अहिंसा व पर्यावरण प्रेमियों से भी अनुरोध है कि वे जन-जन की आस्था के केन्द्र भगवान् पार्श्वनाथ के पावन जन्म-कल्याणक पर अपने-अपने राज्य या क्षेत्र में अहिंसा दिवस घोषित करवाएँ। ऐतिहासिक तीर्थंकर पुरुषादानीय भगवान् पार्श्वनाथ की इससे बड़ी स्तुति और क्या हो सकती है?

-उमराव सदन, 53, डोरे नगर, उदयपुर-02 (राज.)

हम किसी मंदिर में जाकर दो-पाँच लाख का चंदा बोल पाएँ कि न बोल पाएँ, कोई चढ़ावा बोल पाएँ कि न बोल पाएँ, पर अगर रास्ते से गुजर रहे हैं और कोई घायल पंछी मिल गया तो, उस घायल पंछी को, उस घायल कबूतर को दो बूँद पानी भी दे दिया, तो ऐसा करना उस समय किसी अस्पताल बनाने की तरह पुण्य अर्जित करना होगा। उस घायल पंछी को हमारे लाखों-करोड़ों के दान की आवश्यकता नहीं है।

-संत श्री चन्द्रप्रभ

शिक्षा

मूल्यांकन योग्यता का

आचार्य विजयरत्न सुन्दरसूरि

आज शिक्षा की पूरी संरचना ही
स्मृति आधारित हो गयी है।
आप संस्कारी हैं
शिक्षा में उसकी कोई कीमत नहीं।
आप सत्त्वशील हैं
शिक्षा का उससे कोई संबंध नहीं।
आप सद्गुणी हैं
शिक्षा को उसकी जरा भी जरूरत नहीं।
आप भले ही उद्धत हो,
आप भले हि निर्माल्य हो,
और आप भले ही दुर्गुणी हो, परंतु यदि आपकी स्मृति अगर तेज है
तो साल भर में आप जो भी पढ़े हैं,
उसकी अधिकाधिक उलटी यदि परीक्षा के समय
उत्तरपत्र पर कर सकते हो
तो ही आप होशियार हैं,
तो ही आप जीवन में आगे बढ़ने की प्रतिभा रखते हैं और
तो ही आप विद्वत् जनों की श्रेणी में शामिल हो सकते हैं।
चाहे भले ही कभी-कभी ऐसी आवाजें उठती हों कि
मार्क्स को योग्यता का मापदंड न माना जाए
परंतु हकीकत तो यही है यहाँ
शिक्षा की दुनिया में 'मार्क्स' ही मूल्यांकन
का मापदंड बनकर बैठे हैं।
हम उस व्यक्तित्व का इंतजार करें जो
इस सिस्टम के सामने आवाज उठायेगा।

प्रेरक-प्रसंग

रत्नों की माला से जब टूटी मूर्च्छा

श्री जशकरण डागा

जिनशासन की महती प्रभावना करने वाले आचार्यों में एक प्रसिद्ध आचार्य श्री रत्नाकरसूरि हुए हैं, जो श्रुतधर और विशिष्ट विद्वान् थे। एक बार आपका चातुर्मास गुजरात के रायखण्ड बड़ली गाँव में हुआ। वहाँ के श्रावकों का परिग्रह के प्रति विशेष रुझान देखकर, आपने अपरिग्रह धर्म पर प्रवचन देना प्रारम्भ किया। आपने परिग्रह का अर्थ, स्वरूप, भेद, प्रभेद एवं परिणाम बताकर, इसे महापाप एवं दुर्गति का कारण बताया। आपके प्रवचन सटीक और विद्वत्ता पूर्ण होते हुए भी, श्रोताओं में परिग्रह की मर्यादा करने या परिग्रह को अल्प करने के भाव जाग्रत नहीं हो पाये। उसी ग्राम में एक कुण्डलिया नामक श्रावक भी रहता था। वह एक शास्त्रीय गाथा , जो अपरिग्रह से सम्बन्धित थी, के अर्थ का मर्म समझने, नित्य आपकी सेवा में उपस्थित होता। वह निरन्तर एक माह तक आचार्य श्री से इस गाथा के सम्बन्ध में पूछता रहा। किन्तु आचार्य श्री शास्त्रज्ञ एवं विद्वान् होते हुए भी उसे समझाकर संतुष्ट नहीं कर सके। अन्ततः आचार्य रत्नाकरसूरि ने गंभीरता से विचार किया कि मेरे 'परिग्रह' पर विशद विवेचन सहित प्रवचन देने पर भी श्रोताओं पर उसका प्रभाव न पड़ने का तथा कुंडलिया श्रावक द्वारा पूछी गयी एक सामान्य शास्त्रीय गाथा का अर्थ बता कर उसे संतुष्ट न कर सकने का क्या कारण है?

उन्होंने गहन चिंतन कर अंतर निरीक्षण किया और पाया कि इसका दोष या खामी का कारण श्रोता या कुंडलिया श्रावक नहीं, वरन् मेरा वस्तु के प्रति मूर्च्छा भाव है। मेरी चर्या कथनी के अनुरूप नहीं है। वैसे तो मैं परिग्रह का सर्वथा त्याग कर, अणगार हुआ हूँ, किन्तु मेरे पास जो एक रत्नों की माला है तथा जिसे सुरक्षित रखने हेतु रजोहरण में छिपाकर रखता हूँ, उसके प्रति मेरी मूर्च्छा छूटी नहीं है। आचार्यप्रवर की अंतर चेतना जाग्रत हुई और तत्क्षण उन्होंने रत्नों की माला को तोड़कर फेंक दिया। माला के प्रति जो मूर्च्छा भाव था वह समाप्त हो गया।

दूसरे दिन पुनः 'परिग्रह' पर पूर्ववत् प्रवचन दिया। किन्तु आचार्य की वाणी में आज एक विशेष ओज था, उनके शब्द अन्तर से प्रस्फुटित हो रहे थे। परिणामतः

अनेक श्रोताओं ने प्रवचन से प्रभावित हो, परिग्रह की मर्यादा ही नहीं की वरन् श्रावक के बारह व्रत भी ग्रहण किए। उसी दिन कुण्डलिया श्रावक को जब उसके द्वारा पुनः-पुनः पूछी गई गाथा का भी विवेचन कर सुनाया, तो वह भी संतुष्ट हो, धन्य-धन्य कह उठा। यह सब प्रभाव और चमत्कार एक रत्न की माला के त्याग रूप अपरिग्रह का और भाव रत्नमय ज्ञान-दर्शन-चारित्र की शुद्ध आराधना का था। तदनन्तर, आचार्य रत्नाकरसूरि ने अपने अपरिग्रह महाव्रत में लगे दोषों की शुद्ध अंतःकरण से आलोचना, निंदना, गर्हा कर तदनुसार प्रायाश्चित्त लिया। उन्होंने फिर प्रभु की भक्ति से पूरित आत्म आलोचना युक्त एक विशिष्ट काव्य **'रत्नाकर पच्चीसी'** (पंचविंशतिका) की संस्कृत में रचना की, जो आत्मार्थियों के लिए बड़ी उपयोगी है और आज भी भक्तामर काव्य की तरह लोक प्रिय है।

-डागा सदन, संघपुरा, टोंक- 304001 (राज.)

नमस्कार महामन्त्र

❋ संसार में मंत्र तो अनेक हैं, परन्तु 'महामंत्र' एकमात्र नवकार मंत्र है। जैसे किसी भी देश में सांसद अनेक होते हैं, मंत्री भी अनेक होते हैं, परन्तु प्रधानमंत्री अथवा राष्ट्रपति सम्पूर्ण देश में एक ही होता है। इसको महामंत्र कहने के अनेक कारण हैं।

❋ यह महामंत्र केवल 14 पूर्व का ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण द्वादशांगी का सार है। समस्त द्वादशांगी में सारभूत तीन तत्त्वों (देव, गुरु, धर्म) का तथा उनकी आराधना से मिलने वाले स्वर्गापवर्ग का फल वर्णित है। उपर्युक्त चारों बातों का सार संक्षिप्त में इस महामंत्र में पूर्णतया समाविष्ट है। इसके प्रथम दो पदों में देव तत्त्व तथा अन्तिम तीन पदों (तीसरा, चौथा, पांचवें) में गुरु तत्त्व तथा छठे पद में सर्वश्रेष्ठ धर्म तत्त्व पूर्णतः निहित है। इसकी चूलिका के चार चरणों में देव, गुरु, धर्म की आराधनाओं का सम्पूर्ण फल विस्तृत रूप से मौजूद है। सातवें पद से सम्पूर्ण पापों का समूल नाश होना (सव्व पावप्पणासणो) निर्दिष्ट है तथा आठवें और नवमें पद में समस्त संसार के सर्वोत्कृष्ट (अनुत्तर विमान के) सुख तथा उससे भी ऊपर शाश्वत मोक्ष सुख समाया हुआ है।

❋ इसके प्रथम पाँच पदों के 35 अक्षर हैं जो वर्तमान के 24 तीर्थंकर भगवन्तों तथा 24 वें तीर्थंकर (भ. महावीर) के 11 गणधरों के सूचक हैं।

- संकलयिता- श्री नवरतन डोसी,
21ई/329, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड, जोधपुर (राज.)

कविता

संयम भावना

श्री प्रसन्नचन्द बाफना

हम जो थे निगोद में एकेन्द्रिय के वेष में,
ज्ञान भी अज्ञान था आत्म के प्रदेश में,
सिद्धों की उपकृति से भव्यता को पा गये,
अकाम निर्जरा करते-करते आज हम यहाँ आ गये,
हमारी आत्मा को मोह अज्ञान ने जकड़ा है।
राग-द्वेष का बन्धन इसमें तगड़ा है।
पुण्यवानी श्रेष्ठ थी जो मनुष्य भव में आ गये
साथ में जिनवाणी का योग भी हम पा गये।
भाग्य था हमारा गुरु हीरा के चरणों में आ गये
अपने जीवन के सुन्दर लक्ष्य को हम पा गये
आपकी कृपा से गुरुवर संयम मार्ग हम पाएँ
दे दो आशीर्वाद ऐसा श्रेणी हम चढ़ जाएँ
संसार की मोह माया में हम भटकते रहे,
कर्म के झंझटों में हम अटकते रहे।
मुक्ति का मार्ग शीघ्र समझ में आ जाये
शीघ्र आत्मा अपने लक्ष्य को पा जाये
कृपा हो भगवन् आपकी, आशीर्वाद मिल जाये।
हमारे जीवन में संयम का फूल खिल जाये,
शीघ्र हो हमारी दीक्षा यहीं.....गुरुवर हमारी भावना
कर दो मेहर गुरुवर मुक्तिनगर हमें है जाना,
भावों से ग्रहण करेंगे हम दीक्षा,
शुद्ध निर्दोष प्राप्त करेंगे हम भिक्षा,
अपने लक्ष्य को गुरुवर शीघ्र हमें पाना है
दुबारा जन्म लेकर संसार में नहीं आना है
आपके गुणों की भगवन् हम पर ऐसी मेहर हो,
फिर संसार मार्ग का हम पर ना कोई असर हो।

विश्वास है हमारे मन को, आशीर्वाद आपका पायेंगे
प्राप्त करके ज्ञान आपसे शीघ्र ही आगे बढ़ जायेंगे।

-1, नेहरू पार्क, जोधपुर (राज.)

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

मुक्तक

डॉ. दिलीप धींग

(१)

यह आपका छोटा-सा प्रयास है।
बड़े परिणाम का पूरा विश्वास है।
आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना,
स्वधर्मी वात्सल्य का पवित्र एहसास है।

(२)

उजड़ी धरा पर एक उपवन लगाया है।
सींचने का अनूठा अवसर आया है।
हस्ती छात्रवृत्ति के छात्र-छात्राओं ने,
व्यसन और फैशन को दूर भगाया है।

(३)

सहयोग के लिए आगे आइये।
ज्ञान का एक दीया जलाइये।
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति योजना का,
लाभ उठाकर आनन्द पाइये।

चतुष्पदियाँ

डॉ. दिलीप धींग

देने वाले निरभिमानी, पाने वाले हैं आभारी।
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति में, ज्ञानदान की महिमा न्यारी।।

आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति से, शिक्षित-संस्कारित नई पीढ़ी।
जीवन के असली मकसद को, पाने की है स्वर्णिम सीढ़ी।।

-53, डोरे नगर, उदयपुर-313002 (राज.)

बाल-स्तम्भ

सनत्कुमार

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित कहानी को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 10 दिसम्बर 2008 तक श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.) के पते पर प्रेषित करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरूणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-२५० रुपये, द्वितीय पुरस्कार-२०० रुपये, तृतीय पुरस्कार- १५० रुपये तथा १०० रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार।

प्राचीन समय में कुरु देश के हस्तिनापुर में अश्वसेन नाम के राजा थे। उनकी प्रिय पत्नी महारानी ने चौदह स्वप्नों से सूचित एक पुत्र-रत्न को जन्म दिया, जिसका नाम सनत्कुमार रखा गया। बाल्यकाल पूरा होने पर सनत्कुमार ने अपने बालसखा महेन्द्रसिंह के साथ सम्पूर्ण कलाओं का अध्ययन किया।

सनत्कुमार बाल्यकाल से ही क्रीड़ाप्रिय और महत्त्वाकांक्षी थे, अतः एक बार अश्वक्रीड़ा के प्रसंग में वनविहार को निकल पड़े। अन्य कतिपय राजकुमार भी उनके साथ थे, किन्तु तेजगति के कारण उनका अश्व सबसे आगे बढ़कर वन में अदृश्य हो गया। सनत्कुमार के बहुत प्रयत्न करने पर भी अश्व नहीं रुका और वे वन में अकेले पड़ गये।

जब राजकुमार के भटकने की खबर राजा को लगी, तो उन्होंने पता लगाने के लिए महेन्द्रसिंह को भेजा। कुमार की खोज में महेन्द्रसिंह को कोई निश्चित पता नहीं था। वह मार्ग उन्मार्ग का खयाल किये बिना वर्षों वन में भटकता रहा। खोजते-खोजते एक दिन वह एक सरोवर के पास पहुँचा। वहाँ उसे मधुर गीत की आवाज सुनाई दी। उत्कण्ठावश महेन्द्रसिंह ने आगे बढ़कर देखा, तो विविध रमणियों के बीच उसे सनत्कुमार बैठा दिखाई दिया।

महेन्द्रसिंह आश्चर्यमग्न होकर सोच ही रहे थे कि उन्हें बन्दीजनों के द्वारा-''महाराज सनत्कुमार की जय हो'' की आवाज सुनाई पड़ी। दृढ़ निश्चय से प्रसन्न होकर महेन्द्रसिंह आगे बढ़ा। सनत्कुमार ने भी उठकर उनका सत्कार किया और पूछा-''मित्र! अकेले इस भयानक जंगल में कैसे चले आये? और आपको मेरा पता कैसे लगा? तथा मेरे वियोग में मेरे माता-पिता क्या कर रहे हैं?''

महेन्द्रसिंह ने सारी बातें कह सुनायीं तथा राजकुमार से भी पूछा-''इतने दिनों तक तुम कहाँ, कैसे ठहरे और इस प्रकार की ऋद्धि कैसे प्राप्त की?'' सनत्कुमार ने इन प्रश्नों का उत्तर अपने मुख से न देकर खेचर पुत्र के द्वारा दिलावाया कि अटवी में घूमते कुमार को विविध यातनाएँ सहन करनी पड़ीं। पुण्यबल से उन्हें वनवासी यक्ष और विद्याधर का स्नेह प्राप्त हुआ। उसी के प्रभाव से ये आज दिव्य ऋद्धि सम्पदा भोग रहे हैं।

समय पाकर महेन्द्रसिंह ने कुमार से हस्तिनापुर चलकर माता-पिता को आश्वस्त करने की प्रार्थना की। कुमार ने भी ससमारोह हस्तिनापुर की ओर प्रयाण किया।

माता-पिता ने अत्यन्त हर्ष से पुत्र को गले लगाया और उसकी बढ़ती हुई पुण्यकला को देखकर प्रसन्नता प्रकट की। कुछ दिनों के बाद महाराज अश्वसेन ने सनत्कुमार का राज्याभिषेक कर स्वयं स्थविरों के पास प्रव्रज्या ग्रहण कर ली।

सनत्कुमार ने पूर्वकृत पुण्योदय से थोड़े ही समय में चौदह रत्न और नव निधियों की प्राप्ति करली, साथ ही उन्हें छः खण्ड की साधना के पश्चात् चक्रवर्ती का पद भी प्राप्त हो गया। शक्रेन्द्र ने अवधिज्ञान से पूर्वजन्म में अपने पद पर जानकर वैश्रमण देव के द्वारा उनका राज्याभिषेक करवाया।

एक दिन देवपति इन्द्र अपने सिंहासन पर बैठे हुए थे कि सहसा ईशान कल्पवासी कोई देव वहाँ आ पहुँचा। आने वाले की प्रभा को देखकर सौधर्म कल्पवासी देव चकित और निष्प्रभ हो गये और उन्होंने आगतदेव के चले जाने पर सौधर्मेन्द्र से पूछा-''स्वामिन्! इस देव की दीप्तिमान प्रभा का कारण क्या

है?'' यह सुनकर इन्द्र बोले-''इसने पूर्वभव में आयम्बिल वर्द्धमान तप की अखण्ड साधना की है। उसी के प्रभाव से इसको इतनी प्रभा प्राप्त हुई है।''

देवों ने पुनः इन्द्र से पूछा -''क्या कोई दूसरा भी इस प्रकार की दीप्ति वाला है?'' इन्द्र ने कहा-''हस्तिनापुर के कुरुवंश में चक्रवर्ती सनत्कुमार का ऐसा रूप है कि कोई भी देव उसकी तुलना में नहीं आ सकता।''

देवसभा के दो देव विजय और वैजयन्त इन्द्र के इस कथन से सहमत नहीं हुए और उन्होंने इसकी परीक्षा करनी चाही। दोनों ने ब्राह्मण का रूप बनाया और घूमते हुए राजमहल के आगे आकर द्वारपाल से राजदर्शन की इच्छा प्रकट की। आदेश मिलने पर वे सनत्कुमार के समीप गये। उस समय उनके शरीर पर मालिश हो रही थी। सनत्कुमार के सुन्दर रूप को देखकर दोनों देव चकित हो गये और उन्होंने इन्द्र के कथन की सराहना की। उन दोनों के चलते समय महाराज ने पूछा-'' कैसे आये हैं?'' तो उन्होंने कहा- '' महाराज! आपके रूप की प्रशंसा सुनकर उसे देखने आये।'' इस पर महाराज बोले-''अभी क्या देखते हो जब शृंङ्गार कर राज सभा में बैठूँ तब आना।'' देवों ने वैसा ही किया। महाराज के राजसभा में विराजमान होते ही ब्राह्मण रूपधारी देव वहाँ आये और क्षण-भर देखकर अपनी गर्दन हिलाने लगे। महाराज ने इसका कारण पूछा तो वे बोले-''महाराज घड़ी भर पहले का आपका वह सौन्दर्य अब नहीं रहा। अब तो बदन में कीड़े उत्पन्न हो गये हैं।'' जब सनत्कुमार ने थूकपात्र में थूका तो उसमें कीड़े ही कीड़े नज़र आने लगे। महाराज सनत्कुमार शरीर की इस परिवर्तनशीलता, विरूपता और नश्वरता को देखकर विरक्त हो गये और विपुल राज्यवैभव को त्याग कर स्थविरों के पास दीक्षित हो गये। स्त्री-रत्न और सभी नरेन्द्र एवं अधिकारी वर्ग छः महीने तक पीछे चलते रहे, पर महाराज ने नज़र उठाकर भी उनकी ओर नहीं देखा।

सर्वप्रथम दो दिन तपस्या के पारणक में उनको बकरी के दूध की छाछ प्राप्त हुई और उसी का पारणा किया। दूसरे दिन फिर बेले का तप स्वीकार कर लिया। इस प्रकार अनवरत तप और नीरस आहार से उनके शरीर में काश, श्वास एवं ज्वरादि रोग उत्पन्न हो गये, मगर सात सौ वर्षों तक रोग पीड़ा सहन करते हुए भी वे उग्र तप करते ही रहे। फलतः उनको कई लब्धियाँ प्राप्त हो

गयी, फिर भी उन्होंने रोग का कोई प्रतिकार नहीं किया।

कुछ समय के बाद अनेक देव उनकी सेवा में आये और बोले-"हम रोग मिटाते हैं।" सनत्कुमार मौनभाव से खड़े रहे। बारम्बार देवों के द्वारा रोग मिटाने की बात सुनकर आप बोले-"भाई! आप सब कौनसा रोग मिटाना चाहते हैं शरीर का या कर्म का? इस पर देवों ने कहा-"महामुने! हम तो शरीर का ही रोग मिटा सकते हैं।"

देवों की बात सुनकर मुनि ने अपनी अंगुली में थूक लगाकर अङ्गों में लगाया और वह देखते ही देखते काँच-सा स्वच्छ एवं निर्मल बन गया। मुनिराज की महान् तपोलब्धि और सहनशक्ति को देखकर देवगण आश्चर्यचकित हो गए और मुनि के चरण वन्दन कर यथेष्ट स्थान की ओर चले गये। सनत्कुमार मुनि चाहते तो सारा रोग उसी समय नष्ट कर सकते थे, लेकिन वे शरीर के रोग को नहीं भव के रोग को मिटाने में लगे हुए थे।

महामुनि सनत्कुमार अन्तसमय समाधि-पूर्वक काल करके तीसरे स्वर्ग में इन्द्ररूप से उत्पन्न हुए और वहाँ से महाविदेह में जन्म लेकर कर्मक्षय करके सिद्ध, बुद्ध और मुक्त होंगे। धन्य है ऐसे तपोधन महात्मा को।

तपस्या से बड़ी-बड़ी लब्धियाँ सिद्ध हो जाती हैं। चक्रवर्ती सनत्कुमार ने भी 'खेलोसहि लब्धि' तपस्या के प्रभाव से प्राप्त की थी। उसके प्रभाव से कुष्ठयुक्त शरीर को अंगुली स्पर्श से कुन्दन सा दिव्य और मनोहर बना दिया। वस्तुतः यह तपस्या का ही चमत्कार है कि घिनौना से घिनौना शरीर भी कनकावदात बनकर स्पृहणीय बन जाता है।

प्रश्न :-

1. सनत्कुमार की खोज किसने और कैसे की?
2. समास विग्रह कीजिये-
   ससमारोह, पुण्योदय, देवपति, इन्द्ररूप, कर्मक्षय, तपोधन।
3. विजय और वैजयन्त देव ने सनत्कुमार की कैसे परीक्षा ली ?
4. सनत्कुमार को विरक्ति किस कारण से हुई?
5. भव का रोग क्या है? समझाइये।

6. विलोम शब्द लिखिये-

उन्मार्ग, मधुर, वर्द्धमान, नीरस, भोग, निर्मल, घिनौना।

7. चक्रवर्ती किसे कहते हैं?

बाल-स्तम्भ [सितम्बर-२००८] का परिणाम

जिनवाणी के सितम्बर-२००८ के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'देना भी सीखें' कहानी के प्रश्नों के उत्तर ३५ बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, उनमें से प्रतियोगिता के विजेता इस प्रकार हैं। पूर्णांक २५ में से दिये गये हैं-

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-२५०/-	पारूल खींवसरा-जोधपुर	२५
द्वितीय पुरस्कार-२००/-	अंजली जैन-हिण्डौन	२४
तृतीय पुरस्कार-१५०/-	कानन जैन-जोधपुर	२३.२५
सान्त्वना पुरस्कार-१००/-	सिद्धार्थ जैन-मालपुरा	२३
	कमलेश कुमार जैन-पादरू	२३
	सेजल भंसाली-जलगांव	२३
	रौनक डाकलिया-जोधपुर	२३
	उत्कर्ष जैन-हिण्डौन	२३

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित सत्साहित्य प्राप्ति के अन्य स्थान निम्न प्रकार हैं:-

(1) श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, **जोधपुर-342001,** (राजस्थान) फोन 0291-2624891 **(2) Shri Navratan ji Bhansali,** C/o. Mahesh Electricals, 14/5, B.V.K. Ayangar Road, **BANGALORE-560053** (Karnataka) Ph. : 080-22265957, Mob. : 09844158943 (3) **Shri B. Budhmal ji Bohra,** C/o. Bohra Syndicate, 53, Erullapan Street, Sowcarpet, **CHENNAI-79** (Tamilnadu) Ph. : 044-26425093, Mob.: 09444235065 **(4) श्रीमती विजया जी मल्हारा,** रतन सागर बिल्डिंग, कलेक्टर बंगला रोड, चर्च के सामने, **जलगाँव-425001** (महाराष्ट्र) फोन : 0257-2223223

स्वाध्यायी-परिचय

चिन्तनशील, विनयशील वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री नरपतराज जी भण्डारी

शान्त, सौम्य, सेवाभावी, संघ-हित चिन्तक वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री नरपतराज जी भण्डारी का जन्म जोधपुर निवासी सुश्रावक श्री धनराज जी भण्डारी की धर्मपत्नी श्रीमती नकलकंवर जी की रत्नकुक्षि से दिनांक 3 दिसम्बर 1940 को जोधपुर शहर में हुआ।

आपने जोधपुर में ही में बी.कॉम एवं एल.एल.बी. की उपाधि प्राप्त की। शिक्षा के अनन्तर आप राजस्थान राज्य विद्युत विभाग में एकाउण्ट ऑफिसर के पद पर कार्यरत रहे। आपकी धार्मिक रुचि बचपन से ही थी। अतः आपने सामायिक, प्रतिक्रमण आदि कण्ठस्थ कर लिए। आचार्यप्रवर पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. की प्रेरणा से सन् 1963 में आपने स्वाध्याय संघ की सदस्यता ग्रहण की। तब से आप पर्वाधिराज पर्युषण में अमूल्य सेवा से जिनवाणी की प्रभावना कर रहे हैं। 50 से भी अधिक वर्षों तक आपकी पर्युषण सेवा का भारत के विभिन्न क्षेत्रों को लाभ मिला है।

आपकी संघ-सेवा, संत-सेवा एवं स्वधर्मि-सेवा अनुकरणीय है। प्रत्येक व्यक्ति को संघ से जोड़ने में आप सक्रिय भूमिका निभाते हैं। आपने अपनी प्रेरणा के माध्यम से कई नये स्वाध्यायी तैयार किये हैं, जिनवाणी एवं स्वाध्याय शिक्षा के सदस्य बनाये हैं। जब भी कोई धर्म के प्रति रुचिशील व्यक्ति आपके सम्पर्क में आता है तो आप उसे प्रेरणा करने के साथ-साथ स्वाध्याय संघ कार्यालय के सम्पर्क सूत्र देकर उसे स्वाध्याय संघ से जुड़ने हेतु निवेदन करते हैं। आप नये लोगों को धर्म से जोड़ने एवं उन्हें निःशुल्क साहित्य उपलब्ध कराने में उत्साही रहे हैं।

अभी तक आपने रास, जलगाँव, जैतारण, बैतूल, इगतपुरी, पारसोली, मेड़ता, खेड़तीनगर, गुडली, सिवनीमालवा, बागली, फलीचड़ा, बुरहानपुर, दरीबामाइन्स, शेन्दूर्णी, कासमपुरा, कानपुर, बड़वानी, हाट-पीपल्या, नाभा,

अलीगढ़, करही, जावरमाइन्स, चौथ का बरवाड़ा, वाघली, उमरगांव रोड, बनारस, शुजालपुर मण्डी, एदलाबाद, सनावद, बजरिया, अजीत, खण्डेला, वाकोद, कुनरातुर आदि क्षेत्रों में अपनी सेवाओं द्वारा जिनवाणी की प्रभावना की है।

आप प्रतिदिन सामायिक एवं स्वाध्याय करते रहे हैं। जमीकन्द का आप पूर्णत्याग कर चुके हैं। 45 वर्षों से आपके चमड़े की बनी वस्तुओं का त्याग है।आप खादी के वस्त्र पहनते हैं। समय-समय पर स्वाध्याय संघ द्वारा आयोजित शिविरों में भाग लेकर ज्ञानवृद्धि हेतु सदैव तत्पर रहे हैं। संघ द्वारा प्रदत्त कोई भी कार्य आप निःस्वार्थ भाव से पूर्ण करते रहे हैं। अभी आप कुछ माह से अस्वस्थ हैं।

आप स्वस्थ एवं दीर्घायु हों तथा आपका जीवन मंगलमय हो ऐसी हमारी मंगलकामना है।

स्वाध्याय : श्रुत आराधना

डॉ. लक्ष्मीचन्द जैन

1. स्वाध्याय की अनेकविध व्याख्या की जाती है, परन्तु एक परिभाषा है "श्रुत आराधना ही स्वाध्याय है।"
2. आगमों के स्वाध्याय से जीवन में संयम को पोषण मिलता है। स्वाध्याय गुणवर्धक है। आगमोक्त स्वाध्याय मुमुक्षु की पहचान है।
3. अपनी आत्मा के कल्याण के लिए शुभ से शुद्ध भावों के पोषण की आवश्यकता है, उसकी पूर्ति जिनागमों के स्वाध्याय से ही संभव है।
4. बार-बार किया गया जिनागमों का स्वाध्याय हर बार नई अनुभूतियों से परिपूर्ण होता है, अंततोगत्वा यह परिभाषा चरितार्थ होती है कि स्वयं का अध्ययन करो।
5. विधिपूर्वक जिनोक्त शास्त्राभ्यास से सूत्र, अर्थ और दोनों रूपों में भाव प्रगट होते हैं। बार-बार की अनुप्रेक्षा से अर्थ की अतल गहराई का अनुभव होता है तथा आत्मानन्द का निर्झर भीतर ही भीतर बहने लगती है।
6. आगमों के स्वाध्याय से निज स्वरूप का बोध होता है। अपने निज स्वरूप को समझाने वाले जिन-आगम ही हैं। उनका प्रतिदिन स्वाध्याय आवश्यक है।
7. स्वाध्याय से मानसिक स्वस्थता प्राप्त होती है और वैराग्य के भाव हृदयस्थ होते हैं। यह एक सबसे सरल सहज तपाचार है तथा विपुल निर्जरा का मार्ग है। स्वाध्याय पवित्र एवं अनूठी भाव साधना है। जिससे मन मंगलमय बनता है। मन ऐसा सध जाता है कि सदैव आत्म जागृति बनी रहती है।

-छोटी कसरावद (म.प्र.)

संवाद (17)

माह अक्टूबर-2008 की जिनवाणी में पूछे गये निम्नांकित प्रश्न के कतिपय उत्तर प्राप्त हुए हैं, कुछ उत्तर यहाँ प्रकाशित हैं-

प्रश्न- क्या जैन धर्म ईश्वर (God) को स्वीकार नहीं करता है? यदि वह ईश्वर को स्वीकार नहीं करता है तो 'भगवान्', 'परमपिता', 'परमात्मा' 'प्रभु' 'नाथ' आदि शब्दों का प्रयोग क्यों किया जाता है? मेरी सीमित समझ में हम सब आत्माओं से ऊपर एक परम-आत्मा है, जो निराकार, ज्योतिर्मय एवं बिन्दुस्वरूप है और वही आत्मा समय-समय पर आकर इस संसार को बोध देती रहती है। क्या यह सही नहीं है?

- मोतीचन्द नवलखा, मुम्बई

शान्तप्रकाश सत्यदास, नागदा (म.प्र.)-यदि ईश्वर का अर्थ जगन्निर्माता या जगन्नियन्ता है तो जैनदर्शन ऐसे ईश्वर को स्वीकार नहीं करता; परन्तु यदि ईश्वर का अर्थ 'समर्थ' (यथा ज्ञातुमीश्वरः अर्थात् जानने में समर्थ आदि) है तो रत्नत्रय का पालन करते हुए अष्टकर्मदल को नष्ट करने में समर्थ होने से अथवा आध्यात्मिक प्रवचनों के द्वारा प्राणियों का पथ-प्रदर्शन करने में समर्थ होने से महावीर को ईश्वर कहा जा सकता है। इसी दृष्टि से भगवान् आदि विशेषण भी उसके पर्यायवाची होने से सार्थक हैं ; परन्तु अच्छा होगा कि हम महावीर को तीर्थंकर, महामानव, महात्मा आदि विशेषण ही लगायें, जिससे कोई भ्रम न रहे।

परम आत्मा सिद्धदेव हैं, जो ज्योतिर्मय है; परन्तु बोध देने के लिए संसार में वहाँ से लौटकर नहीं आते (यद्गत्वा न निवर्त्तन्ते तद्धाम परमं मम -गीता) जहाँ से लौटकर नहीं आते, वही मेरा धाम (सिद्धशिला) है।

रामबिलास जैन, अलीगढ़ (राज.)- जैनधर्म ईश्वर को नहीं मानता। यह संसार अनादि है और अनन्त काल तक रहेगा। संसार की रचना कोई ईश्वर नहीं करता। जैन धर्म में आत्मा जब पूर्ण शुद्ध हो जाती है तो उसे परमात्मा कहते हैं और वह पुनः संसार में जन्म ग्रहण नहीं करती।

लक्ष्मीचन्द जैन, छोटी कसरावद (राज.)- हमारे जीवन का मुख्य लक्ष्य है- अपने आपको जानना। अपनी आत्मा में ही परमात्मा के सभी गुण विद्यमान हैं, उन्हें अपने कर्मों का क्षय कर प्रकट करने का पुरुषार्थ करना है। जैन धर्म ऐसे ईश्वर को नहीं मानता जो जगत् का स्रष्टा हो, किन्तु शुद्ध आत्मा को ही वह परमात्मा मानता है जो पुनः संसार में आकर मार्गदर्शन नहीं करते हैं। वे सिद्धालय में विराजमान रहते हैं।

(क्रमशः)

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

डॉ. धर्मचन्द जैन

जैन दर्शन में कारण-कार्य व्यवस्था : एक समन्वयात्मक दृष्टिकोण (काल, स्वभाव, नियति, पूर्वकृत कर्म, पुरुष या पुरुषार्थ का विवेचन)-डॉ. श्वेता जैन, ***प्रकाशक***- (1) पार्श्वनाथ विद्यापीठ, आई.टी.आई. रोड, करौंदी, वाराणसी (उ.प्र.)-221005 (2) प्राच्य विद्यापीठ, दुपाडा रोड, शाजापुर (म.प्र.) ***अन्य प्राप्ति स्थान*** - (1) डॉ. श्वेता जैन, समता कुंज, प्लॉट नं. 12/7 ए, जालम विलास स्कीम, पावटा बी रोड, जोधपुर, (2) राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर। ***पृष्ठ*** 656+60, ***मूल्य*** 600 रुपए, सन् 2008 (यह पुस्तक डॉ. श्वेता जैन के पते से मंगवाने पर 40 प्रतिशत की छूट दी जाएगी।-दूरभाष : 0291-2541052)

काल, स्वभाव, नियति, पूर्वकृत कर्म, पुरुष/पुरुषार्थ का जैन दर्शन की कारण-कार्य व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन पाँचों के समवाय को कार्य की निष्पत्ति में कारण स्वीकार किया गया है, किन्तु इनके एकान्तवाद का जैन दार्शनिकों ने खण्डन किया है। जैन दर्शन में सदसत् कारण-कार्यवाद को स्वीकार किया गया है। सिद्धसेन सूरि ने जैन दर्शन की अनेकान्तवादी दृष्टि को ध्यान में रखते हुए काल, स्वभाव आदि पाँच कारणों के समन्वय को सम्यक्त्व एवं इनके एकान्तवाद को मिथ्यात्व कहा है। कालवाद, स्वभाववाद, नियतिवाद, पूर्वकृतकर्मवाद, पुरुषवाद या पुरुषार्थवाद पर पृथक् रूप से कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होता है। इन प्राचीन विचारधाराओं के सम्बन्ध में बिखरी हुई सामग्री को जैन-जैनेतर ग्रन्थों से डॉ. श्वेता जैन ने श्रमपूर्वक एकत्र किया है तथा विश्लेषणात्मक दृष्टि से जैन दर्शन के परिप्रेक्ष्य में इनका विवेचन किया है। सात अध्यायों में विभक्त इस पुस्तक के प्रथम अध्याय में जैन दर्शन में मान्य कारण- कार्य सिद्धान्त की चर्चा की है। इसके अन्तर्गत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और भव की कारणता, षड् द्रव्यों की कारणता, निमित्त-उपादान की कारणता आदि का विचार किया गया है। द्वितीय अध्याय में कालवाद, तृतीय अध्याय में स्वभाववाद, चतुर्थ अध्याय में नियतिवाद, पंचम अध्याय में पूर्वकृत कर्मवाद, षष्ठ अध्याय में पुरुषवाद और पुरुषकार की विस्तृत चर्चा की गई है। सप्तम

अध्याय में जैन दर्शन की नय दृष्टि के अन्तर्गत पंच समवाय को सिद्ध किया गया है। इसमें आधुनिक चिन्तकों के विचारों का भी समावेश किया गया है। मूलतः यह पुस्तक डॉ. श्वेता जैन के शोध कार्य का संशोधित रूप है। पुस्तक के प्रारम्भ में डॉ. धर्मचन्द जैन द्वारा विस्तृत भूमिका लिखी गई है। यह पुस्तक शोधार्थियों, जिज्ञासुओं, चिन्तकों एवं पुस्तकालयों के लिए उपयोगी है।

चल पड़े जिधर दो डग मग में- डॉ. धर्मेन्द्र कमार कांकरिया, ***प्रकाशक*** - प्राकृत भारती अकादमी एवं सोसायटी फॉर साइन्टिफिक एण्ड एथिकल लिविंग, 13-ए, गुरु नानक पथ, मेन मालवीय नगर, जयपुर-302017 ***पृष्ठ***-163+12, ***मूल्य*** - 100 रुपये, प्रथम संस्करण - 2008

महात्मा गाँधी इस युग के महापुरुष हुए हैं। उनका अहिंसात्मक सत्याग्रह समस्त विश्व की विचारधारा में क्रान्ति का सूत्रपात करने में समर्थ रहा है। उनके जीवन के सैकड़ों, हजारों ऐसे प्रसंग हैं जो पाठकों को कोई न कोई सीख या प्रेरणा प्रदान करते हैं। डॉ. धर्मेन्द्र कुमार कांकरिया ने बापू के जीवन-प्रसंगों को आधार बनाकर यह पुस्तक तैयार की है। पुस्तक से गाँधी जी के स्वभाव, विचारधारा, दृढ़ता, सत्यनिष्ठा, निर्लोभता, निर्भयता, पर्यावरण-प्रेम आदि विविध गुणों का बोध होता है। लेखक की 'बापू के प्रेरक प्रसंग' पुस्तक का जैसा स्वागत हुआ संभवतः इसका भी स्वागत उसी प्रकार होगा।

वाह ज़िन्दगी- श्री चन्द्रप्रभ ***प्रकाशक*** - श्री जितयशा फाउण्डेशन, बी-7, अनुकम्पा द्वितीय, एम.आई. रोड, जयपुर (राज.) ***पृष्ठ*** - 108, ***मूल्य*** - 20 रुपये, सन् 2008

ज़िन्दगी 'आह' के साथ जीना जहाँ व्यक्ति के नकारात्मक दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करता है, वहाँ 'वाह' के साथ जीना उसके सकारात्मक एवं व्यापक दृष्टिकोण को इंगित करता है। व्यक्ति की जीवन शैली एवं सोच को बेहतर बनाने की सीख से समन्वित प्रभावी उद्बोधनों से युक्त यह पुस्तक मनुष्य को ऐसे प्रेरणा सूत्र प्रदान करती है, जो उसकी उद्विग्नता एवं हताशा को दूर करने में समर्थ हैं। व्यक्ति का नज़रिया यदि बेहतर है, उसमें मनुष्य के साथ पशु, पक्षी, फूल, पौधों को प्रेम करने का दृष्टिकोण है तो वह उत्साह से भर जाता है। श्री चन्द्रप्रभ की यह पुस्तक सुखी एवं सफल जीवन जीने का मार्ग प्रस्तुत करती है।

समाचार-विविधा

आचार्यप्रवर का मुम्बई वर्षावास यशस्वी एवं स्मरणीय बना

परमाराध्य आचार्यप्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्र मुनि जी म.सा. आदि ठाणा ९ तथा व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. आदि ठाणा का वि.सं. 2065 का यशस्वी चातुर्मास ज्ञानाराधन, तपाराधन, धर्माराधन के साथ संघहित चिन्तन एवं संघ उन्नयन की दृष्टि से सार्थक रहा। कल्पतरु गार्डन परिसर का विशाल क्षेत्र चतुर्विध संघ की साधना-आराधना के लिए उपयोगी रहा। पर्यावरण प्रदूषण से मुक्त खुला स्थान जिसके आसपास प्राकृतिक छटा लिए अनेकानेक वृक्ष वातावरण शुद्धि के पर्याय के रूप में सहायक रहे वहीं स्थान की सुलभता से प्रार्थना, प्रवचन, प्रश्नचर्चा, प्रतिक्रमण, ध्यान-साधना, दया-संवर, उपवास-पौषध के साथ तेले, पाँच, आठ, नौ, दस, ग्यारह, बारह, तेरह, पन्द्रह, सतरह, इक्कीस, मासखमण एवं मासखमण से ऊपर तक की सैकड़ों तपश्चर्याएँ सुख-शान्ति पूर्वक सम्पन्न हुईं। श्रावण-भाद्रपद में तप-साधना का अनवरत बना क्रम अब भी चल रहा है। तप-साधिका सुश्राविका श्रीमती निर्मला बलवंत जी भंडारी मासखमण की ओर अग्रसर हो रही हैं। दिनांक 31 अक्टूबर को श्राविकारत्न ने 21 की तपस्या में चार मिलाकर पच्चीस के प्रत्याख्यान आचार्यप्रवर के मुखारविन्द से अंगीकार किए। पचरंगी, नौरंगी, ग्यारहरंगी के साथ धर्मचक्र के कार्यक्रम में युवक-युवतियों का उत्साह प्रशंसनीय है। मुम्बई चातुर्मास में प्रवचन पश्चात् उपवास, आयंबिल, एकासन एवं छोटी-बड़ी तपश्चर्याओं के नित्यप्रति प्रत्याख्यानों से चातुर्मास दीप्तिमान हो रहा है। मुम्बई महानगर में दया, संवर और पौषध की साधना में श्रावक-श्राविकाओं को अपूर्व आनन्द की अनुभूति को चातुर्मास की विशेष उपलब्धि कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक सुश्रावक श्री मोफतराज जी मुणोत के कुशल निर्देशन में संघ, युवक परिषद् एवं श्राविका मण्डल ने ज्ञान-ध्यान, त्याग-तप में पूरे चातुर्मास में रुचि व भावना का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया है। चातुर्मास की सफलता में चतुर्विध संघ में ज्ञान-दर्शन-चारित्र की अभिवृद्धि के साथ परस्पर प्रेम-

मैत्री-सहयोग का सुन्दर रूप अनुकरणीय रहा। चातुर्मास में आचार्यप्रवर प्रभृति संत-मुनिराजों एवं महासतियाँ जी.महाराज के स्वास्थ्य में समाधि बनी रहना भी चातुर्मास की विशेषता रही। मुम्बई महानगर के विभिन्न क्षेत्रों के सुज्ञ श्रावक-श्राविकाओं के साथ समीपवर्ती-सुदूरवर्ती क्षेत्रों के श्रीसंघों ने, श्रद्धालुओं ने गुरु चरण सन्निधि में पहुँच कर चातुर्मास के सुयोग का पूरा-पूरा उपयोग किया, वह प्रमोदजन्य है। संघ की प्रवृत्तियों के पोषण में और संघ स्तर पर विविध कार्यक्रमों की सफल क्रियान्विति में मुम्बई श्रीसंघ के आबाल-वृद्ध श्रावक-श्राविकाओं की भागीदारी से संघ व संघ की सहयोगी संस्थाओं की वार्षिक साधारण सभा सफल रही। सम्मान-समारोह के सुन्दर आयोजन से संघ की शोहरत बढ़ी है। चातुर्मास व्यवस्था में स्थानीय संघाध्यक्ष श्री पारसचन्द जी हीरावत, चातुर्मास व्यवस्था समिति के संयोजक श्री रतनराज जी भण्डारी, संघमंत्री श्री दिलखुशराज जी जैन, युवक परिषद् के अध्यक्ष श्री अजय जी हीरावत, श्राविका मण्डल अध्यक्ष सौ. कां. सुजाता जी हीरावत सहित कई गुरुभक्तों ने समय का भोग देकर अपना उत्तरदायित्व बखूबी निभाया। आगत भाई-बहिनों ने आवास, भोजन, चाय-नाश्ते के साथ यातायात एवं धर्म-साधना में सहयोगी मुम्बई श्रीसंघ की सुन्दर व्यवस्था को अनुकरणीय-अनुमोदनीय बताया। पूरे चातुर्मास में रविवार को बच्चे-बच्चियों का संस्कार शिविर व्यवस्थित चलना, समय-समय पर ज्ञानाभ्यास, ध्यान-साधना शिविर, स्वाध्याय शिविर, जैन जीवन शैली के साथ जीवन जीने का अभ्यास, प्रश्नोत्तरी कार्यक्रम, पच्चीस बोल, उत्तराध्ययन सूत्र पर खुली किताब प्रतियोगिता जैसे कार्यक्रमों से संघ-स्तर पर गतिशीलता बनी रही।

नवपद आराधना में अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, ज्ञान, दर्शन, चारित्र एवं तप जैसे दिवसों पर आयम्बिल आराधना एवं जप-साधना के प्रति श्रावक-श्राविकाओं में उल्लास बना रहा। अक्टूबर में पूज्य आचार्य श्री भूधर जी म.सा., आचार्य श्री हमीरमल जी म.सा., आचार्य श्री गुमानचन्द्र जी म.सा. के पुण्य दिवस क्रमशः 9, 15 एवं 21 अक्टूबर को महापुरुषों के गुण-स्मरण, गुण-कीर्तन के साथ त्याग-तप पूर्वक मनाये गये। भगवान् महावीर निर्वाण कल्याणक पर तेलों की तपश्चर्या के साथ संवर-पौषध का नजारा अनुपम रहा। तीन दिन उत्तराध्ययन सूत्र वाचन के समय विशाल उपस्थिति मुम्बई संघ का स्वतः उत्साह प्रदर्शित कर रही थी।

दिनांक 1 व 2 नवम्बर को महाराष्ट्र सहित दक्षिणी राज्यों के गुरुभंक्तों का स्नेह-सम्मेलन कल्पतरु गार्डन स्थित क्लब हाउस में आयोजित किया गया , जिसमें गुरु हस्ती की भाँति गुरु हीरा ने दक्षिणी क्षेत्र के राज्यों को सिंचित करने के साथ नवपीढ़ी

को धर्म से जोड़ा, अलग-अलग क्षेत्रों के संघ-प्रमुखों के विचारों के अंश एवं कार्यक्रम की रिपोर्ट अलग से दी जा रही है।

मुम्बई श्रीसंघ ने 3 नवम्बर को ज्ञानपंचमी पर ज्ञानाराधन के श्रीगणेश के साथ आचार्य भगवन्त पूज्य श्री शोभाचन्द जी म.सा. का जन्म-दिवस त्याग-तप के साथ मनाया। रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के 46वें दीक्षा-दिवस पर व्रती श्रावक बनने, शीलव्रत के खंद करने के नियम के साथ यह संयम दिवस के रूप में उल्लासपूर्वक मनाया गया।

आचार्यप्रवर का कांदिवली चातुर्मास जिसने भी देखा उसके मुख से प्रवचन की अनुपम छटा, व्रत-नियमों के प्रति उल्लास एवं नियत-निर्धारित समय पर दैनिक कार्यक्रमों की क्रियान्विति का सुन्दर रूप देखकर चातुर्मास को यशस्वी चातुर्मास कहा। मुम्बई में आचार्यप्रवर जब तक कल्पतरु गार्डन परिसर नहीं पधारे, कई-कई श्रावक-श्राविकाओं के मन में शंका रही कि वहाँ स्थानक तो है नहीं चातुर्मास कैसे सफल होगा, पर प्रवचन में विशाल जनमेदिनी का निरन्तर बने रहने से शंका करने वालों को अपना मिथक टूटता नजर आया।

संवत्सरी पश्चात् चातुर्मास में एक तरह से संख्या की कमी की आशंका भी निर्मूल साबित हुई क्योंकि कांदिवली चातुर्मास में हर दिन प्रवचन सभा में विशाल संख्या में उपस्थिति बनी रहना और धर्म-साधना का अनवरत क्रम चलना चातुर्मास की उपलब्धि कहें तो अतिशयोक्ति नहीं है। चातुर्मास में तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. के तात्त्विक प्रवचनों का जन-मानस पर गहरा प्रभाव बना रहा। परमपूज्य आचार्यप्रवर ने मुम्बई पर कृपा कर कई बार प्रवचन फरमा कर जन-भावना का समादर किया। आचार्यप्रवर के प्रेरक प्रवचन हृदय को छूने वाले होते हैं अतः मुम्बई के श्रावक-श्राविकाओं को अत्यन्त हर्ष है कि पूज्य गुरुदेव ने अपनी पीयूष वाणी से आबाल-वृद्ध सबको संतुष्ट बनाए रखा।

आचार्यप्रवर के चातुर्मास से युवकों में धर्म के मर्म को जानने, मानने और आचरण में लाने की प्रेरणा मिली वहीं तीसरी पीढ़ी में गुरु चरण सन्निधि के लाभ से संस्कारों का बीजारोपण हुआ। कुल मिलाकर कांदिवली का यशस्वी चातुर्मास सदा प्रेरणादायी रहेगा।

आचार्यप्रवर प्रभृति संत-सतीवृन्द के रत्नत्रय की साधना में सहायक समाधि बनी हुई है।

सिवाना में धर्माराधन की निरन्तरता

श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा तथा व्याख्यात्री महासती श्री सुमतिप्रभा जी म.सा., महासती श्री विवेकप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा के चातुर्मास में निकटवर्ती एवं दूरवर्ती श्रद्धालु निरन्तर लाभ ले रहे हैं। उपाध्यायप्रवर का सौम्य मुख-मण्डल आगन्तुकों को शान्ति एवं तप-त्याग की प्रेरणा प्रदान करता है। ज्ञानाराधन, तपाराधन एवं साधना के सोपान निरन्तर आगे बढ़ रहे हैं। मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आगन्तुकों को निरन्तर धर्म क्षेत्र में आगे बढ़ने की प्रबल प्रेरणा करते हैं। श्री यशवन्तमुनि जी एवं श्री लोकचन्द्र मुनि जी की तप-साधना एवं ज्ञान-साधना श्रद्धालुओं को प्रभावित किए बिना नहीं रहती। यहाँ 18-19 अक्टूबर 2008 को आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की कार्यशाला का आयोजन हुआ, जिसमें मारवाड़, पोरवाल, पल्लीवाल, मेवाड़ आदि क्षेत्रों के केन्द्राधीक्षकों, पर्यवेक्षकों, प्रश्नपत्र निर्माताओं एवं विद्वज्जनों ने भाग लिया। मारवाड़ के एक कोने में होते हुए भी सिवाना में दूर-दूर से श्रद्धालुओं का आगमन निरन्तर बना हुआ है। व्रत-प्रत्याख्यान एवं तप-त्याग से समागत श्रद्धालु अपने जीवन को उन्नत बना रहे हैं।

महासती-मण्डलों के चातुर्मासों से हजारों लोग लाभान्वित

पावटा, जोधपुर- साध्वीप्रमुखा शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में पावटा चातुर्मास विशेष दीप्तिमान रहा है। पावटा क्षेत्र के सभी श्रद्धालु उल्लसित हैं। शासनप्रभाविका जी की प्रेरणा से यहाँ ज्ञानाराधन, तपाराधन एवं दया-संवर की साधना की निरन्तरता बनी हुई है। शरद पूर्णिमा की रात्रि में लगभग 210 बहिनों एवं 50 भाइयों ने पन्द्रह सामायिक कर आध्यात्मिक भजनों का रसास्वादन किया। इसी दौरान प्रश्न-चर्चा का भी आयोजन हुआ। रात्रि कैसे बीती, इसका भक्ति-भाव एवं स्वाध्याय-मंथन में पता ही नहीं चला। सरस्वती नगर से लगभग 40 श्रावक-श्राविकाओं ने शरद पूर्णिमा कार्यक्रम में भागीदारी निभाई। कुशल जैन छात्रावास के छात्रों ने भी हिस्सा लिया। यहाँ गत माह 41 दिवसीय तप का बड़ा प्रत्याख्यान हुआ। आयंबिल ओली कार्यक्रम में लगभग 300 आयम्बिल हुए। श्रीमती रतनबाई जी मेहता ने आयम्बिल का मासखमण किया। चातुर्मास में प्रत्येक रविवार को प्रश्नोत्तर प्रतियोगिता का आयोजन बहुत रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक रहा।

कुशल जैन छात्रावास के छात्र प्रत्येक रविवार को प्रातः 7 से 8 बजे तक सामायिक करते हैं। आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के दीक्षा-दिवस पर 101 दयाव्रत की आराधना हुई।

वैशाली नगर, अजमेर- सेवाभावी महासती श्री सन्तोषकंवर जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में पर्युषण पर्व पर तो तपस्याओं की झड़ी लगी ही, किन्तु उसके पश्चात् भी धर्माराधन के उत्साह में कोई कमी नहीं आई। महिला मण्डल सक्रिय है, प्रश्नोत्तरी कार्यक्रम नियमित रूप से चल रहा है। अजमेर के बाहर से भी दर्शनार्थियों का निरन्तर आवागमन बना हुआ है। आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के दीक्षा-दिवस पर सामूहिक एकासन, दया-संवर एवं 5 सामायिक के कार्यक्रम में लगभग 250 श्रावक-श्राविकाओं ने भाग लिया। गुणानुवाद सभा में आचार्यप्रवर के जीवन से प्रेरणा लेने सम्बन्धी विचारों की अभिव्यक्ति हुई। इसी दिन 3 दम्पतियों ने आजीवन शीलव्रत का खंद अंगीकार किया-(1)श्रीमती एवं श्री भागचन्द जी रांका, (2) श्रीमती एवं श्री विजयराज जी गादिया एवं (3) श्रीमती एवं श्री पी.के. जैन। 6 नवम्बर को भिक्षुदया का आयोजन हुआ।

अमरावती- व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. आदि ठाणा के चातुर्मास में पर्युषण पर हुई धर्माराधना एवं तपाराधना के अनन्तर अभी भी तपस्याओं का क्रम बना हुआ है। 31 अक्टूबर से 4 नवम्बर तक बालक-बालिकाओं का धार्मिक शिविर आयोजित हुआ, जिसमें 185 बालक-बालिकाओं ने भाग लिया। शिविर का लाभ 40 महिलाओं ने भी उठाया। शिविर के समापन कार्यक्रम में अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री सुमेरसिंह जी बोथरा उपस्थित थे। उन्होंने संघ की ओर से पाठशालाओं हेतु 51000/- की राशि का सहयोग करने की घोषणा की। यहाँ प्रतिक्रमण सीखने की लगन लगी हुई है। श्रावकरत्न श्री प्रकाशचन्द जी कोठारी ने चातुर्मास काल में प्रतिक्रमण सीखने वालों को स्वर्ण-अंगूठी भेंट स्वरूप देने की घोषणा की है। संघ की ओर से भी इसके लिए 501/- की राशि देने की घोषणा की गई है। आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के दीक्षा-दिवस पर 201 एकाशन का लक्ष्य था, किन्तु उससे अधिक 225 एकाशन हुए हैं। प्रातः 8 से 9 बजे तक 150 युगलों ने नवकार मंत्र के जाप में भाग लिया। यहाँ ज्ञानाराधन की दृष्टि से उत्तराध्ययन सूत्र की परीक्षाओं हेतु कक्षाएँ चल रही हैं।

मानसरोवर, जयपुर- तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा., महासती श्री दर्शनप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में पर्युषण पर्व पर अपूर्व धर्म-ध्यान

हुआ। यहाँ तेले की लड़ी बराबर चल रही है। महासती मण्डल की प्रेरणा से आयम्बिल तप एवं एकाशन तप की आराधना उल्लेखनीय हुई है। 5 से 9 अक्टूबर तक धार्मिक शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें बालक-बालिकाओं ने धार्मिक एवं नैतिक संस्कार प्राप्त किए। दर्शनार्थी श्रद्धालुओं का यहाँ आगमन बना हुआ है। 4 नवम्बर 2008 को आचार्यप्रवर के दीक्षा-दिवस के उपलक्ष्य में सामूहिक रूप से दया, एकाशन, धर्मचक्र एवं सामायिक-साधना का आयोजन हुआ, जिसमें क्षेत्र के सभी श्रावक-श्राविकाओं ने उत्साह से भाग लिया। पूर्व आयोजित शिविर का पारितोषिक वितरण भी इस दिन किया गया।

बेलगाँव- विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा., महासती श्री सरलेशप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा के चातुर्मास के सुयोग से प्रत्येक रविवार को बच्चों में सामायिक, प्रतिक्रमण सीखने का क्रम चल रहा है। चातुर्मास के प्रारम्भ में 15 नवयुवक दम्पतियों ने 4, 3 एवं 2 माह तक ब्रह्मचर्य-पालन का नियम लेकर चातुर्मास में ओजस्विता का संचार कर दिया। पर्युषण पर्व पर बच्चों एवं युवकों ने दया-संवर की विशेष आराधना का लाभ लिया। पर्युषण के आठों दिन नमस्कार मंत्र का अखण्ड जाप चला। आयम्बिल ओली के समय आयम्बिल आराधना हुई तथा नवरात्रा में प्रतिदिन नवकार मंत्र का सामूहिक जाप किया गया। पीपाड़ मूल निवासी श्री महेन्द्र भाई जी बोहरा द्वारा चातुर्मास प्रारम्भ में ही मासखमण के प्रत्याख्यान लिए गए तथा फिर आगे उन्होंने 41 की तपस्या कर पारणक किया। पारणक के दूसरे दिन भी स्थानक में आकर सामायिक, प्रवचन-श्रवण का लाभ लिया। सूरजबाई जी सैन ने 16 की तपस्या, मनिता जी सामसुखा ने 11 की तपस्या की। विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा. का स्वास्थ्य एन्ज्योप्लास्ट के पश्चात् सामान्य है।

हिण्डौन सिटी- विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में चातुर्मास के प्रारम्भ से ही त्याग-तप की झड़ी लगी हुई है। पर्युषण के पश्चात् भी तपस्याएँ लगातार चल रही हैं। यहाँ श्री सुरेशचन्द जी जैन ने अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला जी जैन के साथ आजीवन शीलव्रत अंगीकार किया है। श्री केवलचन्द जी जैन लहचौड़ा वालों ने वर्द्धमान नगर स्थानक के लिए सहर्ष 51000/- की राशि प्रदान की है। यहाँ प्रत्येक रविवार को चातुर्मासिक ज्ञान प्रश्नोत्तरी परीक्षा का आयोजन किया जा रहा है।

मेड़ता सिटी- व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में पर्युषण पर्व पर विशेष धर्माराधन हुआ। पन्द्रह, ग्यारह, नौ आदि तपस्याओं के साथ

आठ अठाई तप हुए हैं। 50 तेले की तपस्याएँ पहले हो चुकी थीं, दीपावली पर भी 8 तेले की तपस्याएँ हुई हैं। आयम्बिल ओली की उत्साहपूर्वक आराधना हुई है। आचार्यप्रवर का दीक्षा-दिवस तेले की तपस्या, दयाव्रत एवं सामायिक-साधना के द्वारा मनाया गया। यहाँ पचरंगी, नवरंगी, धर्मचक्र का आराधन भी हुआ है। प्रत्येक रविवार को प्रतियोगिता आयोजित होती है, जिसमें सब उत्साहपूर्वक भाग लेते हैं। व्याख्यान में उपस्थिति अच्छी रहती है। चातुर्मास सुख-शांति पूर्वक, सरलता एवं सादगी के साथ चल रहा है। व्यवस्था में युवक परिषद् सक्रिय है।

शास्त्रीनगर, जोधपुर- महासती श्री इन्दुबाला जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में यह चातुर्मास प्रवचन-प्रभावना, शीलव्रत-साधना, बारहव्रत-आराधना, धर्म जागरणा की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा। प्रवचन में कई दिनों तक बारह व्रतों का विवेचन महासती श्री मुदितप्रभा जी म.सा. द्वारा फरमाया गया, जिसके फलस्वरूप आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के दीक्षा-दिवस के पावन प्रसंग पर अनेक श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओं ने बारह व्रत अंगीकारकर साधना की ओर कदम बढ़ाए हैं। शीलव्रत के नियम लेने वालों की संख्या में भी अभिवृद्धि हुई है। श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा महिलाओं एवं बालिकाओं का सप्त दिवसीय धार्मिक व नैतिक शिविर 6 से 12 अक्टूबर तक आयोजित हुआ। शिविर में पावटा, लक्ष्मीनगर, महामन्दिर, मोती चौक, सरस्वती नगर, चौ.हा.बोर्ड, देवनगर, शास्त्रीनगर आदि उपनगरों से 109 शिविरार्थियों ने भाग लिया।

पाली-मारवाड़- सेवाभावी महासती श्री विमलावती जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में धर्माराधन, ज्ञानाराधन एवं तपाराधन का क्रम निरन्तर गतिमान है। व्याख्यान में श्रावक-श्राविकाओं की उपस्थिति प्रमोदजन्य है। नजदीक एवं सुदूरवर्ती श्रद्धालुओं का आवागमन निरन्तर बना हुआ है। 4 नवम्बर को आचार्यप्रवर के दीक्षा-दिवस के उपलक्ष्य में दया-संवर एवं सामायिक-आराधना हुई। इसी दिन प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का आयोजन भी हुआ तथा पचरंगी भी प्रारम्भ हुई। 4 नवम्बर से 8 नवम्बर तक धार्मिक शिविर का आयोजन चल रहा है।

शिमोगा- व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा.आदि ठाणा के सान्निध्य में शिमोगा का यह चातुर्मास युवा वर्ग को धर्मनिष्ठा से जोड़ने में सफल रहा है। शिमोगा के श्रावक-श्राविकाओं ने इस चातुर्मास को पाकर स्वयं को धन्य अनुभव किया है। बालक-बालिकाओं, युवतियों एवं बुजुर्गों ने ज्ञानोपार्जन कर चातुर्मास का लाभ उठाया है। बिना आडम्बर के तपस्या का यहाँ ठाट लगा है। 6 से 15 अक्टूबर तक

आयम्बिल ओली का कार्यक्रम चला। पन्द्रह अक्टूबर से 19 अक्टूबर तक सम्यक् संस्कार शिविर आयोजित हुआ, जिसमें 150 बच्चों, 75 महिलाओं और 90 युवकों ने भाग लिया। शरदपूर्णिमा की रात्रि में 81 नवयुवकों ने 15 सामायिक का लक्ष्य रखकर जागरण किया। 20 अक्टूबर को दीपावली तक वीरत्थुई का 108 बार पाठ किया। दीपावली पर उत्तराध्ययन सूत्र का स्वाध्याय हुआ तथा 51 तेले हुए। चार नवम्बर को आचार्य श्री हीराचन्द्र जी का दीक्षा-दिवस दयाव्रत के साथ मनाया गया। यहाँ पर 8-9 नवम्बर को फ्रूटफुल इन्स्पीरेशन इन लाइफ-2008 शिविर आयोजित करने का लक्ष्य है। बैंगलोर, मैसूर, दिल्ली, बीजापुर, बागलकोट, बेलगाँव, भद्रावती आदि क्षेत्रों के श्रावक-श्राविका भी यहाँ आकर लाभ ले रहे हैं। नवयुवकों एवं संघ-सदस्यों में धर्म-जागृति इस चातुर्मास की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। यहाँ आठ दम्पतियों ने शीलव्रत अंगीकार किया है-- श्री चंदनमल जी लुकड़, श्री जवेरीलाल जी कवाड़, श्री जवेरीलाल जी पामेचा, श्री हंसराज जी कवाड़, श्री गौतमचन्द जी श्रीश्रीमाल, श्री प्रकाशचन्द जी लुणावत, श्री शांतिलाल जी कवाड़ एवं श्री मूलचन्द जी बोहरा।

बागलकोट- व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलता जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में चातुर्मास प्रारम्भ से ही धर्माराधन का ठाट लगा है। प्रार्थना, प्रवचन एवं धर्मचर्चा के अलावा युवकों की विशेष कक्षा आयोजित की जाती है, जिसमें अच्छी उपस्थिति रहती है। युवक यहाँ बड़े उत्साह से धर्मचर्चा में भाग लेते हैं। सौ. रेशमा प्रमोद कुमार जी बेताला ने मासखमण की तपस्या की है। ग्यारह, अठाई, आयम्बिल आदि की तपस्याएँ हुई हैं तथा तेले की लड़ी एवं एकासन की लड़ी निरन्तर गतिशील है। यहाँ आजीवन शीलव्रत के 5 खंद हुए हैं - श्री पुखराजजी नेमीचन्द बेताला, श्री नेहरूलाल जी बच्छराज जी बेताला, श्री अशोकचन्द्र जी कन्हैयालाल जी सुराणा, श्री अजीतकुमार जी हंसराज जी बेताला एवं श्री वीरचन्द्र जी नथमल जी बागमार। अनेक श्रावक-श्राविकाओं ने कच्चे पानी एवं जमीकन्द का त्याग किया है, सामायिक का नियम अंगीकार किया है तथा अनेक प्रकार के प्रत्याख्यान किए हैं। प्रत्येक रविवार को बालकों का शिविर आयोजित होता है। पर्युषण के आठों दिनों में धर्माराधन का ठाट रहा, 41 अष्टप्रहर पौषध हुए, 51 एकासन के तेले हुए, भाई बहनों में नवरंगी दया हुई। यहाँ अनेक क्षेत्रों के श्रद्धालुजनों का आवागमन निरन्तर बना हुआ है।

बीजापुर- महासती श्री इन्दिराप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में बीजापुर में धर्मध्यान का ठाट लगा हुआ है। यहाँ 8 से 12 अक्टूबर 2008 तक पंच दिवसीय सम्यक् संस्कार शिविर आयोजित किया गया, जिसमें 190 शिविरार्थियों ने ज्ञानार्जन

किया। महासती जी की प्रेरणा से शिविरार्थियों ने सामायिक का नियम ग्रहण किया। युवकों के लिए प्रातः 7 से 9, बहिनों के लिए मध्याह्न 2 से 4.30 तथा बच्चों के लिए प्रातः 9 से सायं 5 बजे तक ज्ञानाभ्यास का क्रम चला। युवकों ने सामूहिक भोज में जमीकन्द नहीं करने का नियम स्वीकार किया। कतिपय युवकों ने पंचतारा होटलों में विवाह आदि प्रसंगों पर भोजन नहीं करने एवं मर्यादित समय सीमा तक ब्रह्मचर्य व्रत के प्रत्याख्यान भी अंगीकार किए। बहिनों ने बोल थोकड़ों के अभ्यास के साथ जैन जीवन शैली से जीवन जीने का संकल्प किया। प्राणायाम और योगासन से शरीर की स्वस्थता हेतु जागृति भी शिविर की देन रही। करीब 70 बहिनों ने सिल्क के वस्त्रों का उपयोग नहीं करने का संकल्प लिया। विवाह/शादी के प्रसंग पर जमीकंद त्याग के साथ वस्त्र सीमित रखने, मर्यादित समय से अधिक टी.वी. नहीं देखने जैसे कई नियम ग्रहण किये। बच्चों ने सामायिक, पच्चीस बोल के पाठ कण्ठस्थ किये। 40 बच्चों ने पटाखे नहीं छोड़ने एवं 25 बच्चों ने जमीकन्द त्याग के साथ बड़ों को प्रणाम करने का संकल्प लिया। रात्रि में बहिनों ने कर्म सिद्धान्त, सकारात्मक सोच जैसे विषयों का हार्द समझा।

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का 46वाँ दीक्षा-दिवस 'संयम-दिवस' के रूप में मनाया

रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का 46वाँ दीक्षा-दिवस कार्तिक शुक्ला षष्ठी दिनांक 4 नवम्बर 2008 को देश के विभिन्न ग्राम-नगरों में दया-संवर, उपवास-पौषध, एकाशन एवं सामायिक-साधना के साथ मनाया गया। कुछ स्थानों पर 12व्रतों को जीवन भर के लिए स्वीकार किया गया तथा कहीं आजीवन शीलव्रत के खंद हुए। गुणानुवाद करते हुए आचार्यप्रवर के जीवन की विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया। युवावय में दीक्षा लेकर आचार्यप्रवर ने संयम का जिस कठोरता से पालन किया है, उससे रत्नसंघ आज उज्ज्वलता की ओर निरन्तर अग्रसर है। आपके संघ-नायकत्व में 50 दीक्षाएँ हो चुकी हैं तथा संघ में धर्म-प्रवृत्ति की ओर जुड़ाव बढ़ रहा है। व्यसन-मुक्ति के साथ सामायिक और स्वाध्याय का संदेश जन-मन में गहरा पेठ रहा है। दक्षिण प्रवास में तीसरी पीढ़ी भी धर्म के अभिमुख हुई है। सहजता, सरलता, दूरदर्शिता, निस्पृहता, संयमनिष्ठा, सौमनस्य आदि अनेक विशेषताओं के कारण आपके संघनायकत्व में आडम्बर रहित धर्म की आराधना में अभिवृद्धि हो रही हैं। मुम्बई, सिवाना, जोधपुर, जयपुर, अजमेर, अमरावती, हिण्डौन सिटी आदि चातुर्मास स्थलों के साथ ही विभिन्न ग्राम-नगरों में आपके जीवन की विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया।

महाराष्ट्र सहित दक्षिणी राज्यों के गुरु भ्राताओं का दो दिवसीय स्नेह-सम्मेलन मुम्बई में सानन्द सम्पन्न

श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, मुम्बई ने परमाराध्य परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के महाराष्ट्र-कर्नाटक-तमिलनाडु प्रदेशों में सम्पन्न यशस्वी चातुर्मास एवं मध्यप्रदेश-गुजरात-आन्ध्रप्रदेश के कतिपय क्षेत्रों में विचरण-विहार से संघ/समाज में धर्म के प्रति रुझान प्रगाढ़ हुआ, युवक-युवतियों में धर्म श्रद्धा जगी, बालक-बालिकाओं में संस्कारों की नींव पुष्ट बनी। इसलिये महाराष्ट्र सहित दक्षिणी अंचलों के सुज्ञ श्रावक-श्राविकाएँ आचार्यप्रवर, आज्ञानुवर्ती संत-मुनिराजों तथा महासती मण्डलों के उपकारों से उपकृत हैं। संघसेवी-संतसेवी-श्रुतसेवी-स्वधर्मि सेवियों के प्रति साधुवाद ज्ञापित करने एवं संघ व संघनायक के प्रति बनी आत्मीयता-अपनत्व उत्तरोत्तर बढ़ता रहे इस मंगल भावना से स्नेह-सम्मेलन आयोजित किया गया।

कल्पतरु गार्डन, कांदिवली मुम्बई में जन-जन की आस्था के केन्द्र परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. प्रभृति संत-सतीवृन्द के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण, सत्संग-सेवा के सुयोग के साथ गुरु भ्राताओं का सपरिवार मिलना, संघहित में चिन्तन करना, संघ-सेवा में सन्नद्ध रहना जैसे उद्देश्यों की पूर्ति में आयोजित स्नेह-सम्मेलन सफल रहा।

१ नवम्बर के कार्यक्रम का विवरण

कल्पतरु गार्डन स्थित क्लब हाउस में हर सदस्य का व्यक्तिशः परिचय प्राप्त कर उन्हें समारोह स्थल पर सादर पहुँचाया गया। मध्याह्न में 1 बजे के आसपास समारोह का शुभारम्भ श्रीमती अभिलाषा जी हीरावत आदि बहिनों द्वारा समवेत स्वर में 'परमेष्ठी-परमेष्ठी बोलो' बोल के साथ मधुर प्रस्तुति से हुआ।

संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक माननीय श्री मोफतराज जी मुणोत, रत्नसंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष माननीय श्री सुमेरसिंह जी बोथरा, संघ के पूर्व अध्यक्ष एवं शासन सेवा समिति के संयोजक माननीय श्री रतनलाल जी बाफना, संघ के पूर्व अध्यक्ष माननीय श्री कैलाशचन्द जी हीरावत, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष माननीय श्री पी.एस. सुराना, मण्डल के पूर्व अध्यक्ष माननीय श्री चेतनप्रकाश जी डूंगरवाल, मुम्बई संघ के अध्यक्ष श्री पारसचन्द जी हीरावत, चेन्नई संघ के अध्यक्ष श्री कैलाशमल जी दुग्गड़, बीजापुर संघ के अध्यक्ष श्री नन्दलाल जी रूणवाल, धुलिया संघ के अध्यक्ष श्री कांतिलाल जी चौधरी को मुम्बई युवक परिषद् के सदस्यों ने

ससम्मान मंच पर सुशोभित करवाया।

अतिथियों के मंचासीन होने के अनन्तर बैंगलोर, चेन्नई, शोरापुर, रायचूर, मैसूर, जलगाँव, धुलिया, नागपुर, हैदराबाद, गदग, गजेन्द्रगढ़, वेल्लूर, बंगारपेठ, बागलकोट,बीजापुर, हुबली, पूना जैसे श्रीसंघों से पधारे गुरु भ्राताओं का सम्मेलन में परिचय करवाया गया।

मुम्बई संघ के आग्रह-अनुरोध पर समय निकालकर पधारे गुरुभ्राताओं एवं उनके परिजनों के स्वागत में सौ. नीरूजी गोखरू मुम्बई ने ''स्वागत करने आए हम सब, हाथों में श्रद्धा-सुमन है'' बोल में स्वागत गीत की प्रभावी प्रस्तुति दी।

कार्यक्रम संचालक श्री प्रकाशचन्द जी जैन ने 'माँ रूपा के नन्द केवल के चन्द' एवं आचार्यप्रवर-उपाध्यायप्रवर के प्रति भक्ति-भावना से गुरु गुणगान में प्रेरणादायी भजन की चन्द कड़ियाँ प्रस्तुत कीं।

श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, मुम्बई के अध्यक्ष **श्री पारसचन्द जी हीरावत** ने अपने स्वागत भाषण में समारोह की परिकल्पना की बात रखने के साथ समागत समस्त गुरु-भ्राताओं का हृदय से स्वागत-सत्कार किया।

संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक, संघ को मार्गदर्शन देने वाले संघ हितैषी **श्रावकरत्न श्री मोफतराज जी मुणोत** ने संघ के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए कहा कि परम्परा के मूलपुरुष पूज्य श्री कुशलचन्द जी म.सा. से लेकर अध्यात्मयोगी आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. ने रत्नसंघ रूपी बगिया को हरा-भरा बनाया तथा आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने परीषहों को समभाव से सहते हुए महाराष्ट्र सहित दक्षिण क्षेत्र को सिंचित किया है,जो प्रमोदकारी है। मुणोत साहब ने विगत पचास वर्षों का विवरण रखते कहा कि व्यापार-व्यवसाय के प्रयोजन से राजस्थान के हमारे गुरुभ्राता परिवार दक्षिण की ओर आ गये हैं जिनको संभालना समय का तकाजा है। आचार्य श्री के नौ साल के प्रवास से हमारी तीसरी पीढ़ी धर्म के सम्मुख हुई है। रत्नसंघ परस्पर प्रेम-सम्बन्धों के कारण सुन्दर संघ है और इस पर हम-सबको गर्व भी है। मुणोत साहब ने आगत गुरुभ्राताओं के स्वागत के साथ संघनायक के प्रति समर्पित रहने और संघ-सेवा में जागृत रहने का आह्वान किया। मुणोत साहब ने अपने गुरु भाइयों पर टिप्पणी करते कहा कि मैं तो मानता हूँ कि आप सब मेरे रिश्तेदार हैं, मित्र हैं। मैं जहाँ कहीं गया मुझे आपका स्नेह मिला। मैं आपके स्नेह से अभिभूत हूँ और स्नेह के कारण ही निवेदन करता हूँ कि आप प्रेम बाँटें और संघ की उन्नति में सक्रिय रहें।

शासन-सेवा समिति के संयोजक संघ के पूर्व अध्यक्ष, शाकाहार क्रांति के

सजग प्रहरी **आदरणीय श्री रतनलाल जी बाफना** ने गद्य-पद्य भाषा-भाव में संघ-सेवा का महत्त्व बताते कहा कि हम गुरु हस्ती के युग में पैदा हुए हैं यह हमारा सौभाग्य है। बाफना साहब ने याद दिलाया कि हम संत-सतीवृन्द की सेवा में जायें तो बच्चों को साथ लेकर जायें, जिससे बचपन में उद्‌भूत संस्कार जीवन पर्यन्त रहेंगे। संघ-सेवा के अपने अनुभव का विवरण रखते कहा कि संघाध्यक्ष की जवाबदारी जब मुझे दी गई तब मेरा मन एक तरह से व्यथित था कि मैं इस उत्तरदायित्व का कैसे निर्वहन कर सकूँगा, पर आप-सबके स्नेह-प्रेम के कारण मैंने संघ-सेवा में कभी थकान का अनुभव नहीं किया। बाफना साहब ने 'जल थोड़ो प्रीति घणी, लाग्यो प्रेम को बाण, तू पी तू पी करता हे सखि! इस विध निकले प्राण' कथन का हार्द समझाते कहा कि हमारा ऐसा प्रगाढ़ प्रेम होना चाहिये। हमारे संघ के नायक ने सिद्धान्तों से समझौता नहीं किया, वाणी में कटुता नहीं रखी। हम गुरु के वचनों पर श्रद्धा कर जीवन का निर्माण करें।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के पूर्व अध्यक्ष, संघ हितैषी श्रावकरत्न **श्री चेतनप्रकाश जी डूंगरवाल** ने तीर्थ की महिमा, आचार्य परम्परा एवं संस्कृति की सुरक्षा के लिए भावी पीढ़ी को संस्कार देने की आवश्यकता बताते कहा कि हमारे संघनायक ने दक्षिण प्रवास कर तीसरी पीढ़ी को सुरक्षित कर लिया है। 'तीजी पीढ़ी बावड़े, तीजी पीढ़ी जाय' मारवाड़ की उक्ति का हार्द समझाते डूंगरवाल साहब ने कहा कि आचार्य श्री हस्ती ने दक्षिण क्षेत्र संभाला अब आचार्य हस्ती के तराशे हीरे ने संभाला है। इसलिए कह सकता हूँ कि तीसरी पीढ़ी संस्कारित होने का मतलब है सात पीढ़ी का सुधार। 1992 में बैंगलोर में श्रावक सम्मेलन का शुभारम्भ किया गया, 1993 में जयपुर में वृहद् सम्मेलन रखा। हम परस्पर मिलकर न केवल परिचय ही पाते हैं, अपितु संघ के साथ हमारा जुड़ाव भी बढ़ता है, मुम्बई में दक्षिण क्षेत्र का यह सम्मेलन समयोचित सार्थक सत्प्रयास है।

चेन्नई संघाध्यक्ष **श्री कैलाशमल जी दुग्गड़** ने अपने मनोभाव व्यक्त करते कहा कि हमारे संघनायक ने अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों को नजर-अंदाज कर क्षेत्र संभाला, उसकी सुखद परिणति है कि आज हमारे पी.एस. सुराना साहब मण्डल अध्यक्ष का दायित्व संभाल रहे हैं। भाई बुधमल जी युवक परिषद् के कार्याध्यक्ष के साथ संघ-सेवा में सक्रिय हैं। अशोक जी स्कॉलरशिप कार्यक्रम की क्रियान्विति में सजगता का परिचय दे रहे हैं। चेन्नई में स्वाध्याय भवन बनना वहाँ प्रतिदिन सामायिक, प्रतिक्रमण, उत्तराध्ययन सूत्र का वाचन होना, दो महीने के लिए स्वाध्याय प्रशिक्षण कार्यक्रम चलना, 42 क्षेत्रों में स्वाध्यायियों की पूर्ति, चेन्नई में इक्कीस जगह

स्वाध्यायियों के माध्यम से पर्वाराधन महत्त्वपूर्ण उपलब्धि होने के पीछे गुरु हीरा की प्रेरणा रही है। युवक परिषद् सक्षमता से कार्य संपादित कर रहा है। युवति-सम्मेलन में 300 युवतियों की संख्या रहना और आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा में हजार से ऊपर परीक्षार्थियों का भाग लेना आचार्यप्रवर के क्षेत्र संभालने के परिणामस्वरूप उपलब्धि हो सकी है। हमारे संत-सतियों का दक्षिण में निरन्तर विचरण होते रहना चाहिये।

रायचूर संघाध्यक्ष एवं ऊर्जावान सुश्रावक **श्री पारसमल जी सुखानी** ने मुम्बई के श्रावकरत्नों का साधुवाद ज्ञापित करते हुए कहा कि आपने स्नेह-सम्मेलन रखा वह प्रशंसनीय है। आचार्य श्री हस्ती के 1981 में रायचूर चातुर्मास, अक्षय तृतीया और दीक्षा महोत्सव के परिप्रेक्ष्य में आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के सान्निध्य में तप और दान का विशिष्ट प्रसंग अक्षय तृतीया और जैन भागवती दीक्षा का सुयोग तो हमें मिला, किन्तु चातुर्मास नहीं मिला इसका मुझे मलाल है। रायचूर के भजन रसिक सुश्रावक श्री प्यारेलाल जी कांकरिया के आध्यात्मिकता से ओतप्रोत भजन-गीत एवं उनके द्वारा भजनों की प्रस्तुति का उल्लेख करते सुखानी साहब ने कहा कि प्यारे-मीठे गीत पुस्तक तैयार हो चुकी है। गुरु हस्ती-गुरु हीरा के प्रति समर्पित श्रावकरत्न ने भक्ति-भावना से भजनों की भेंट दी और रायचूर में सामायिक-स्वाध्याय तथा धर्म-साधना का रूप यदि व्यवस्थित चल रहा है तो उसका श्रेय आचार्यप्रवर जैसे संयम साधकों को जाता है। मुम्बई के सुन्दर आयोजन को उन्होंने उपयोगी बताया।

शोरापुर के संघ-सेवी **श्रावकरत्न श्री किशोरकुमार जी छाजेड़** ने अपने हृदयोद्गार व्यक्त करते कहा कि हमें रत्नसंघ का सदस्य होने पर गर्व है। छः दशक पूर्व आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. ने अनेक परीषह सहकर भी दक्षिणी क्षेत्र पावन किया। उस समय हमारे गांव में 11 घर थे, आज 13 घर हैं। साठ साल पहले शोरापुर क्षेत्र में प्लेग की महामारी थी, गुरु हस्ती ने नमस्कार महामंत्र का जाप करने का कहा, महामंत्र के जाप से प्लेग की बीमारी का शमन हुआ। गुरु हस्ती ने पाठशाला की प्रेरणा की और कुछ दिन बाद गुरुदेव का विहार हो गया। हमने धार्मिक पाठशाला चालू की और गुरु हस्ती पाठशाला नाम रखा। आचार्य भगवन्त 1981 में रायचूर चातुर्मास पश्चात् हमारे गाँव पधारे और गुरुदेव ने पाठशाला का नामदेखा तो कहा तुम वर्द्धमान पाठशाला नाम रखो। गुरु हस्ती की तरह गुरु हीरा की भी हमारे गाँव पर विशेष कृपा रही। पूज्य हीरा गुरुदेव के विराजने से 13 घरों के होते हुए भी 17 शीलव्रत के खंद हुए। मोहित सुराणा ने मात्र दस वर्ष की अवस्था में प्रतिक्रमण कण्ठस्थ करके सुना दिया।

हमारे गाँव में नित्यप्रति धर्मस्थान में सामायिक एवं प्रार्थना का कार्यक्रम बराबर चलता है। शोरापुर रत्नसंघ का क्षेत्र है हमारे यहाँ गुरुकृपा से धर्म-साधना में सबकी अच्छी रुचि है।

मैसूर के युवारत्न बन्धु **श्री सुभाषचन्द जी धोका** ने गुरु के उपकारों का उल्लेख करते हुए बताया कि हमारे यहाँ रविवार को प्रारम्भ हुई सामायिक-स्वाध्याय की कक्षा में 100 से 150 तक की संख्या होती है, विगत छः वर्षों से जोधपुर आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड के माध्यम से परीक्षार्थी ज्ञानाभ्यास कर रहे हैं, परीक्षा दे रहे हैं। सरला हिंगड़ ने तो बोर्ड की परीक्षा में आठवीं कक्षा में मेरिट में स्थान प्राप्त कर मैसूर का नाम रोशन किया है। संत-सतीवृन्द के विचरण विहार में हमारे सभी युवा सक्रिय हैं, उन्होंने भावना से सेवाएँ दी हैं, दे रहे हैं। पूज्य गुरुदेव की कृपा से हमें अक्षय तृतीया पर तप-साधकों का सम्मान करने का सुअवसर भी मिला। मैं इतना ही निवेदन कर अपनी बात समाप्त करना चाहता हूँ कि मैसूर क्षेत्र में हमारे संत-सतीवृन्द का विचरण बना रहे तो हम धर्म-साधना में निरन्तर गति-प्रगति कर गुरु के संकेत को आदेश मानते हुए संघ-सेवा में सन्नद्ध रहेंगे।

गदग के श्रावकरत्न **श्री किशनलाल जी बागमार** ने अपने मन की पीड़ा बताते कहा कि हमारे साधु-साध्वियों का विचरण दक्षिण में कम होता है, किन्तु आचार्यप्रवर पूज्य गुरुदेव की कृपा से हमें व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा का चातुर्मास मिला तो हमारे यहाँ दो मासखमण हुए, आठ शीलव्रत के खंद हुए, हर रविवार को सामूहिक सामायिक का क्रम प्रारम्भ हुआ वह चल रहा है। हमारी भावना है कि चेन्नई, बैंगलोर, रायचूर, बीजापुर क्षेत्रों में साधु-साध्वियों का विचरण हो तो हमें भी लाभ मिलता रहेगा।

युवक परिषद् के पूर्व अध्यक्ष एवं निदेशक भाई **श्री अशोक जी कवाड़** ने गुरु हस्ती के दक्षिण प्रवास का उल्लेख करते कहा कि 1980 में मैं स्कूल में पढ़ता था। बच्चे संघ से जुड़ जाते हैं तो धर्म से जुड़ने में उन्हें देर नहीं लगती और धर्म से जुड़ना ही जीवन से जुड़ना है। अपने बच्चे की बात रखते हुए उन्होंने कहा कि बच्चा युवक परिषद् से जुड़ गया इसलिए वह दो बार मुम्बई गुरु दर्शन-वन्दन हेतु स्वतः आ गया, अन्यथा कहने के बाद भी बच्चे महाराज के वहाँ नहीं जाते। आप-हम बच्चों को यह समझायें कि हर आत्मा में परमात्मा का वास है। सेवा करते बच्चों के मन में आना चाहिये कि मैं जिनशासन की सेवा कर रहा हूँ। जिस प्रकार जापानियों द्वारा हर प्रश्न का उत्तर जापान को आगे बढ़ाने में निहित रहता है, ऐसे ही हमें कोई पूछे- तुम कहाँ जन्मे, तुम कहाँ बड़े

हुए, कहाँ ज्ञान पाया, कहाँ आत्मा की पहचान हुई, कहाँ वक्त दोगे, कहाँ मरोगे, कहाँ जीओगे, हर प्रश्न के उत्तर में रत्नसंघ/जिनशासन उत्तर आना चाहिये।

संघाध्यक्ष श्री सुमेरसिंह जी बोथरा ने कहा कि संघ ने 20 वर्षों में जो प्रगति की है और हमारा यह संघ जिस तरह एकता में बंधा हुआ दिखाई दे रहा है यह भाई साहब श्री मोफतराज जी मुणोत की देन है। मैं 20 वर्ष पहले गुरु चरणों में आता था, आप में से कई भाई आते, पर हम एक-दूसरे को नहीं जानते थे, किन्तु हमने जब एक नेतृत्व स्वीकारा, हमारा संगठन सुदृढ़ बना, प्रेम बढ़ा। हमें इस प्रेमभाव वृद्धि का और चिन्तन करना है। संघ एक परिवार है। हम सब परिवार के सदस्य हैं। हिन्दुस्तान में कई संघ हैं किन्तु गुरु हस्ती ने हमें जो सीख दी उसके कारण से हम 'गुरु एक : सेवा अनेक' का जीवनादर्श लिए जी रहे हैं। हर संघ हमें आदर देता है, यह खूबी रत्नसंघ में है और इस पर हमें गर्व है। संघ में अपनत्व बढ़े यह हमारी प्राथमिकता होगी तो हम सुख में-दुःख में गुरुभ्राताओं के साथ खड़े नज़र आयेंगे। संघ की युवा शक्ति के प्रति मनोभाव व्यक्त करते हुए बोथरा साहब ने कहा कि आज कई जगह यह सुनने को मिलता है कि युवक धर्म से दूर होते जा रहे हैं पर रत्नसंघ में मैं देखता हूँ आचार्य भगवन्त का चातुर्मास बैंगलोर का हो, चेन्नई का हो या मुम्बई का, यहाँ बुजुर्गों के बजाय युवकों की सेवा-साधना में ज्यादा संख्या रहती है। संघ में एक-एक व्यक्ति का योगदान संघ को आगे बढ़ाता है। बैंगलोर के भाई उत्तमचन्द जी भण्डारी श्रमणोचित उपचार में सजग हैं। श्री गौतमचन्द जी हुण्डीवाल-चेन्नई और उनके परिवार की सेवाओं की जितनी प्रशंसा की जाय, कम है। मैं ऐसे कई नाम गिना सकता हूँ। हम सेवा में और साधना में समर्पित भाव से बढ़ें। गुरु-भक्ति, संघ-सेवा का व्रत लेकर संघ-उन्नयन में उत्तरोत्तर प्रगति करें। हमारे संघ की पहचान हमारे आचार्य के नाम से है। हम अन्य स्थानों पर जाते हैं वहाँ भी विधियुक्त वन्दन कर चारित्रात्मा को यह सोचने को मजबूर कर जाते हैं कि यह गुरु हस्ती-गुरु हीरा का भक्त प्रतीत होता है। 'जिन्दगी जीओ मगर वीर बनकर' पंक्तियों का उच्चारण कर इस दिन कार्यक्रम के समापन की घोषणा की। अल्पाहार में परस्पर बातचीत एवं मिलना-जुलना बराबर बना रहा।

2 नवम्बर 2008 की कार्यवाही के अंश

सम्मेलन के दूसरे दिन कार्यक्रम संचालक ने संघ के शीर्ष संघ-सेवियों को मंचासीन करवाया एवं कार्यक्रम का शुभारंभ मंगलाचरण से हो उस भावना से श्राविका मण्डल की बहिनों को आमंत्रित किया। श्रीमती अभिलाषा हीरावत, श्रीमती कविता जैन, श्रीमती सुनीता डागा ने 'मंगलों में मंगल प्यारा, नवकार महामंत्र हमारा' की

समवेत स्वर में प्रस्तुति दी।

सर्वप्रथम रत्नसंघ के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष एवं शासन सेवा समिति के सदस्य **श्री कैलाशचन्द जी हीरावत** ने अपने मनोभाव व्यक्त करते कहा कि मुम्बई का सौभाग्य रहा कि हमें पूज्य गुरुदेव का दूसरा चातुर्मास मिला। आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के व्यक्तित्व-कृतित्व के परिप्रेक्ष्य में अपना अभिमत रखते हुए कहा कि ऐसे गुरु मिलना मुश्किल है, पर हम-सब भाग्यशाली हैं जिन्हें गुरु हीरा जो दूरदर्शी और निस्पृही महापुरुष हैं हमें गुरु के रूप में मिले हैं। रत्नसंघ में अनेकानेक अच्छाइयाँ भी हैं, लेकिन हम अपने परिवार की यशस्वी गाथाएँ प्रायः बताते कम हैं, हम हमारी कमजोरियाँ दूर करें, अच्छाइयाँ सामने लाएँ, जिससे संघ सदस्यों में समर्पण का भाव बढ़े। संघ में हम सारी जिम्मेदारी संतों पर नहीं डालें, किन्तु स्वयं जिम्मेदारी लेकर उसका निर्वहन करें।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष, संत-सेवी सुश्रावक **श्री पी.एस. सुराना साहब** ने कहा कि वैज्ञानिक, विद्वान् और वकील जल्दी से किसी की कोई बात नहीं मानते, उन्हें प्रूफ चाहिये। आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के गुणगान में प्रचलित 'पहाड़ से कठोर हो, चारित्र की संभाल में' पद्य की सत्यता का बोध उनके जीवन में पाया तो मैं धन्य हो गया। शान्त, सहज एवं ध्यानमग्न आचार्य श्री की मुखमुद्रा देखकर मुझे लगा कि काव्य स्तुति में जो कुछ कहा जा रहा है, सत्य है। 'श्रमणों में श्रेष्ठ आप संघ के प्रधान हैं' उक्ति पर भी मैंने पाया कि गुरु गुणगान में जो कहा जा रहा है वह अक्षरशः सत्य है। गुरु के प्रति हम-सबकी समर्पण की भावना उत्तरोत्तर बढ़े, यह कामना करते हुए सुराना साहब ने गुरु हीरा के व्यक्तित्व की सुन्दर प्रस्तुति दी।

वीरपिता अनन्य गुरुभक्त सुश्रावक **श्री सुकनमल जी गुगलिया-हैदराबाद** ने अपने विचार रखते कहा कि हमारे आचार्य भगवन्त पुर-पाटन-ग्राम-नगर सभी क्षेत्रों में विचरण करते हैं, हैदराबाद श्रीसंघ ने आपश्री के चरणों में विनति रखी, आचार्यप्रवर ने हो सकता है स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणों से हैदराबाद नहीं फरसा, किन्तु हमें व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा. की सेवा का सुअवसर प्रदान किया। व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा. के सद्बोध से हमारी बच्चियाँ रत्नसंघ में दीक्षित हुई हैं। व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. की प्रेरणा से हमारे बच्चे जो आठ-नौ बजे उठते थे अब 6 बजे जगकर धार्मिक स्कूल में जाते हैं। हमारे वहाँ 250-300 बच्चों का आना अच्छी उपलब्धि है। वीरपिता ने आन्ध्रप्रदेश में संत-सतीवृन्द के विचरण का

भाव सम्मेलन में व्यक्त किया।

सेवाभावी सुश्रावक **श्री भंवरलाल जी कटारिया** वेल्लूर ने विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा. के चातुर्मास एवं तदनन्तर स्वास्थ्य की प्रतिकूलता के कारण मिले दूसरे चातुर्मास के सुयोग से धर्म-साधना के क्षेत्र में आई जागृति का उल्लेख कर कहा कि हमें सेवा का नहीं, बल्कि धर्म-साधना का अवसर मिला, वह अनमोल अवसर रहा। आचार्य भगवन्त के चेन्नई आते और जाते विराजने से हमार क्षेत्र धन्य हो गया। हमें संत-सतीवृन्द की सेवा का सुयोग मिलता रहे।

बीजापुर के स्वाध्यायी **श्रावकरत्न श्री पारसमल जी बोथरा** ने अपने नगर की पुण्यवानी बताते कहा कि हमारे यहाँ अभी पाँचवां चातुर्मास चल रहा है जिसमें गुरु कृपा से हमें चार चातुर्मास रत्नसंघ के प्राप्त हुए हैं। पूज्य गुरुदेव की उदारता रही कि हमें आपश्री की अनुपम कृपा प्राप्त हुई। रत्नसंघ में शिथिलाचार नहीं है, इसलिए छोटा संघ होते हुए भी इसकी शोहरत है। बोथरा साहब ने आचार्यप्रवर के चातुर्मास के सुयोग से ज्ञान-ध्यान, त्याग-तप, साधना-आराधना के विविध कार्यक्रम प्रारम्भ हुए हैं, वे आगे भी बराबर चलते रहेंगे।

बागलकोट के सुश्रावक **श्री पुखराज जी बेताला** ने महासती श्री चारित्रलता जी म.सा. के चातुर्मास की उपलब्धियाँ बताते कहा कि चातुर्मास में सेवा-भक्ति में हमारी पूरी जागरूकता है। महासती मण्डल की प्रेरणा से आयोजित शिविर में बच्चे तो क्या हम अभिभावकों ने भी शिविर का लाभ लिया है,इससे पूर्व शिविर क्या होता है, हम नहीं जानते थे। पर्व तिथियों पर हमारे यहाँ साधना के कार्यक्रम होते रहते हैं।

युवारत्न बन्धु **श्री हरीश जी सांखला** ने बैंगलोर में गुरु-कृपा से आई जागृति के परिप्रेक्ष्य में विचार रखते कहा कि संघ-सेवा, संत-सेवा में हम सभी युवक सक्रिय हैं। विचरण-विहार के आनन्द को उजागर करते कहा कि विहार-सेवा के आनन्द को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता।

इचलकरंजी के ऊर्जावान श्रावकरत्न भाई **श्री पदमचन्द जी खाबिया** ने आचार्य श्री हीरा को 21वीं सदी का चमत्कार बताया। संघ-समाज में ज्ञान-क्रिया सम्पन्न संत-सतीवृन्द की कमी के परिप्रेक्ष्य में हमें ज्ञान-क्रिया के बेजोड़ संगम आचार्य हीरा का सभी क्षेत्रों में लाभ नहीं मिल सकता। आपश्री हर क्षेत्र संभालते हैं, लेकिन चातुर्मास तो किसी एक जगह पर ही रहता है। खाबिया साहब ने प्रवास कार्यक्रम एवं शिविरों के माध्यम से गाँव-गाँव, नगर-नगर को संभालने की आवश्यकता बताई।

उन्होंने एकनिष्ठ होकर गुरु के प्रति समर्पित रहने का अनुरोध किया।

कार्यक्रम संचालक श्री प्रकाशचन्द जी जैन ने सम्मेलन में बताया कि हमने हर क्षेत्र को अपने विचार रखने का अवसर दिया है, अभी भी बहुत से वक्ता बाकी हैं, लेकिन हमारे अनुरोध पर पधारे हुए प्रमुख गुरुभ्राताओं के स्वागत-सत्कार के अनन्तर हमें आचार्यप्रवर के पावन सान्निध्य का लाभ भी लेना है अतः मैं अन्य वक्ताओं को समय नहीं दे पाने के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

स्वागत-सम्मान

स्वागत-बहुमान में दक्षिण से पधारे गुरु भ्राताओं का माल्यार्पण कर स्वागत किया गया और शॉल ओढ़ाकर उनका संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक श्री मोफतराज जी मुणोत, संघाध्यक्ष श्री सुमेरसिंह जी बोथरा के कर-कमलों से सत्कार करवाया गया। सर्व श्री कैलाशचन्द जी दुग्गड़, श्री बुधमल जी बोहरा-चेन्नई, श्री चेतनप्रकाश जी डूंगरवाल, श्री उत्तमचन्द जी भंडारी, श्री महावीर जी मरलेचा, श्री यशवन्त जी सांखला, श्री हरीश जी सांखला-बैंगलोर, श्री नन्दलाल जी रूणवाल-बीजापुर, श्री पदमचन्द जी खाबिया-इचलकरंजी, श्री कांतिलाल जी चौधरी-धुलिया, श्री पारस जी कांकरिया-जलगाँव, श्री पारसमल जी सुखानी-रायचूर, श्री विजयराज जी छाजेड़-शोरापुर, श्री अनिल जी नाहटा-बंगारपेट, श्री आनन्द जी पटवा, श्री बुधमल जी बागमार-मैसूर,श्री किशनलाल जी बागमार-गदग, वीरपिता श्री सुकनराज जी गुगलिया-हैदराबाद, श्री वीरचन्द जी बागमार-बागलकोट, सौ. ललिता जी चोरडिया-बागलकोट, श्री प्रकाश जी मेहता-शिमोगा, श्री पारसमल जी बोथरा-बल्लारी, श्री राजेन्द्र जी कटारिया-बेलगाँव, श्री महेन्द्र जी कटारिया-नागपुर का अभिनन्दन किया गया।

समापन में संघाध्यक्ष **श्री सुमेरसिंह जी बोथरा** ने संघ के प्रति समर्पित रहने का आह्वान किया। स्थानीय **संघमंत्री श्री दिलखुशराज जी जैन** ने आभार व्यक्त किया।

सम्मेलन में श्री कैलाशचन्द जी दुग्गड़-चेन्नई ने तीन प्रस्ताव रखे- आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. द्वारा महाराष्ट्र सहित दक्षिणी प्रदेशों के सिंचन के लिए आभार, भविष्य में संत-सतियों द्वारा दक्षिणी क्षेत्रों में विचरण करने का अनुरोध और मुम्बई श्री संघ को सुन्दर व्यवस्था के लिए धन्यवाद। ये प्रस्ताव सर्वानुमति से स्वीकार किए गए।

हर्ष-हर्ष, जय-जय से कार्यक्रम समापन के पश्चात् सम्मेलन में पधारे सभी सज्जन परमाराध्य पूज्य गुरुवर्य के पावन श्रीचरणों में प्रवचनसभा स्थल पर उपस्थित

हुए।

आचार्यप्रवर द्वारा उद्‌बोधन

पूज्य गुरुदेव ने अपने आशीर्वचन में फरमाया कि आज संसार में एक हवा-सी चल गई है। हवा क्या? पुरुषार्थहीनता। मेहनत कम-आय ज्यादा हो। इस हवा ने आरोग्य को कमजोर कर दिया है। जो मेहनत से कमाते थे वे आज भी सुखी हैं और बिना मेहनत के जो पाना चाहते हैं वह चाहे सट्‌टा हो, जुआ हो, शेयर बाजार हो, वायदा हो कमा भले ही लें वे सुखी शायद कहूँ, नहीं हैं। मेहनत कम,आय ज्यादा- इस हवा ने मेहनत से कमाने वाले लोगों को भी अपनी गिरफ्त में ले लिया है। वे भी शेयर का काम करने लगे हैं। शेयर मार्केट की स्थिति क्या है, आप अच्छी तरह जानते हैं। मैं इस बारे में मात्र इतना ही कहना चाहता हूँ कि शेयर का काम भी व्यसन है और व्यसन शांति और समाधि के साथ आरोग्य भी घटाता है। व्यसन विपत्ति का घर है, संकट में डालने वाला है भले ही वह आपको नज़र में आए या नहीं, प्रकृति आपको भान करा देगी। पहले माताएँ घर में मेहनत करती थीं। पीसना-कूटना और हाथ से काम करती, आज हाथ से काम छूट गया, अब महिलाओं का स्वास्थ्य कैसा है आप स्वयं अनुभव कर सकते हैं। आरोग्य चाहते हो तो मेहनत करो, आय चाहते हो तो पुरुषार्थ करो। बिना मेहनत की कमाई घर में रखने के पहले सात बार सोचो, बिना सोचे घर में रख ली तो घर की मूल पूँजी को भी वह साफ करने वाली बन सकती है।

संस्कारों की आवश्यकता के संदर्भ में आचार्यप्रवर ने नित्यप्रति स्मरण, स्वाध्याय, सामायिक की प्रेरणा करते कहा कि जो नित्य नहीं कर सकते वे सप्ताह में एक दिन सामूहिक सामायिक करें तो भी संस्कार बने रहेंगे। संस्कारों के निर्माण में व्यसन-त्याग की जरूरत पर बल देते हुए आचार्यप्रवर ने कहा- श्रावक का मूल आधार व्यसन निवारण है। गुरु हस्ती जब भी किसी को सम्यक्त्व दिलाने, सामायिक करने का फरमाते तो पहले सप्त कुव्यसन का त्याग करवाते थे।

आचार्य श्री ने 'घर-घर पाठशाला' हो सूत्र प्रदान करते कहा कि आप बच्चे-बच्चियों को धार्मिक पाठशाला में भेजें। साथ-ही-साथ उन्हें घर पर परिवार के साथ लेकर बैठें और कुछ-न-कुछ संस्कार सृजित हो वैसी सद्‌सीख दें।

आचार्यप्रवर ने सम्मेलन में पधारे हुए श्रावक-श्राविकाओं के साथ मुम्बई महानगर के उपस्थित जन-समुदाय से सामूहिक नियम के रूप में व्यसन से दूर रहने और परिवार के साथ सप्ताह में एक दिन बैठकर संस्कार देने का संकल्प करवाया।

आचार्यप्रवर के मंगलपाठ पश्चात् सम्मेलन समाप्त हुआ।

उत्तराध्ययन सूत्र खुली किताब परीक्षा आयोजित

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की जयपुर शाखा द्वारा 'उत्तराध्ययन सूत्र खुली किताब परीक्षा' का आयोजन किया जा रहा है। यह प्रतियोगिता सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा प्रकाशित 'उत्तराध्ययन सूत्र' के तीन भागों पर की जा रही है। पुस्तक के तीनों भाग 110 रुपये में उपलब्ध हैं। डाक द्वारा मंगवाये जाने पर 140 रुपये भेजने होंगे। प्रश्न-पुस्तिका 30 रुपये में उपलब्ध है तथा डाक द्वारा मंगवाये जाने पर 40 रुपये में भेजी जा सकेगी। उत्तर पुस्तिका जमा कराने की अन्तिम तिथि 15 फरवरी, 2009 है तथा परिणाम तिथि 15 अप्रेल, 2009 है। प्रतियोगिता में पुरस्कार इस प्रकार देय हैं- 1. **पूर्ण ५०० अंक प्राप्त करने पर(आगमश्रेष्ठी सम्मान)**-51,000/- रु., 2. **प्रथम स्थान**-21,000/-, 3. **द्वितीय स्थान**-11,000/-, 4. **तृतीय स्थान**-5,000/-, 5. **तीस प्रोत्साहन पुरस्कार**(आगम वाचना सम्मान)- 1000/- रु.(प्रत्येक)

प्रश्नपुस्तिका मंगवाने एवं भिजवाने का पता:- सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर (राज.), फोन नं. 0141-2575997

शिविर आयोजन

शिमोगा- मधुर व्याख्यानी महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा., आदि ठाणा के शिमोगा चातुर्मास के सुअवसर पर श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, शिमोगा एवं श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के तत्त्वावधान में दिनांक 15 से 19 अक्टूबर 2008 तक पंच दिवसीय 'सम्यक् संस्कार शिविर' सम्पन्न हुआ। शिविर में 70 युवक, 80 महिलाएँ एवं 125 बच्चों सहित कुल 275 शिविरार्थियों ने ज्ञानार्जन प्राप्त किया तथा अनेक व्रत-प्रत्याख्यान भी ग्रहण किए। शिविर में महासती-मण्डल का योगदान एवं मार्गदर्शन प्राप्त किया। शिविर में दिव्यरत्न निधि शिविर में प्रशिक्षित-श्री अनिल जी भंसाली-बैंगलोर, श्री प्रकाश जी मेहता-शिमोगा, श्री सुभाष जी धोका-मैसूर, श्रीमती अमिता जी कवाड़-चैन्नई, श्रीमती मंजू जी डागा-जयपुर, श्रीमती अनिता जी भंसाली-बैंगलोर, श्रीमती कविता जी मेहता-शिमोगा एवं सुश्री तृप्ति जी बागमार-हुबली ने अपनी अमूल्य सेवाएँ प्रदान कीं।

बीजापुर- महासती श्री इन्दिरा प्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 5 के बीजापुर चातुर्मास के सुअवसर पर श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, बीजापुर एवं श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के तत्त्वावधान में दिनांक 8 से 12 अक्टूबर 2008 तक पंच दिवसीय 'सम्यक् संस्कार शिविर' सम्पन्न हुआ। इसका विस्तृत विवरण पूर्व में महासती

श्री ज्ञानलता जी म.सा. के चातुर्मासिक समाचारों में उल्लिखित है।

बेलगाँव- परम विदुषी महासती श्री सुशीला कंवर जी म.सा. आदि ठाणा-5 के बेलगाँव चातुर्मास के सुअवसर पर श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, बेलगाँव एवं श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के तत्त्वावधान में दिनांक 11 से 15 अक्टूबर 2008 तक पंच दिवसीय 'सम्यक् संस्कार शिविर' सम्पन्न हुआ। शिविर में 40 युवक, 40 महिलाएँ एवं 40 बच्चों सहित कुल 120 शिविरार्थियों ने ज्ञानार्जन किया एवं अनेक त्याग-प्रत्याख्यान भी ग्रहण किए। शिविर में महासती मण्डल का योगदान एवं मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। शिविर में दिव्य रत्न निधि शिविर में प्रशिक्षित- श्री अशोक जी कवाड़-चैन्नई, श्री प्रमोद जी सिंघवी-बैंगलोर, श्री अरविन्द जी भंसाली-बैंगलोर, श्रीमती सुनिता जी भंसाली- बैंगलोर, श्रीमती अरूणा जी लुंकड़-हुबली, श्रीमती लक्ष्मी बाई तातेड़-हुबली ने अपनी अमूल्य सेवाएँ प्रदान कीं।

बागलकोट- मधुर व्याख्यानी महासती श्री चारित्रलता जी म.सा. आदि ठाणा-4 के बागलकोट चातुर्मास के सुअवसर पर श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, बागलकोट एवं श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के तत्त्वावधान में दिनांक 8 से 12 अक्टूबर 2008 तक पंच दिवसीय 'सम्यक् संस्कार शिविर' सम्पन्न हुआ। शिविर में 35 युवक, 35 महिलाएँ एवं 65 बच्चों सहित कुल 135 शिविरार्थियों ने ज्ञानार्जन किया एवं अनेक त्याग-प्रत्याख्यान भी ग्रहण किए। शिविर में महासती मंडल का योगदान व मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। शिविर में श्री भरत जी साँखला-बैंगलोर, श्री वेदान्त जी साँखला-बैंगलोर, श्रीमती तारा जी साँखला-बैंगलोर, श्रीमती प्रियंका जी गोगड़-सवदती, सुश्री वीणा पालरेचा-कोप्पल, सुश्री पूनम लुँकड़-कोप्पल ने अपनी अमूल्य सेवाएँ प्रदान कीं।

उपर्युक्त शिविरों में ज्ञानार्जन के साथ सामान्य रूप से 25 प्रकार के प्रत्याख्यान कराए गए- होली नहीं खेलना, फटाखे नहीं फोड़ना, माता-पिता से बहस नहीं करना, स्प्रे का प्रयोग नहीं करना, सामायिक करना, माला फेरना, अण्डे का केक नहीं खाना, भोजन करते समय टी.वी. नहीं देखना, 17 साल की उम्र से पहले स्वयं का मोबाइल नहीं रखना, गाली नहीं देना, बोतल वाले कोल्ड ड्रिंक्स नहीं पीना, होटल में नहीं जाना, सिल्क के कपड़े नहीं पहनना, चमड़े से बनी चीजों का उपयोग नहीं करना, स्थानक में सेल की घड़ी/मोबाइल लेकर नहीं आना, किसी को भी मोबाइल पर अश्लील मैसेज नहीं भेजना, रोज 12 या 8 वन्दना करना, माता-पिता से झूठ नहीं बोलना, सोते समय सागारी संथारा लेना, प्रतिदिन 3 मनोरथ का चिंतन करना, संत-सतियों की निन्दा नहीं करना, वर्ष में 3 दिन संत-सतियों की सेवा में रहना, महीने में

मर्यादित दिन रात्रि भोजन का त्याग करना, जमीकंद की मर्यादा, व्यसन का त्याग करना। शिमोगा में 1050, बीजापुर में 800, बागलकोट में700 व बेलगाँव में 500 व्रत-प्रत्याख्यान हुए। इनके अलावा बीजापुर में सामूहिक भोजन में जमीकंद का त्याग, ब्रह्मचर्य की मर्यादा, प्रतिदिन सामायिक का नियम, मांसाहारी होटल का त्याग तथा बागलकोट में साधु-साध्वी से खुले मुँह बात नहीं करना, गुरु का आदर करना एवं शिमोगा में टी.वी. की मर्यादा आदि अनेक छोटे-बड़े त्याग प्रत्याख्यान हुए।

मुम्बई में 18 एवं 19 अक्टूबर को आचार्य हस्ती व्याख्यानमाला के अन्तर्गत विद्वानों के विशेष व्याख्यान

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा के पावन चातुर्मास में कल्पतरु गार्डन भवन के परिसर में 18 एवं 19 अक्टूबर 2008 को आचार्य हस्ती व्याख्यानमाला के अन्तर्गत निम्नांकित विद्वानों के विशेष व्याख्यान हुए-

1. प्रोफेसर सागरमल जैन, निदेशक, प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर (म.प्र.)
2. डॉ. चन्द्रशेखर, अध्यक्ष, दर्शनशास्त्र-विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर
3. डॉ. धर्मचन्द जैन, सम्पादक-जिनवाणी, प्रोफेसर-संस्कृत विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

शनिवार, 18 अक्टूबर 2008 को प्रवचन-सभा में प्रातः 9.30 बजे से 10.00 बजे तक **डॉ. चन्द्रशेखर, जोधपुर** ने 'आधुनिक जीवन और जैनदर्शन' विषय पर व्याख्यान देते हुए कहा कि आधुनिक युग वैज्ञानिक युग है, जिसमें व्यक्ति की जीवन शैली सुख एवं सुविधामूलक है। व्यक्ति इन्द्रिय एवं मन के द्वारा अधिकाधिक सुख-सुविधाओं का भोगोपभोग करने के लिए लालायित रहता है। इसके विपरीत जैनदृष्टि इन्द्रिय एवं मन पर विजय का मार्ग प्रस्तुत करती है। इस विजय के मार्ग पर बढ़ने वाले के समक्ष इन्द्रियजन्य सुख-सुविधाएँ गौण हो जाती हैं। डॉ. धर्मचन्द जैन ने डॉ. चन्द्रशेखर का परिचय दिया। इस व्याख्यान के समय पूज्य आचार्यप्रवर एवं संतवृन्द भी विराजमान थे।

डॉ. चन्द्रशेखर के वक्तव्य के पश्चात् **तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.** ने अपने प्रवचन में आगमिक आधारों पर इस तथ्य की पुष्टि की कि धर्म पर श्रद्धा करने वाला साता-सुखों से विरक्त होता है। इन्द्रियजन्य सुखों में आसक्त व्यक्ति जहाँ मिथ्यादृष्टि होता है वहाँ इन्द्रिय-जय के मार्ग पर आगे बढ़ने वाला व्यक्ति सम्यग्दृष्टि होता है।

इसी दिन रात्रि 7.30 से 10.00 बजे तक क्लब हाउस, कल्पतरु गार्डन में **'तनाव : कारण और निवारण'** विषय पर आयोजित व्याख्यान में **प्रोफेसर सागरमल जी जैन** ने कहा कि व्यक्ति में तनाव उत्पन्न होने के प्रमुख रूप से तीन कारण हैं- 1. आकांक्षा 2. उपेक्षा और 3. आग्रहबुद्धि। वह अपनी इच्छाओं अथवा आकांक्षाओं के कारण तनाव में आ जाता है। जब हम दूसरों से अपनी इच्छाओं की पूर्ति कराना चाहते हैं तो वे इच्छाएँ अपेक्षा का रूप ले लेती हैं। जब अपेक्षाएँ पूरी नहीं होती हैं तो तनाव उत्पन्न हो जाता है। इसी प्रकार व्यक्ति की आग्रह-प्रवृत्ति भी उसे तनाव में डाल देती है। इसके पीछे व्यक्ति का अपना अभिमान भी कारण बनता है। तनाव उत्पन्न होने के जो कारण हैं, उन्हें छोड़ देने से व्यक्ति तनाव रहित हो सकता है। उसके अतिरिक्त समत्वभाव की साधना व्यक्ति को तनावमुक्त होने में सहायक बनती है। न राग करें न द्वेष तो तनाव उत्पन्न ही नहीं होगा।

डॉ. चन्द्रशेखर ने इसी विषय पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि तनाव उत्पन्न होने में शारीरिक कारण भी होते हैं, यथा लीवर आदि अंगों में हार्मोन प्रवाह में उत्पन्न अव्यवस्था। इसके अतिरिक्त राजनीतिक एवं आर्थिक सम्बन्धों के कारण भी तनाव उत्पन्न होता है। तनाव उत्पन्न होने का एक कारण है मानवीय-सम्बन्धों में असामंजस्य। किसी वस्तु, व्यक्ति पर अधिकार जताना भी तनाव का कारण है। व्यक्ति अपने मन में अपनी प्रतिमा बनाता है तथा फिर उसे बचाने का प्रयत्न करता है। यह भी तनाव का एक प्रमुख कारण है। वह अपनी काल्पनिक प्रतिमा घड़ता है। सिकन्दर ने विश्व-विजेता की प्रतिमा घड़ी, किन्तु इसके कारण वह बहुत तनाव में गुजरा है। तनाव निवारण के लिए हमें मानसिक, वाचिक एवं कायिक रूप से स्वस्थ रहना चाहिए। इन्द्रिय एवं मन को अपनी ओर समेट लेना चाहिए। जो काम हाथ में है उसे दक्षता एवं नवीनता के साथ पूरा करना चाहिए। डॉ. चन्द्रशेखर ने ध्यान, प्राणायाम आदि को भी तनाव को दूर करने में उपाय बताया।

डॉ. धर्मचन्द जैन ने कार्यक्रम का संचालन करते हुए कहा कि व्यक्ति की स्वयं की आदतें, उसका नकारात्मक सोच एवं असन्तुलित जीवन शैली उसके जीवन में तनाव उत्पन्न करती हैं। तनाव का प्रमुख कारण राग-द्वेषात्मक प्रवृत्ति है। यह सूक्ष्म स्तर पर होता है तो हमें तनाव का अनुभव नहीं होता, किन्तु जब इसका आधिक्य होता है तो हमें तनाव का अनुभव होने लगता है। तनाव के कारण हमारे संवेग (Emotions)असन्तुलित हो जाते हैं, विवेक कुण्ठित हो जाता है, दिमाग किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है एवं कार्य ठीक से सम्पादित नहीं होता है। जैनदर्शन में

आर्त्तध्यान एवं रौद्रध्यान तनाव के ही सूचक हैं। कषायमात्र तनाव का कारण है। यह एक प्रकार से क्रोधादि की सूक्ष्म अवस्था है जो तनावमुक्त व्यक्ति को छेड़ने पर क्रोध के रूप में प्रकट होती है। व्यक्ति का अज्ञान ही उसके तनाव का प्रमुख कारण है। ज्ञान के प्रकाश में उत्पन्न तनाव को जानकर उसका निराकरण करने हेतु हमें सजग होने की आवश्यकता है।

अन्त में व्याख्यानमाला के संयोजक श्री नरेन्द्र जी हीरावत, मुम्बई ने इन व्याख्यानों पर प्रमोद प्रकट करते हुए धन्यवाद ज्ञापित किया।

19 अक्टूबर 2008 को प्रवचन सभा में प्रातः 9.30 बजे **प्रो. सागरमल जी जैन, शाजापुर** ने **'स्वाध्याय'** विषय पर मार्मिक विचार प्रकट करते हुए कहा स्वाध्याय का तात्पर्य है आत्मदर्शन और इसका लक्ष्य है- आत्मविशुद्धि। आत्मनिरीक्षण अथवा आत्मदर्शन से ही व्यक्ति आत्मविशुद्धि की अवस्था को प्राप्त कर सकता है। अगर कोई दूसरे के घर में ताका झाँकी करे तो क्या इसे उचित कहा जाएगा? इसी प्रकार कोई दूसरे के दोषों को देखे एवं अपने दोषों को देखने से बचता रहे तो इसे उचित नहीं कहा जा सकता। आज हम अपनी आत्मा में कचरा इकट्ठा करते रहते हैं तथा उस भीतर के कचरे पर सुनहरी चादर डालने की कोशिश करते हैं, किन्तु इससे आत्मविशुद्धि होने वाली नहीं है। आत्मशुद्धि हेतु अपने भीतर जमे हुए कचरे को निकालना आवश्यक है और वह स्वाध्याय के बिना सम्भव नहीं है। स्वाध्याय तो परमतप है जो ज्ञानावरणीय कर्म की एवं अन्य कर्मों की निर्जरा में सहायक है।

डॉ. धर्मचन्द जैन ने भी 'स्वाध्याय' विषय पर विचार व्यक्त किए। उन्होंने कहा कि आचार्यप्रवर पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. ने अपने संदेशों में दो पर बल दिया- सामायिक एवं स्वाध्याय। उन्होंने माला एवं जाप की अपेक्षा स्वाध्याय पर बल दिया, क्योंकि स्वाध्याय ही व्यक्ति को भीतर से आलोकित करता है। व्यक्ति धार्मिक क्रियाओं को यान्त्रिकता से न करके भावपूर्वक आत्मविशुद्धि हेतु आचरित करे, यही उनके उपदेश का प्रमुख लक्ष्य था। डॉ. जैन ने स्वाध्याय के भेदों-वाचना, पृच्छना, परिवर्तना, अनुप्रेक्षा एवं धर्मकथा के महत्त्व का प्रतिपादन किया तथा इन भेदों को आत्म-विकास एवं आत्मविशुद्धि में सहायक प्रतिपादित किया।

कार्यक्रम का संचालन श्री नरेन्द्र जी हीरावत, मुम्बई ने किया तथा प्रो. सागरमल जैन का परिचय डॉ. धर्मचन्द जैन ने दिया।

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने भी अपना उद्बोधन स्वाध्याय विषय पर ही दिया। उन्होंने फरमाया कि मात्र अपने आपको कोई जान ले तो

समझो उसने सब कुछ जान लिया। सबको जानकर भी यदि अपने आपको नहीं जाना तो समझो उसने कुछ नहीं जाना। 'स्वेन स्वस्य अध्यायः स्वाध्यायः' अर्थात् स्वयं के द्वारा स्वयं कां अध्ययन ही स्वाध्याय है। इसे सरल शब्दों में कहा जाए तो स्वयं के द्वारा स्वयं के दोषों को जानना एवं दूर करना स्वाध्याय है। स्वाध्याय रामबाण दवा है। ऐसा कोई दोष नहीं है, जिसका समाधान स्वाध्याय में न हो।

अपराह्न में 2 बजे क्लब हाउस में **'धर्म का मर्म'** विषय पर संगोष्ठी प्रारम्भ हुई, जिसका संचालन श्री नरेन्द्र जी हीरावत एवं डॉ. धर्मचन्द जैन ने किया। **प्रोफेसर सागरमल जी जैन, शाजापुर** ने धर्म के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए उसके विभिन्न रूपों का प्रतिपादन किया। उन्होंने वस्तु के स्वभाव को धर्म प्रतिपादित करते हुए आत्मा के स्वभाव एवं विभाव की व्याख्या की। क्षमा, मार्दव आदि स्वभाव को धर्म कहा तथा क्रोध, मान आदि विभावों को अधर्म कहा। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह को उन्होंने धर्म के रूप में व्याख्यायित किया। दूसरों के साथ हमारा व्यवहार कैसा हो, इसे उन्होंने मानवधर्म के रूप में स्पष्ट किया। प्रोफेसर जैन ने इस आमधारणा का खण्डन किया कि धर्म का फल इस लोक में नहीं परलोक में अथवा परभव में मिलता है। उन्होंने कहा कि धर्म का फल इसी लोक में एवं तत्काल मिलता है। क्रोध नहीं करेंगे तो उससे शान्ति रूपी फल इसी समय मिल जाएगा। इसलिए धर्म को नकद का व्यापार समझें, उधार का नहीं। **डॉ. चन्द्रशेखर जी, जोधपुर** ने कहा कि हमें सत्यनिष्ठ होना चाहिए। सत्य ही बोलें एवं सत्य का ही दृढ़ता के साथ आचरण करें। 'सत्य' बोलने के सम्बन्ध में चर्चा भी हुई, जिसके निष्कर्ष रूप में यह तथ्य उभरकर आया कि हमें निरवद्य सत्य बोलना चाहिए। ऐसा कटु सत्य बोलने से बचना चहिए जो कलह उत्पन्न करने वाला हो अथवा किसी को आहत करने वाला हो।

डॉ. धर्मचन्द जैन, जोधपुर ने संयोजन करते हुए कहा कि धर्म जीवन जीने की कला सिखाता है। यह विचार एवं आचार दोनों से सम्बद्ध है जिसे श्रुतधर्म एवं चारित्रधर्म कहा गया है। यह स्वभाव के रूप में एक प्रकार का, ज्ञान एवं क्रिया के भेद से दो प्रकार का, ज्ञान, दर्शन, चारित्र के भेद से तीन प्रकार का तथा तप को मिलाकर चार प्रकार का है। क्षमा, मुक्ति, आर्जव, मार्दव आदि के भेद से धर्म के दस प्रकार भी हैं। उन्होंने कहा कि जहाँधर्म का सम्यक् रूप है वहाँ नैतिकता स्वतः आ जाती है, किन्तु नैतिकता हो, वहाँ धर्म का होना आवश्यक नहीं है। धर्माराधन लौकिक कामनाओं की पूर्ति के लिए नहीं आत्म-विशुद्धि के लिए होना चाहिए।

अन्त में संघ की ओर से विद्वानों का अभिनन्दन किया गया तथा व्याख्यान

माला के संयोजक श्री नरेन्द्र जी हीरावत एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष श्री पी.एस. सुराना ने धन्यवाद ज्ञापित किया। व्याख्यानमाला के सभी कार्यक्रमों में अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के संरक्षक मण्डल के संयोजक श्री मोफतराज जी मुणोत, स्थानीय संघाध्यक्ष श्री पारसचन्द जी हीरावत आदि श्रावकरत्न भी उपस्थित रहे।

बोर्ड की वरीयता सूची में संशोधन

अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड द्वारा कक्षा 1 से 14 तक की परीक्षा 27 जुलाई 2008 को आयोजित की गई थी। इस परीक्षा की वरीयता सूची माह अक्टूबर 2008 की जिनवाणी में पृष्ठ संख्या 86-87 पर प्रकाशित की गई थी। पुनः मूल्यांकन के कारण नवमीं कक्षा की वरीयता सूची में परिवर्तन हुआ है। शेष कक्षाओं की वरीयता सूची पूर्ववत् है। नवमी कक्षा की संशोधित वरीयता सूची इस प्रकार है-

रोल नं.	नाम	केन्द्र	प्राप्तांक	स्थान
8600	कविता मनोजकुमार जी जैन	मुम्बई	97	प्रथम
7646	प्रेम कुशलचन्द जी संचेती	अलवर	95	द्वितीय
8598	अभिलाषा अजय जी हीरावत	मुम्बई	95	द्वितीय
688	कुसुम परेश जी पुनमिया	इचलकरंजी	94	तृतीय

आगामी परीक्षा कक्षा 1 से 8 तक के लिये **4 जनवरी 2009, रविवार को आयोजित होंगी**। इस परीक्षा हेतु आवेदन-पत्र भरकर भिजवाने की अन्तिम दिनांक 10 दिसम्बर 2008 है। आपसे निवेदन है कि अधिकाधिक भाई-बहिनों को परीक्षा में भाग लेने हेतु अवश्य प्रेरित करावें। विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें- *राजेश कर्नावट, सचिव, अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन नं. 0291-2630490*

संस्कार केन्द्र का प्रवास कार्यक्रम सम्पन्न

अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर द्वारा अजमेर, जयपुर व हिण्डौन सिटी क्षेत्र के ग्राम-नगरों में 11-12 अक्टूबर को दो दिवसीय प्रवास कार्यक्रम रखा गया। 11 अक्टूबर को प्रातः वैशाली नगर, अजमेर में सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा. की प्रवचन सभा में संस्कार केन्द्र के सचिव श्री सुभाष जी हुण्डीवाल ने बालक-बालिकाओं में नैतिक एवं धार्मिक संस्कारों के निर्माण, प्रोत्साहन, बच्चों को प्रतिज्ञाबद्ध करवाने, पारिवारिकजनों एवं अभिभावकों से सम्पर्क कर बच्चों को संस्कार निर्माण का दायित्व निर्वाह करने में सक्रिय सहयोग

देने की प्रबल प्रेरणा की। उन्होंने बताया कि संस्कार केन्द्रों के माध्यम से 3 से 12 वर्ष के बालक-बालिकाओं को 'सामायिक' मूलविधि एवं 32 दोषों सहित कण्ठस्थ करने पर 51/-, सामायिक अर्थ सहित कण्ठस्थ करने पर101/-, प्रतिक्रमण मूल विधि सहित कण्ठस्थ करने पर 250/-, प्रतिक्रमण अर्थ कण्ठस्थ करने पर 250/-, पच्चीस बोल मूल कण्ठस्थ करने पर 101/- व पच्चीस बोल अर्थ सहित कण्ठस्थ करने पर 151/- पारितोषिक प्रदान किये जाते हैं।

संस्कार केन्द्र की संयोजिका श्रीमती विमला जी मेहता ने पृष्ठभूमि पर विचार रखते हुए बताया कि बच्चों को संस्कारित करने की आज महती आवश्यकता है। श्राविका मण्डल अजमेर की सदस्य श्रीमती सुशीला दुग्गड़, मंजूजी जैन ने भी अपने विचार रखे। श्राविका मण्डल की सक्रिय सदस्यों ने चातुर्मास समाप्ति पूर्व अपने क्षेत्र में संस्कार केन्द्र खोलने का आश्वासन दिया। अजमेर से शिष्टमण्डल के साथ संघमंत्री व संस्कारकेन्द्र के सदस्य श्री सुरेशचन्द जी कोठारी साथ में रहे, उन्होंने अपने उद्‌बोधन में बच्चों को संस्कारित करने के लिए संस्कार केन्द्र की महत्ता पर बल दिया।

11 अक्टूबर को सायं हिण्डौन सिटी में विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा के दर्शन-वन्दन व प्रतिक्रमण पश्चात् स्थानीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, युवक परिषद्, स्वाध्याय संघ, श्राविका मण्डल के सदस्यों की आवश्यक बैठक रखी गई जिसमें संस्कार केन्द्र द्वारा आयोजित विभिन्न गतिविधियों की जानकारी दी गई। पल्लीवाल क्षेत्र में चल रही पाठशालाओं की गतिविधियों की जानकारी प्राप्त की गई और आवश्यक विचार-विमर्श किया गया।

दिनांक 12 अक्टूबर 2008 को मानसरोवर-जयपुर में व्याख्यात्री महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण पश्चात् संस्कार केन्द्र की संयोजिका श्रीमती विमला जी मेहता ने अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र के गठन की जानकारी प्रदान की तथा बालकों में सुसंस्कारों हेतु इसकी आवश्यकता प्रतिपादित की।

संस्कार केन्द्र के सचिव श्री सुभाष जी हुण्डीवाल ने पाठशाला के सम्बन्ध में विस्तार से प्रकाश डाला तथा कोषाध्यक्ष श्री मन्नालाल जी बोथरा ने सभी सदस्यों को वर्तमान में चल रही पाठशालाओं की गतिविधियों से अवगत कराया। राजस्थान उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधिपति माननीय श्री जसराज जी चौपड़ा ने अपने उद्‌बोधन में कहा-चारित्र के तेल एवं ज्ञान की बाती से संस्कारों का दीप जलेगा। इंसान तो बहुत हैं, पर इंसानियत नहीं है। एक हजार पिता जो काम नहीं कर सकते वह एक माँ कर सकती

है। श्री चौपड़ा साहब ने भी उपस्थित सभी अभिभावकों से बच्चों को संस्कार केन्द्र में भेजने की अपील की। श्रीमती शान्ता जी कर्णावट ने सभी स्थानों पर मंगलाचरण किया।

अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री सुमेरसिंह जी बोथरा, संघमंत्री व संस्कार केन्द्र के सदस्य श्री सुरेशचन्द जी कोठारी, अ.भा. युवक परिषद् के परामर्शदाता श्री अशोक जी कवाड़, कार्याध्यक्ष श्री प्रमोद जी हीरावत, युवक परिषद् जयपुर शाखा के उपाध्यक्ष श्री अनन्त जी सेठ, सचिव श्री प्रशान्त जी कर्नावट, श्राविका मण्डल जयपुर शाखा की सचिव श्रीमती मीना जी गोंलेछा सहित पदाधिकारियों से संस्कार केन्द्र को सक्रिय बनाने हेतु विचार-विमर्श किया गया।

-विमला मेहता, संयोजक

जीटो (JITO) द्वारा आई.ए.एस. परीक्षा की तैयारी हेतु सुविधाएँ

जैन इण्टरनेशनल ट्रेड ऑर्गेनाइजेशन (JITO) द्वारा मुम्बई, दिल्ली आदि अनेक नगरों में आई.ए.एस. परीक्षा की तैयारी हेतु केन्द्र खोले गए हैं। इच्छुक विद्यार्थी www.jito.org (Email-anil@jito.org) पर सम्पर्क कर सकते हैं।

पशु-वध गृह बंदी के आदेश

राजस्थान सरकार के स्वायत्त शासन विभाग के आयुक्त ने पत्र क्रमांक पं. 24 (ग)(13)/नियम/डीएलबी/89/5585-5768 दिनांक 11.9.08 से सभी नगर निगम, नगर परिषद् एवं नगर पालिकाओं को आदेश प्रसारित कर भगवान् पार्श्वनाथ के जन्म दिवस पौष कृष्णा 10 रविवार 21.12.2008 को सभी बूचड़खाने एवं माँस-मछली की दुकानें बन्द रखने का आदेश किया है। जैन समाज उक्त आदेश की पालना हेतु विशेष ध्यान रखे।

संक्षिप्त समाचार

बागलकोट- अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मंडल की अध्यक्षा डॉ. मंजुला जी बम्ब के निर्देशन में 25 अक्टूबर 2008 को बागलकोट के स्थानीय श्राविकाओं की एक सभा का आयोजन किया गया, जिसमें श्राविकाओं को अध्यक्षा महोदया ने निम्नलिखित प्रेरणाएँ प्रदान की।

1. भ्रूण हत्या महापाप विषय में श्राविकाओं को प्रेरित किया गया कि वह आस-पड़ौस में अपने मित्रों तथा सगे-सम्बन्धियों एवं स्कूल-कॉलेजों में भ्रूण हत्या रोकने हेतु

उचित प्रयास करें।

2. तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करने के सम्बन्ध में एक रूपता रहे, इस हेतु अध्यक्षा महोदया ने बताया कि निज मुख को घड़ीवत् मानना, अपने दोनों हाथों को मस्तक के सम्मुख रखकर, अपने बायीं ओर से आवर्तना प्रारम्भ कर दायीं ओर जाना। इस प्रकार तीन बार वन्दना करने की विधि बतायी गयी।
3. उन्होंने आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा में भाग लेने, बच्चों में नैतिक संस्कार-वपन करने के लिए प्रत्येक रविवार को पाठशाला में भेजने हेतु प्रेरित किया।
4. श्राविकाओं के ज्ञानवर्द्धन के लिए तथा प्रेम, एकता, संगठन और समर्पण हेतु सप्ताह में एक दिवस की कक्षा रखने का भी सुझाव दिया तथा श्राविका मंडल द्वारा आयोजित उत्तराध्ययनसूत्र की खुली किताब प्रतियोगिता में अधिक संख्या में भाग लेने हेतु प्रेरणा की।

हैदराबाद- श्री जैन रत्न युवक परिषद् हैदराबाद शाखा द्वारा दिनांक 12.10.2008 को चिन्तन संगोष्ठी का आयोजन किया गया। नमस्कार महामंत्र के जाप से गोष्ठी का शुभारम्भ हुआ। गोष्ठी में श्री जैन रत्न युवक परिषद्, हैदराबाद शाखा को स्वधर्मि वात्सल्य एवं समाज-सेवा के क्षेत्र में पुरस्कृत किए जाने पर परामर्शदाता श्रीपाल जी देशलहरा ने प्रमोद व्यक्त किया। चिन्तन शिविर में अध्यक्ष श्री पारस जी डोसी सहित कई वक्ताओं ने विचार रखे।

जयपुर- राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर द्वारा मान्यता प्राप्त 'पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम' एवं 'पत्राचार अपभ्रंश सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम' की योजना निम्न प्रकार है-(1) प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम अवधि : 1 जनवरी 2009 से 31 दिसम्बर 2009 (2) अपभ्रंश सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम अवधि : 1 जनवरी 2009 से 31 दिसम्बर 2009। प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषा सीखने का इच्छुक कोई भी व्यक्ति इसमें प्रवेश ले सकता है। आवेदन-पत्र व नियमावली अकादमी कार्यालय से निःशुल्क 1 नवम्बर 2008 से प्राप्त किये जा सकते हैं। शुल्क-सहित आवेदन पत्र अकादमी कार्यालय में पहुँचने की अन्तिम तिथि 15 दिसम्बर 2008 होगी। **सम्पर्क-** निदेशक, अपभ्रंश साहित्य अकादमी, दिगम्बर जैन नसियाँ भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-302004। *-डॉ. कमलचन्द सोगाणी, निदेशक*

जयपुर- जैन विद्या संस्थान द्वारा संचालित पत्राचार जैनधर्म दर्शन एवं संस्कृति सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम-2009 में प्रवेश के इच्छुक व्यक्ति आवेदन-पत्र व नियमावली जयपुर कार्यालय से 1 नवम्बर 08 से निःशुल्क मंगवा सकते हैं। पाठ्यक्रम सत्र की अवधि 1 जनवरी 2009 से 31 दिसम्बर 2009 तक है। शुल्क सहित आवेदन-पत्र

कार्यालय में पहुँचने की अन्तिम तिथि 15 दिसम्बर 2008 होगी। सम्पर्क- निदेशक, जैन विद्या संस्थान, दिगम्बर जैन नसियाँ भट्टारक जी, सवाईरामसिंह रोड, जयपुर-302004। -*डॉ. कमलचन्द सोगाणी, निदेशक*

जयपुर- इन्डियन रेडिकल ह्यूमेनिस्ट एसोसिएशन, जयपुर द्वारा एम.एन.राय स्मृति अखिल भारतीय निबन्ध लेखन में कोई भी भारतीय नागरिक अंग्रेजी अथवा हिन्दी में लगभग 2500 शब्दों का निबन्ध 'लोकतांत्रिक जीवन शैली को सभी प्रकार के कट्टरवाद से खतरा' विषय पर लिखकर 30 नवम्बर 2008 तक डी-90 ए, कृष्णा मार्ग, बापू नगर, जयपुर-302015 पर भेज सकते हैं। लेखक अपना नाम, पिता या पति का नाम, आयु, व्यवसाय, पता-पिनकोड नम्बर, टेलीफोन नं., मोबाइल नं. अलग पर्ची पर लिखकर कॉपी से नत्थी करें। पुरस्कार 5000/-, 4000/-, 3000/-, 2000/-, 1000/- (दो), 500/-(बीस)हैं। 90 अंक लेख के एवं 10 अंक लेख के अन्त में संदर्भ सूची के होंगे।

बधाई/चुनाव

जोधपुर- कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ इन्दौर द्वारा प्रकाशित 'अर्हत् वचन' त्रैमासिक शोध पत्रिका में प्रकाशित आलेख ''जैन आगम-साहित्य में अहिंसा हेतु उपस्थापित युक्तियाँ'' पर प्रो. धर्मचन्द जैन, जोधपुर को 'अर्हत् वचन' तृतीय पुरस्कार-2007 से 18 अक्टूबर 2008 को सम्मानित किया गया है। यह पुरस्कार डॉ. अजित कुमार जैन-विदिशा एवं डॉ. राजमल जैन-अहमदाबाद को भी प्रदान किया गया है। कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ के मानद सचिव प्रो. अनुपम जैन को उपाध्याय ज्ञानसागर स्वर्ण जयंती पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

जोधपुर- किशोररत्न श्री वैभव गांग सुपुत्र श्री प्रदीप जी गांग का चयन क्रिकेट की यू-

16 टीम के अन्तर्गत हुआ है। उनका यह चयन जामनगर में 16 से 20 अक्टूबर 2008 तक आयोजित चौपनवें राष्ट्रीय विद्यालय चैम्पियनशिप के अन्तर्गत हुआ है। मात्र 14 वर्ष की वय में वैभव गांग ने राष्ट्रीय स्तर पर खेलने की योग्यता हासिल की है।

जोधपुर- सुश्री मिताली भण्डारी सुपुत्री श्रीमती प्रवीणा जी एवं श्री छतरचन्द जी

भण्डारी, सुपौत्री श्री सायरचन्द जी भण्डारी ने जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय बी.बी.सी.ए. सेमेस्टर की मेरिट में 76.97 प्रतिशत अंक अर्जित कर प्रथम स्थान प्राप्त किया। लाचू कॉलेज संचालन समिति ने सुश्री मिताली भण्डारी को पाँच हजार रुपये के प्रोत्साहन पुरस्कार के साथ स्वर्णपदक प्रदान किया।

श्रद्धाञ्जलि

मुम्बई- श्रीं पार्श्वचन्द्र जैन शासन प्रभाविका आर्या ऊँकार श्री जी म.सा. ने महामंत्र की आराधना करते-करते 6 अक्टूबर 2008 को नश्वर देह का त्याग किया। उनका 59 वर्षों का दीर्घ संयमी जीवन था।

नांगलराया (दिल्ली)- स्वाध्यायी सुश्रावक श्री सुरेशचन्द जी जैन का दिनांक 03 अक्टूबर 2008 को 58 वर्ष की उम्र में देहावसान हो गया। स्वाध्याय संघ, जोधपुर से कुछ वर्षों पूर्व ही जुड़ने वाले सुरेशचन्द जी संघ-सेवा में सक्रिय थे। वाणी की मधुरता और व्यवहार की कुशलता आपके विशेष गुण थे। आपने श्री एस.एस. जैन सभा, नांगलराया में विभिन्न पदों पर नियुक्त हो अपनी सेवाएँ प्रदान की थी। नांगलराया स्थानक निर्माण में आपकी विशेष भूमिका रही। अन्य कई सामाजिक संस्थाओं में भी आपका सक्रिय योगदान था। स्वाध्याय संघ द्वारा आयोजित विभिन्न शिविरों में आपने भाग लेकर ज्ञानार्जन किया था। पर्युषण के अतिरिक्त सेवा देने के लिए आप एक महीने के लिए अभी विजयवाड़ा पधारे थे। आपकी साहित्यिक रुचि भी थी एवं आप आध्यात्मिक लेख के साथ-साथ कविताएँ भी लिखते थे। आपकी रचनाएँ प्रतिष्ठित दैनिक नवभारत टाइम्स आदि कई पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी है। आप अपने पीछे भरा-पूरा संस्कारित परिवार छोड़कर गए हैं।

जोधपुर- अनन्य गुरुभक्त, संघसेवी, संघ समर्पित उदारमना सुश्रावक श्री सूरजराज

जी ओस्तवाल का 31 अक्टूबर 2008 को स्वर्गगमन हो गया। आचार्य हस्ती के उद्घोष सामायिक-स्वाध्याय को जीवन में आत्मसात् करते हुए आप तपाराधना में सतत संलग्न रहते थे। गुरु हस्ती-हीरा-मान के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। कर्मठता, धर्मनिष्ठा एवं सहिष्णुता जैसे गुणों से आपका जीवन ओतप्रोत था। आपने श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़ के अध्यक्षीय दायित्व का वर्षों तक पूर्ण निष्ठा के साथ निर्वहन किया। विद्यालय की उन्नत्ति को आपने सर्वोपरि लक्ष्य बनाया। अपने माता-पिता से विरासत में प्राप्त संस्कार की धारा को आपने अपने पुत्र रत्नों में भी संचारित किया। इसी का सुफल है कि आपके सुपुत्र श्री प्रसन्नचन्द जी ओस्तवाल अनेक धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं के साथ श्री जैन रत्न विद्यालय के अध्यक्ष पद का गुरुतर दायित्व बड़ी सूझ-बूझ एवं समर्पणता के साथ निभा रहे हैं। आपके सुपुत्र श्री पुणवानचन्द जी ओस्तवाल सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों में रुचि लेकर मुक्त हस्त से सहयोग करने हेतु तत्पर रहते हैं।

जोधपुर- सुश्रावक श्री जबरमल जी रांका का 24 अक्टूबर 2008 को देहावसान हो

गया। गुरु हस्ती-हीरा-मान के प्रति श्रद्धाशील रांका जी का जीवन धर्मनिष्ठ था। उनका अधिकांश समय धर्माराधन में व्यतीत होता था। घोड़ों का चौक स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन में आप विगत कई वर्षों से दया-संवर, प्रतिक्रमण-पौषध निरन्तर करते थे। आपकी सेवाभावना, सरलता एवं आत्मनिर्भरता का गुण प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय था। वे अपने पीछे सुपुत्र श्री महेन्द्र जी, सुभाष जी, नेमीचन्द जी, प्रकाश जी रांका का भरापूरा परिवार छोड़कर गए हैं।

मेड़ता सिटी- श्रद्धानिष्ठ सुश्राविका वीरमाता, श्रीमती गुटियाबाई जी धर्मपत्नी श्री

मुकनचन्द जी कांकरिया का 31 अक्टूबर 2008 को स्वर्गगमन हो गया। आपकी गुरुदेव हस्ती-हीरा-मान के प्रति तथा सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। सुश्राविका रत्न ने रात्रि-चौविहार त्याग, पर्व तिथियों पर हरी-सब्जी त्याग आदि अनेक नियम ले रखे थे। आप नित्य सामायिक एवं स्वाध्याय की साधना में रत रहकर अपने समय का सदुपयोग करती थीं। स्थानक में रहकर सामायिक-संवर आदि क्रियाएँ करना आपका प्राथमिक लक्ष्य था। आपकी सुपुत्री वर्तमान में रत्नसंघ में व्याख्यात्री महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. के रूप में गुर्वाज्ञा एवं आत्मकल्याण के पथ को आलोकित करती हुई जिनशासन की महती प्रभावना कर रही है। सुश्राविका गुटिया बाई का सम्पूर्ण परिवार रत्नसंघ के प्रति समर्पित है। भोपालगढ़, जोधपुर एवं मेड़ता तीनों स्थानों पर आपके पुत्ररत्न श्री पदमचन्द जी, महावीरचन्द जी, गौतम जी एवं अजीतराज जी कांकरिया धर्मध्यान, सामायिक-स्वाध्याय एवं संघ की सभी गतिविधियों से सक्रिय रूप से जुड़कर अपनी महती भूमिका निभा रहे हैं।

जोधपुर- सुश्राविका श्रीमती लाडकंवर जी सुराणा धर्मपत्नी स्व. श्री उम्मेदमल जी

सुराणा (एडवोकेट) का 25 अक्टूबर को स्वर्गवास हो गया। पारिवारिक सुसंस्कारों से संस्कारित सुश्राविका का जीवन धर्मनिष्ठा, मृदुता, सरलता, सहिष्णुता आदि अनेक गुणों से युक्त था। धर्माराधना एवं तपाराधना में आपकी अच्छी रुचि थी। संघ में आपके परिवार का योगदान अद्वितीय है। गुरुदेव हस्ती, हीरा एवं मान के प्रति उनकी प्रगाढ़ श्रद्धा-भक्ति थी।

राजनांदगांव- श्री दुलीचन्द जी पारख का 18 अक्टूबर 2008 को 71 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। उनकी अंतिम यात्रा में छत्तीसगढ़ प्रदेश के मुख्यमंत्री सहित

अनेक मंत्री, निगम अध्यक्ष, स्थानीय सामाजिक संस्थाओं के प्रमुख, छत्तीसगढ़ साधुमार्गी जैन संघ के पदाधिकारीगण, नागरिकगण एवं परिजन उपस्थित थे। विभिन्न संस्थाओं के पदाधिकारियों ने उनके निधन पर श्रद्धांजलि अर्पित की है। आप श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, राजनांदगांव के 25 वर्षों तक अध्यक्ष रहे।

जोधपुर- श्रद्धानिष्ठ-धर्मनिष्ठ सेवाभावी सुश्रावक श्री विजयमल जी कोचर मेहता सुपुत्र स्व. श्री पनराज जी कोचर मेहता का 5.10.08 को 92 वर्ष की आयु में दिल्ली में स्वर्गवास हो गया। सोजतसिटी मूल के निवासी ने जोधपुर एवं दिल्ली को कार्यक्षेत्र बनाया। आचार्यप्रवर श्री नानालाल जी म.सा. के प्रति आस्थावान श्रावकरत्न चारित्रवान संत-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में अग्रणी रहते थे। वे अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गए हैं।

जयपुर- रास (ब्यावर) मूल की श्राविकारत्न श्रीमती अलोलकंवर धर्मपत्नी श्री

पुखराज जी पदावत का 71 वर्ष की आयु में 5.10.08 को स्वर्गवास हो गया। आचार्यप्रवर श्री रामलाल जी म.सा. के प्रति आस्थावान श्राविकारत्न की गाँव में पधारने वाले संत-सतीवृन्द की सेवा में सदा तत्परता रही। वे भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं।

टापरानगर- दृढ़धर्मी सेवाभावी सुश्राविका श्रीमती जड़ावबाई संकलेचा का 75 वर्ष

की आयु में 13 अगस्त 2008 को स्वर्गवास हो गया। वे रत्नसंघीय दीक्षा समिति के सह-संयोजक श्री मीठालाल जी मधुर की बड़ी बहिन थीं। नित्यप्रति पाँच या पाँच से अधिक सामायिक करने वाली श्राविका का जीवन धर्ममय था।

जयपुर- विजयनगर मूल के निवासी धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री रणजीतसिंह जी पीपाड़ा का 73 वर्ष की आयु में 15 सितम्बर 2008 को आकस्मिक निधन हो गया। श्रावकरत्न की भावनानुसार मरणोपरान्त नेत्रदान का लाभ लिया गया।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

प्रचारकों की आवश्यकता

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर की गतिविधियों के प्रचार-प्रसार हेतु धार्मिक प्रचारकों की आवश्यकता है, जो १५ दिन जोधपुर कार्यालय में रहकर एवं १५ दिन बाहर क्षेत्रों में पधारकर प्रचार का कार्य कर सकें। अपनी योग्यता सहित लिखित आवेदन करें। *-संयोजक/सचिव, श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.) फोन- 0291-2624891*

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

2500/- मंडल से प्रकाशित सत्साहित्य के आजीवन-सदस्य

679 Shri Sidharth S. Karnawat ji, Mankurad, Mumbai (M.H.)

500/- रुपये जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

11711 Shri Ramesh Kumar ji Luniya, Pallipat, Tiyuvallur (T.N.)
11712 Shri M. C. Jain Ji, Sector 33-D, Chandigarh (Punjab)
11713 श्री महावीर जी जैन, वाकी रोड, जामनेर, जिला–जलगाँव (महाराष्ट्र)
11714 श्रीमती सुशीला आर. कवाड़ जी, अशोकवान हाइवे, दहिसर (ईस्ट), मुम्बई (महाराष्ट्र)
11715 Shri Vard. Sthanakwasi Jain Shrawak Sangh, Guwahati (Assam)
11716 Smt. Shakuntala Bai ji Bohra, Secundrabad (A.P.)
11717 Shri Mahavir Chand ji Gadia, Gujrati Gali, Hydrabad (A.P.)
11718 Shri Shanti Lal ji Singhvi, Tilak Nagar, Hyderabad (A.P.)
11719 Smt. Santosh ji Gundecha, Tilak Nagar, Hyderabad (A.P.)
11720 Shri Adesh Kumar ji Surana, Barkatpura, Hyderabad (A.P.)
11721 श्री पदमचन्द जी जैन, सूरजसदन, गुलाब बाड़ी, कोटा (राजस्थान)
11722 श्री केशरी मल जी पिछोलिया, अरविन्द नगर, सुन्दरवास, उदयपुर (राजस्थान)
11723 श्री शेषमल जी दागी, स्वास्तिक ऑइल इण्डस्ट्रिज, डूंगला,चित्तौड़गढ़ (राजस्थान)
11724 श्री प्रवीण जी जैन, नेपन्सी रोड, मुम्बई (महाराष्ट्र)
11725 श्री अनिल कुमार जी जैन, किशन नगर, डी-ब्लॉक, हिण्डौनसिटी, करौली (राजस्थान)
11726 श्री संजय कुमार जी जैन, आदर्श कॉलोनी, खाना वालों का खेत, हिण्डौनसिटी (राज.)
11728 श्री जितेन्द्र कुमार जी, फोर जेट हिल रोड, तारदेव, मुम्बई-400036 (महाराष्ट्र)
11729 Shri Prakash Chand ji Gandhi, Mysore (Karnataka)
11730 श्री मुकुल जी राजवंशी, ' भगत की कोठी विस्तार योजना, न्यू पाली रोड़, जोधपुर (राज.)
11731 Shri M. Kamal Kishore ji Kankaria, Chennai (Tamilnadu)
11732 श्री वीरदान जी पटवा, दफ्तरी सेठिया मौहल्ला, भीनासर, बीकानेर (राजस्थान)
11733 श्री चैनराज जी संचेती, गणेश चौक, मसूदा, अजमेर (राजस्थान)
11734 श्री नेमीचन्द जी सिंघवी, पाँचवीं बी रोड, सरदारपुरा, जोधपुर (राजस्थान)
11735 श्री पदमराज जी सुराणा, एस. एफ. एस. अग्रवाल फार्म, मानसरोवर, जयपुर (राजस्थान)
11736 Shri Amit Kumar ji Jain, Perambur, Chennai (Tamilnadu)
11737 श्री अशोक कुमार जी संघवी (एडवोकेट), लक्ष्मीबाई मार्ग, बदनावर, धार (मध्यप्रदेश)
11738 श्री निर्मल जी सांड, रेयजा टाउनशिप, सांईबाबा मंदिर के पास,मलाड(ईस्ट),मुम्बई (महा.)
11739 Shri Gyan Chand ji Jain, Vaniyar St., Chennai (Tamilnadu)
11740 श्री मयंक जी लूणावत, मालपा डोंगरी थर्ड, अन्धेरी (ईस्ट), मुम्बई (महाराष्ट्र)
11741 सौ.कां. सरला जी मंडलेचा, विक्रमनगर, ककवा (पश्चिम), ठाणे (महाराष्ट्र)
11742 श्रीमती प्रतिभा जी जैन, ठाकुर गंज, हरदोई रोड, लखनऊ (उत्तरप्रदेश)

11743 श्रीमती हर्षाली जी कांकरिया, गोदावरी हाईट, शंकर नगर, गंगापुर रोड, नाशिक (महाराष्ट्र)

श्री आर. पदमचन्द जी बाघमार, चेन्नई के सौजन्य से

11727 श्री घनश्याम जी जैन, मध्यम मार्ग, किरणपथ, मानसरोवर, जयपुर (राजस्थान)

11744 श्री दिनेश कुमार जी जैन, दादूदयाल कॉलोनी, मानसरोवर, जयपुर (राजस्थान)

जिनवाणी हेतु साभार

2500/- श्री धर्मेन्द्र कुमार जी जैन, जयपुर, पूज्य पिताजी श्री प्रेमचन्द जी जैन के 9 आयम्बिल ओलीव्रत एवं दीपावली पर उनके तथा पूज्य माताश्री श्रीमती कान्तामाला के द्वारा अठाई की तपस्या तथा श्रीमती अभिलाषा अजय जी हीरावत, मुम्बई एवं इतिश्री अरूण जी बम्ब, हांगकांग की अठाई की तपस्या और श्री अजय जी हीरावत एवं अरूण जी बम्ब द्वारा तेले की तपस्या के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

2100/- श्री नवीन्द्र जी मेहता पुत्र श्री कंवरराज सा-सुशीला जी मेहता, जोधपुर, दिल्ली में नवनिर्मित आवास में गृह-प्रवेश के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1111/- श्री गणपत जी, प्रकाश जी, पारस जी सुराणा, जोधपुर, पूजनीय माताजी श्रीमती लाडकंवर जी धर्मपत्नी स्व. श्री उम्मेदमल जी सुराणा (एडवोकेट) के दिनांक 25.10.08 को स्वर्गवास होने पर उनकी पावन स्मृति में भेंट।

1111/- श्री नवरतनमल जी एवं अजय जी डोसी, जोधपुर, शास्त्रीनगर (जोधपुर) में महासती इन्दुबाला जी म.सा. एवं मुदितप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा के प्रथम एवं उल्लेखनीय चातुर्मास के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1001/- श्रीमती अरूणा जी मेहता, दिल्ली, श्री गोविन्द जी, बसन्त जी, गजेन्द्र कुमार जी मेहता के पूज्य पिताजी व श्री अनिष जी, दीप जी मेहता के दादाजी श्री विजयमल जी कोचर मेहता का दिनांक 5.10.08 को स्वर्गगमन होने पर उनकी स्मृति में भेंट।

1000/- श्री प्रकाशचन्द जी, दिलीप कुमार जी लूणियाँ, चेन्नई पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा सन्त-सती वृन्द के सपरिवार मुम्बई में दर्शन लाभ के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1000/- श्री चन्दनमल जी, मनीष कुमार जी, चेतन कुमार जी रूणवाल, मैसूर सुपुत्र श्री मनीष कुमार जी एवं श्री चेतन कुमार जी रूणवाल की नौकरी लगने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1000/- श्री प्रकाशचन्द जी जैन-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, मण्डावर-महुआ रोड सप्रेम भेंट।

501/- श्री पशुपतिनाथ जी एवं श्रीमती लीला जी मोदी, जयपुर अपने पूज्य पिताश्री श्री फतेहनाथ जी एवं मातुश्री श्रीमती मिलापकँवर जी मोदी की पुण्य स्मृति में भेंट।

501/- श्री प्रकाशचन्द जी, फतेहराज जी चोरड़िया, चेटपेट, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के मुखारविन्द से श्री विमलचन्द जी एवं सौ.कां. मंजूबाई जी द्वारा समकित लेने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

501/- श्री अजय जी एवं श्रीमती आरती जी जैन, हिण्डौनसिटी पूज्य पिताश्री श्री सुरेश जी जैन एवं माता श्री श्रीमती सुशीला जैन द्वारा विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी

म.सा. के मुखारविन्द से आजीवन शीलव्रत के प्रत्याख्यान लेने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

501/- श्री अनिल कुमार जी तलेरा, मन्दसौर, पूज्य आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के 46वें दीक्षा-दिवस के अवसर पर पूज्य संत-सतीवृन्द के दर्शन-वन्दन करने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्री गणपतराज जी रांका, चेन्नई चि. प्रवीण कुमार जी रांका का समस्त भारत में प्रथम प्रयास में सी.ए. में 47वीं रेंक व सी.एस. में 15वीं रेंक आने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्रीमती प्रवीण जी धर्मपत्नी श्री सुमतकुमार जी जैन, साडूरा (हरियाणा) पर्युषण पर्व के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्री श्रेणिक जी, राजेश जी, सुरेश जी, संजय जी, चोरड़िया, चेन्नई पूज्य माता-पिता श्री बस्तीमल जी एवं सौ.कां. सायरदेवी जी चोरड़िया पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा एवं उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा सन्त-सती मंडल के दर्शन लाभ होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

500/- श्री प्यारचन्द जी रांका, भीलवाड़ा, पूज्य आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के 46वें दीक्षा-दिवस के अवसर पर पूज्य संत-सतीवृन्द के दर्शन-वन्दन करने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

जीवदया हेतु साभार

3100/- श्री राजेन्द्र कुमार जी, महावीरचन्द जी, सिद्धार्थ जी, गौरव जी, अभिनन्दन जी, जिनेन्द्र जी बाफणा, जलगाँव आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के परम भक्त गोटन निवासी स्व. श्री नेमीचन्द जी स्व. श्रीमती सुन्दरबाई जी बाफणा की पुत्रवधू सौ.कां. श्रीमती विजयलक्ष्मी जी धर्मपत्नी श्री महावीरचन्द जी बाफणा के 31 उपवास (मासखमण) की तपस्या सानन्द सम्पन्न होने खुशी में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री अक्षय सिंह जी, महावीर प्रसाद जी, राजेन्द्र कुमार जी, मोहित जी ढ़ाबरिया, जयपुर, श्रीमती प्रेमकुमारी धर्मपत्नी श्री अक्षय जी ढ़ाबरिया का दिनांक 18 सितम्बर 2008 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में भेंट।

1100/- मैसर्स बोथरा वस्त्र भंडार, मुल्ताई-बैतूल से, सप्रेम भेंट।

1000/- श्री प्रकाशचन्द जी जैन-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ मंडावर-महुआ रोड से भेंट।

501/- श्री भंवरलाल जी श्रीमती कमलादेवी जी डोसी, हैदराबाद से सप्रेम भेंट।

501/- श्री गणपत जी, प्रकाश जी, पारस जी सुराणा, जोधपुर, पूजनीय माताजी श्रीमती लाडकंवर जी धर्मपत्नी स्व. श्री उम्मेदमल जी सुराणा (एडवोकेट) के दिनांक 25.10.08 को स्वर्गवास होने पर उनकी पावन स्मृति में भेंट।

500/- श्रीमती संगीता जी नन्दिता जी मोहनोत, जोधपुर श्रीमती नलिनी जी मेहता धर्मपत्नी श्री नरपतचन्द जी मेहता की पुण्य स्मृति में भेंट।

500/- श्री श्रेणिक जी, राजेश जी, सुरेश जी, संजय जी चोरड़िया-चेन्नई, पूज्य माता-पिता श्री बस्तीमल जी एवं सौ.कां. सायरदेवी जी चोरड़िया द्वारा पूज्य आचार्य भगवन्त श्री

हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा एवं उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा सन्त-सती मंडल के दर्शन लाभ होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

500/- श्री सुरेशचन्द जी खिंवसरा, चेन्नई।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर को प्राप्त साभार सहयोग

1100/- श्री राजेन्द्र जी जैन, हौसूर।
1100/- श्री नवरतनमल जी दुग्गड़, हौसूर।
2300/- श्री एस.एस. जैन संघ, उलुन्दुरपेठ, जीवदया हेतु।
2100/- श्री एस.एस. जैन संघ, जयकोण्डम, जीवदया हेतु।
2100/- श्री एस.एस. जैन संघ, विरदाचलम, जीवदया हेतु।
1111/- श्री एस.एस. जैन संघ, वालाजाबाद, जीवदया हेतु।

पर्युषण सहायतार्थ

8600/-	आलन्दुर	8100/-	पल्लीपट्ट	5100/-	आरकाट
5100/-	चिन्तादरी पेठ	5100/-	मिरसाहिबपेठ	5100/-	एम.सी. रोड
5001/-	कडलूर	3300/-	तिरूतनी	3101/-	विल्लीवाक्कम
3100/-	न्यू वाशरमेन पेठ	3100/-	ताम्बरम	3100/-	हौसूर
3100/-	नुगम्बाकम	3100/-	श्री कालाहस्ती	3100/-	ईरोड
3001/-	कडलूर	2500/-	चिकबालापुर	2100/-	फतेहाबाद
2100/-	आवड़ी	2100/-	पैरंगलतुर	2100/-	कालाडीपेठ
2100/-	अयनावरम	2100/-	चिदम्बरम	2100/-	विरदाचलम
2100/-	सैदापेठ	2000/-	गुडवान्चेरी	2000/-	बलरामपुर
1501/-	उत्तरामैयुर	1501/-	जयकोण्डम	1111/-	वालाजाबाद
1105/-	उलन्दुरपेठ	1100/-	पेरम्बाकम	1100/-	हौसूर
1100/-	नेलिकुप्पम	1100/-	सेल्युर	1000/-	बेरछा
521/-	संजीत				

महाराष्ट्र जैन स्वाध्याय संघ को प्राप्त पर्युषण सहायता

500/- नागद

आगामी पर्व

मार्गशीर्ष कृष्णा ८	गुरुवार, २०.११.२००८	अष्टमी
मार्गशीर्ष कृष्णा १४	बुधवार, २६.११.२००८	चतुर्दशी
मार्गशीर्ष कृष्णा ३०	गुरुवार, २७.११.२००८	पक्खी
मार्गशीर्ष शुक्ला ८	शनिवार, ०६.१२.२००८	अष्टमी
मार्गशीर्ष शुक्ला १४	गुरुवार, ११.१२.२००८	चतुर्दशी
मार्गशीर्ष शुक्ला १५	शुक्रवार, १२.१२.२००८	पक्खी

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

कर्म निर्जरा का प्रबल साधन।
स्वास्थ्य वर्धक है पानी धोवन।।

With Best Compliments From :

SURANA
INDUSTRIES LIMITED

Manufacturers & Exporters of

Symbolises the Aspiration of Discerning Steel Buyers !

Premium Quality Steels, viz., HSD/CTD Bars, MS Rounds Structurals Like Flats, Channels Angles and Squares

Always Use SURANA STEELS to
Highlight your House/Industry

Regd. Cum Corporate Head Office
29, Whites Road, II Floor Royapettah, Chennai-600 014
Grams : **GURUHASTI**
Phone : 28525127 (3 Lines) Fax : 044 28521143
E-mail : suranast@vsnl.com
Website : www.suranaind.com

Works

F-67, 68 & 69 SIPCOT Industrial Complex
Gummidipoondi 601 201, Tiruvallur Dist. Tamilnadu
Ph.: 954119 222881 Telefax : 954119222880

Sales Yard

30, G.N.T. Road, Madhavaram, Chennai 600 110
Ph.: 25375531/32/33 Fax : 044 25375400

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

With Best Compliments From :

पारसमल सुरेशचन्द कोठारी

प्रतिष्ठान

KOTHARI FINANCERS

27, Chandrappan Street
Chennai-600079 (T.N.) • Ph.# 42738436, 25298130

Branches :

Bhagawan Motors
Chennai-53, Ph.# 26251960

❖❖❖

Bhagawan Cars
Chennai-53, Ph.# 26243455/66

❖❖❖

Balaji Motors
Chennai-50, Ph.#26247077

❖❖❖

Padmavati Motors
Jafar Kan Peth, Chennai, Ph.#24854526

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

प्यास बुझाये,
कर्म कटाये,
फिर क्यों न अपनायें
– धोवन पानी

Prithvi Exchange
A DIVISION OF PRITHVI SOFTECH LIMITED
33, Montieth Road, Egmore, Chennai-600008
Phone : 044-28553185, 42145478, 09381041097

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

A GLASS OF WATER WILL MAKE
YOUR KARMA QUARTER
- धोवन पानी -

GURU HASTI GOLD PALACE
(Govt. Authorised Jewellers) (916. KDM)
22 Ct. Gold ! 24 Ct. Trust !

&

P. MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD
No. 4, 5 Car Street, Poonamallee, CHENNAI-600056
Hello-Hello
044-26272609, 55666555, 26272906, 55689588

अनछाना पानी-BAD।BAD॥
बिस्लरी पानी-OK।OK॥
छाना हुआ पानी-GOOD।GOOD॥
धोवन पानी-BEST।BEST॥

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

सहजता में धर्म का आधार।
धोवन पानी प्रथम आचार।।

Narendra Hirawat & Co.

Flat No. 1, Building No. 2, Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg, Matunga (West), MUMBAI-400016
Trin-Trin

Matunga Office : 022-24370713, 24380713, 66669707
Opera House Office : 022-30034282, 23669818
Mobile : 098210-40899

रत्नसंघ की विभिन्न संस्थाओं के प्रमुख पदाधिकारी

१.	**संयोजक-संरक्षक मण्डल**	022-30645000/23648004
	श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई	09820072724
२.	**संयोजक-शासन सेवा समिति**	
	श्रीमान् रतनलाल सी. बाफना, जलगाँव	0257-2225903/09823076551
३.	**गजेन्द्र निधि/गजेन्द्र फाउण्डेशन**	
	अध्यक्ष-श्रीमान् नवरतन जी कोठारी, मुम्बई	022-23673939/23698880
४.	**अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर**	**0291-2636763**
	अध्यक्ष-श्रीमान् सुमेरसिंह जी बोथरा, जयपुर	0141-2620571 09414048830/09314048830
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् ज्ञानेन्द्र जी बाफना, जोधपुर	0291-2434355/09414093147
	महामंत्री-श्रीमान् नवरतन जी डागा, जोधपुर	0291-2654427/09828032215
५.	**सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर**	**0141-2575997, 2570753**
	अध्यक्ष-श्रीमान् पी. शिखरमल जी सुराणा, चेन्नई	044-25380387/25391597 09884430000
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् नवरतन जी भंसाली, बैंगलोर	080-22265957/09844158943
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् आनन्द जी चौपड़ा, जयपुर	0141-3233318/09414090931
	मंत्री- श्रीमान् प्रेमचन्द जी जैन, जयपुर	0141-2212982/09413453774
६.	**अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जोधपुर**	**0291-2636763**
	अध्यक्ष-श्रीमती (डॉ.) मंजुला जी बम्ब, जयपुर	0141-2362692/09314292229
	कार्याध्यक्ष-श्रीमती मधु जी सुराणा, चेन्नई	044-25293001/42765646
	मंत्री-श्रीमती आशा जी गांग, जोधपुर	0291-2544124/9314044124
७.	**अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर**	**0291-2641445**
	अध्यक्ष-श्रीमान् कुशल जी गोटेवाला, सवाईमाधोपुर	07462-233550/09460441570
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् प्रमोद जी हीरावत, जयपुर	0141-2742665/09314507303
	कार्याध्यक्ष-श्रीमान् बुधमल जी बोहरा, चेन्नई	044-26425093/09444235065
	महासचिव-श्रीमान् महेन्द्र जी सुराणा, जोधपुर	0291-2546501/09414921164
८.	**श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर**	**0291-2624891**
	संयोजक-श्रीमान् चंचलमल जी चोरडिया, जोधपुर	0291-2621454/09414134606
	सचिव-श्रीमती मोहनकौर जी जैन, जोधपुर	0291-3296033/09351590014
९.	**अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर**	**0291-2630490**
	संयोजक-श्रीमती सुशीला जी बोहरा, जोधपुर	0291-5108799/09414133879
	सचिव-श्रीमान् राजेश जी कर्णावट, जोधपुर	0291-2549925/09414128925
१०.	**अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर**	**0291-2622623**
	संयोजक-श्रीमती विमला जी मेहता, जोधपुर	0291-2435637/09351421637
	सचिव-श्रीमान् सुभाष जी हुण्डीवाल, जोधपुर	0291-2555230/09460551096

JAI GURU HASTI JAI GURU HEERA JAI GURU MAAN

NO PAIN - ONLY GAIN – पियें धोवन पानी

With best compliments from :

SOHANLAL UMEDRAJ SURENDER HUNDIWAL

S.UMEDRAJ JAIN (HUNDIWAL)
098407 18382
2027 'H' BLOCK 4th STREET,12TH MAIN ROAD,
ANNA NAGAR, CHENNAI-600040
044-32550532

BRANCHES

APPOLO BRIGHT STEELS PVT LTD.
S.P.59, 3 rd MAINROAD
AMBATTUR ESTATE CHENNAI-600058
044-26258734, 9840716053, 98407 16056
FAX: 044-26257269
E-MAIL: appolobright@yahoo.com

APPOLO CORRUGATORS PVT LTD.
NO.400 NORTH PHASE, SIDCO INDUSTRIAL ESTATE,
AMBATTUR CHENNAI-60098
FAX: 044-26253903, 9840716054
E-MAIL:appolocorrugators@yahoo.com

SAPNA PACKAGING INDUSTRIES
NO.410 NORTH PHASE INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR, CHENNAI-600098
044-26241041

PENINSULAR PACKAGINGS
NO.25 SIDCO INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR CHENNAI-600098
044-26250564

आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-018/2006-08
वर्ष : 65 ★ अंक : 11 ★ मूल्य : 10 रु.
15 नवम्बर 2008 ★ मार्गशीर्ष सं. 2065

धोवन पानी - निर्दोष जिन्दगानी

KALPATARU
RIVERSIDE
Old Mumbai - Pune highway, Panvel

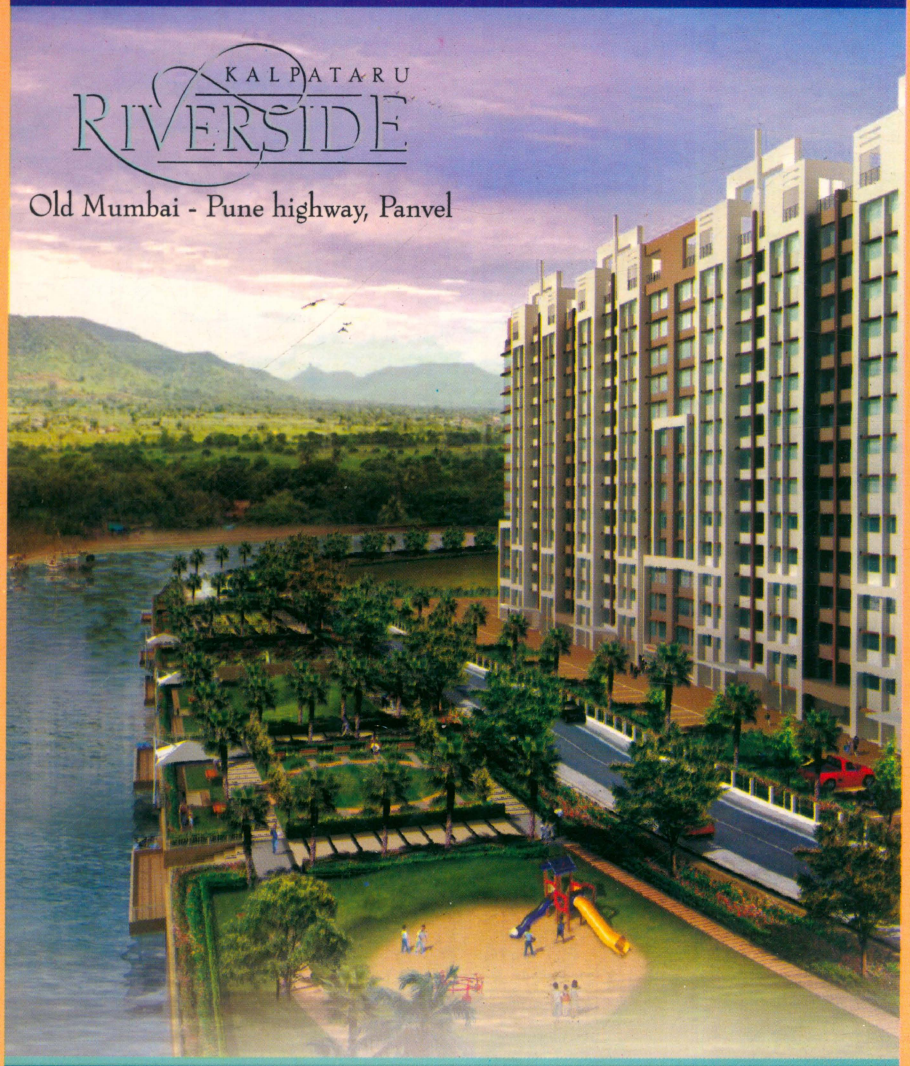

KALPA-TARU
101, Kalpataru Synergy, Opp. Grand Hyatt, Santacruz (East),
Mumbai - 400 055. ● Tel.: 3064 3065, 98339 45470 ● Fax: 3064 3131
Website: www.kalpataru.com

स्वामी-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिये मुद्रक संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशक प्रेमचन्द जैन, बापू बाजार, जयपुर से प्रकाशित। सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन।